



॥ सरस्वती नः सुभगा मयस्करत् ॥

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त  
विश्वविद्यालय, प्रयागराज

# MSW-109

## समाज कल्याण प्रशासन

### खण्ड 1. समाज कल्याण प्रशासन

01-64

|        |                                            |       |
|--------|--------------------------------------------|-------|
| इकाई 1 | समाज कार्य प्रशासन: अर्थ सिद्धांत और कार्य | 03—18 |
| इकाई 2 | संगठन नीति निर्माण और योजना                | 19—38 |
| इकाई 3 | निर्णय निर्माण संचार                       | 39—50 |
| इकाई 4 | वित्तीय प्रशासन निगरानी और मूल्यांकन       | 51—64 |

### खंड 2. मानव अधिकार और सामाजिक न्याय 65-140

|        |                                           |         |
|--------|-------------------------------------------|---------|
| इकाई-5 | मानव अधिकारों और सामाजिक न्याय की अवधारणा | 69—84   |
| इकाई-6 | मौलिक अधिकार और भारतीय संविधान            | 85—108  |
| इकाई-7 | राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांत           | 109—126 |
| इकाई-8 | सामाजिक न्याय सरोकार और समाज कल्याण       | 127—140 |

### खण्ड -3 सामाजिक विधान

141-247

|         |                                 |         |
|---------|---------------------------------|---------|
| इकाई- 9 | मानव अधिकार और कल्याण का अधिकार | 145—160 |
| इकाई-10 | मानव अधिकार और कल्याण का अधिकार | 161—178 |
| इकाई-11 | सामाजिक विधान एवं मलिन बस्तियां | 179—194 |
| इकाई-12 | पर्यावरण संरक्षण                | 195—208 |
| इकाई-13 | उपभोक्ता संरक्षण                | 209—226 |
| इकाई-14 | असंगठित श्रमिक                  | 227—247 |

# MSW-109 समाज कल्याण प्रशासन

## संरक्षण एवं मार्गदर्शक

कुलपति

—प्रो0 सीमा सिंह,माननीय कुलपति, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,प्रयागराज

## विशेषज्ञ समिति

1.प्रो. सन्तोषा कुमार

निदेशक, समाज विज्ञान विद्याशाखा,

उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज —अध्यक्ष

2.प्रो. अनूप भारतीय,

समाज कार्य विभाग लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ —सदस्य

3.डॉ. सन्दीप गिरी,

समाज कार्य विभाग. महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी —सदस्य

4.डॉ. रोहित मिश्रा,

समाज कार्य विभाग विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय,लखनऊ —सदस्य

5.डॉ. रूपेश सिंह,

डॉ. शकुन्तला मिश्रा विकलांग विश्वविद्यालय, लखनऊ —सदस्य

6.डॉ. अलका वर्मा,

असिस्टेंट प्रोफेसर, समाज कार्य, उ.प्र.रा.ट. मुक्त —सचिव

विश्वविद्यालय, प्रयागराज

## परिभाषक

प्रो0 विवेक सिंह,

समाज कार्य विभाग, प्रो0 राजेन्द्र सिंह (रज्जू भय्या) विश्वविद्यालय, प्रयागराज

## सम्पादक

प्रो0 विवेक सिंह,

समाज कार्य विभाग, प्रो0 राजेन्द्र सिंह (रज्जू भय्या) विश्वविद्यालय, प्रयागराज

## समन्वयक

डॉ. अलका वर्मा, असिस्टेंट प्रोफेसर, समाज कार्य, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

## लेखक —

खण्ड 1 श्री मनीष सिंह,

असिस्टेंट प्रोफेसर, समाज कार्य

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

खण्ड 2 डॉ0 गीतांजलि श्रीवास्तव,

असिस्टेंट प्रोफेसर,

प्रो0 राजेन्द्र सिंह (रज्जू भय्या) विश्वविद्यालय, प्रयागराज

खण्ड 3 डॉ0कविता गौतम

असिस्टेंट प्रोफेसर समाज कार्य

प्रो0 राजेन्द्र सिंह (रज्जू भय्या) विश्वविद्यालय, प्रयागराज

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

**ISBN No. - 978-81-19530-81-6**

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस सामग्री के किसी भी अंश को उप्र राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में मिनियोग्राफी (वक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

**नोट :** पाठ्य सामग्री में मुद्रित सामग्री के विचारों एवं आकड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय, उत्तरदायी नहीं हैं।

प्रस्तुत पाठ्य सामग्री में विषय से सम्बन्धित सभी तथ्य एवं विचार मौलिक रूप से लेखक के द्वारा स्वयं उपलब्ध कराई गई है। विश्वविद्यालय, इस सामग्री के सम्बन्ध में किसी भी प्रकार से उत्तरदायी नहीं है।

**प्रकाशन—**विनय कुमार, कुलसचिव, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज, 2024।

**मुद्रक—**सिग्नस इन्फार्मेशन सल्यूशन प्रा0लि0, लोढ़ा सुप्रिमस साकी विहार रोड, अन्धेरी ईस्ट, मुम्बई



उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त  
विश्वविद्यालय, प्रयागराज

# MSW-109

## समाज कल्याण प्रशासन

### खण्ड 1.

#### समाज कल्याण प्रशासन

- इकाई 1 समाज कार्य प्रशासन: अर्थ सिद्धांत और कार्य
- इकाई 2 संगठन नीति निर्माण और योजना
- इकाई 3 निर्णय निर्माण संचार
- इकाई 4 वित्तीय प्रशासन निगरानी और मूल्यांकन

## **खण्ड 1. समाज कल्याण प्रसाशन**

---

### **खण्ड का परिचय:**

इस पाठ्यक्रम के प्रथम खण्ड में समाज कल्याण प्रसाशन के विषय क्षेत्रों पर विस्तार से चर्चा की गई है, इसमें चार इकाइयाँ रखी गई हैं । प्रथम इकाई में समाज कार्य प्रसाशन के अर्थ, सिद्धांतों और कार्यों पर प्रकाश डाला गया है । द्वितीय इकाई में संगठन,निति निर्माण और योजनाओं पर चर्चा की गई है । तीसरी इकाई का शीर्षक निर्णय निर्माण और संचार है। चतुर्थ इकाई का शीर्षक वित्तीय प्रसाशन,निगरानी और मूल्यांकन है, इस इकाई में इन पर प्रकाश डाला गया है ।



# इकाई 1 समाज कार्य प्रशासन: अर्थ सिद्धांत और कार्य

---

## इकाई की रूपरेखा

- 1.0 उद्देश्य
- 1.1 प्रस्तावना
- 1.2 समाज कार्य प्रशासन का अर्थ और परिभाषा
- 1.3 समाज कार्य प्रशासन के सिद्धांत
- 1.4 समाज कार्य प्रशासक के कार्य
- 1.5 सारांश
- 1.6 पारिभाषिक शब्दावली
- 1.7 संदर्भित पुस्तकें
- 1.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

---

## 1.0 उद्देश्य

---

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप सक्षम होंगे:

- समाज कार्य प्रशासन के अर्थ और परिभाषा पर चर्चा करने में ।
- समाज कार्य प्रशासन के सिद्धांत की व्याख्या करने में ।
- समाज कार्य प्रशासन के कार्यों का वर्णन करने में ।

---

## 2.1 प्रस्तावना

---

सामाजिक कार्य प्रशासन वैधानिक और स्वैच्छिक दोनों तरह की विभिन्न सामाजिक सेवाओं का अध्ययन और प्रबंधन है । जो मान्यता प्राप्त सामाजिक समस्याओं समाधान में योगदान देने के उद्देश्य से परिवार, समूह और सामुदायिक संबंधों की स्थापना में व्यक्तियों को उपलब्ध कराया जाता है। ताकि व्यक्तियों, समूहों और समुदायों की भलाई में सुधार हो सके। इस प्रकार, समाज कार्य प्रशासन एक सहकारी और समन्वित प्रयास है। जिसमें संगठन के सभी सदस्य शामिल होते हैं, जिनमें से प्रत्येक लक्ष्य निर्माण, योजना, कार्यान्वयन,

परिवर्तन और मूल्यांकन की प्रक्रियाओं में विभिन्न तरीकों से योगदान देता है। समाज कार्य प्रशासन ने समाज कल्याण संगठनों या सामाजिक कल्याण के लिए कार्य करने वाली परियोजना पर प्रशासनिक अनुप्रयोगों पर ज्ञान प्रदान किया जो एक संगठन के समान है। पेशेवर प्रवीणता के लिए एक सामाजिक कार्यकर्ता "समाज कार्य" में प्रशासनिक अनुप्रयोग के मूल्य और आवश्यकता को समझता है।

## 1.2 समाज कार्य प्रशासन का अर्थ

समाज कार्य प्रशासन समाज कार्य के लिए केवल प्रशासनिक सिद्धांतों का अनुप्रयोग है, जो परियोजना प्रशासन में प्रवीणता, प्रभावशीलता और लक्ष्य उपलब्धि का निर्माण करता है। परियोजना छोटी या लंबी हो सकती है लेकिन किसी संगठन को चलाने के लिए प्रशासनिक सिद्धांतों की अत्यधिक आवश्यकता होती है। एकल पंक्तियों में "प्रशासन उद्देश्यों को परिभाषित करने और कार्यक्रमों की योजना बनाने, संसाधनों को जुटाने और बनाए रखने, और परिणामों का मूल्यांकन करने के ऐसे कार्यों के लिए ज्ञान, कौशल और मूल्यों के उद्देश्यपूर्ण अनुप्रयोग को दर्शाता है"। प्रशासन का शब्दकोश अर्थ मामलों का प्रबंधन है। इस प्रकार, सेवा का प्रबंधन या प्रत्यक्ष करने के लिए प्रशासन का अर्थ। हालांकि, आबादी के जरूरतमंद वर्गों को सामाजिक सेवाएं प्रदान करने के लिए, न केवल भक्ति और समर्पण बल्कि विधि, संगठन, प्रशासनिक दक्षता और बजट, लेखा, जनसंपर्क आदि का पर्याप्त ज्ञान आवश्यक है। सार्वजनिक धन का खर्च शामिल है। जवाबदेही। प्रभावी प्रशासन के माध्यम से सरकारी अधिकारी और स्वैच्छिक कार्यकर्ता दोनों को इसे समझना होगा। इस पत्र में समाज कार्य के एक छात्र ने सैद्धान्तिक ज्ञान प्राप्त किया कि एक संगठन को कैसे चलाना है और साथ ही विभिन्न संगठनों के प्रशासनिक ढांचे और कार्यों का अवलोकन कैसे करना है।

### 1.2.1 समाज कार्य प्रशासन की परिभाषाएँ

1. **बीवर्स (1950):** प्रशासन "साधनों की प्रक्रियाओं के रूप में जिसके द्वारा किसी संगठन के लक्ष्य निर्धारित किए जाते हैं, इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए बनाई गई योजनाएं और कार्यान्वित की जाती हैं"।

2. **टीड (1939):** "प्रशासन एक एजेंसी में निर्देशन, निरीक्षण, समन्वय और उत्तेजना की प्रक्रिया है, जिसे नियोजित साधनों (सामग्री और कर्मियों) में अर्थव्यवस्था और प्रभावशीलता के साथ कुछ सहमत उद्देश्य को पूरा करने के लिए डिज़ाइन किया गया है और इसके लिए सभी संभव संबंध हैं। शामिल व्यक्तियों के दावे "।
3. **तेंदुआ माया (1945):** प्रशासन को "कार्य के निर्धारण और स्पष्टीकरण के रूप में परिभाषित किया जा सकता है; नीतियों और प्रक्रियाओं का निर्माण; प्राधिकरण का प्रतिनिधिमंडल; चयन, पर्यवेक्षण और अंत तक उपयुक्त संसाधन ताकि एजेंसी के उद्देश्यों को पूरा किया जा सके "।
4. **अर्लियन जॉनसन (1947):** प्रशासन "एक प्रक्रिया और पद्धति के रूप में जिसके द्वारा कार्यक्रम के उद्देश्यों को एक संरचना और संचालन के माध्यम से वास्तविकता में बदल दिया जाता है जो परिभाषित उद्देश्यों की ओर आंदोलन में लोगों के समन्वित और एकीकृत कार्य को संभव बनाता है" .
5. **किडनी (1950):** प्रशासन "सामाजिक नीति को सामाजिक सेवाओं में बदलने की प्रक्रिया के रूप में एक दो तरफा प्रक्रिया (1) नीति को ठोस सामाजिक सेवाओं में बदलने और (2) नीति के संशोधन की सिफारिश करने में अनुभव का उपयोग"।
6. **स्पेंसर (1950):** "प्रशासन लक्ष्यों की प्राप्ति की दिशा में आंतरिक संबंधों और उद्यम की गतिविधियों की सचेत दिशा है"। वह यह भी रेखांकित करती हैं कि इसमें "एजेंसी और बड़े समुदाय के बीच काम करने वाली बातचीत बलों में सचेत हस्तक्षेप शामिल है, जिसका यह एक हिस्सा है"।
7. **फ्रीडलैंडर (1955):** "सामाजिक एजेंसियों का प्रशासन सामाजिक कानून के प्रावधानों और निजी परोपकार और धार्मिक दान के उद्देश्यों को मानवता की सेवाओं और लाभों की गतिशीलता में अनुवादित करता है"।
8. **डनहम (1962):** "प्रशासन" उन गतिविधियों को समर्थन देने या

सुगम बनाने की प्रक्रिया के रूप में जो एक सामाजिक संगठन द्वारा प्रत्यक्ष सेवा देने के लिए आवश्यक और प्रासंगिक हैं। प्रशासनिक गतिविधियाँ कार्य के निर्धारण से लेकर होती हैं और नीतियां, और नियमित संचालन के लिए कार्यकारी नेतृत्व जैसे कि रिकॉर्ड और खाते रखना और रख रखाव सेवाओं को चलाना "।

9. **स्टीन (1970):** प्रशासन "समन्वित और सहकारी प्रयास की प्रणाली के माध्यम से एक संगठन के उद्देश्यों को परिभाषित करने और प्राप्त करने की प्रक्रिया के रूप में"।

सामाजिक कार्य प्रशासन के बारे में बिंदु:

1. प्रशासन एक गतिशील प्रक्रिया है जो लक्ष्य तक पहुँचने की अपनी निरंतरता बनाए रखता है।
2. सामान्य उद्देश्य या लक्ष्य को पूरा करने के लिए प्रशासनिक प्रक्रिया चलती रहती है।
3. नियोजन, आयोजन, नेतृत्व, निर्णय लेना, अधिकार और संचार प्रशासनिक प्रक्रिया के आवश्यक तत्व हैं।

अन्य संगठनों में, उद्देश्य भिन्न होंगे लेकिन समाज कार्य प्रशासन में उद्देश्य हमेशा समग्र रूप से लोगों का विकास होता है

---

### 1.3 समाज कार्य प्रशासन के सिद्धांत

---

कुल मिलाकर समाज कार्य दो मुख्य अवधारणाओं पर केंद्रित है:

- (i) समाज कार्य एक है प्रतिक्रिया जो सामाजिक समस्याओं को दूर करने के लिए सतह पर आती है,
- (ii) समाज कार्य को इन समस्याओं से निपटने के तरीकों को वर्गीकृत किया जा सकता है।

समाज कार्य प्रशासन के सिद्धांत निम्नलिखित हैं:

1. **स्वीकृति:** समूह या टीम के नेताओं को सामूहिक रूप से काम

करना चाहिए और लेना चाहिए उचित कार्रवाई। मकसद सुरक्षा की बुनियादी भावना को बढ़ावा देना है कर्मचारी।

2. **सहभागिता:** इस सिद्धांत के अनुसार सदस्यों को एक साथ आना चाहिए

नीतियों और प्रक्रियाओं में भाग लेने के लिए।

3. **संचार:** लक्ष्य और उद्देश्य सभी को बताए जाने चाहिए एक समूह या संगठन के सदस्य। सत्यनिष्ठा और ईमानदारी एक अभिन्न अंग है हर समाज कल्याण संगठन के।

4. **नेतृत्व:** प्रशासकों पर टीम का नेतृत्व करने की जिम्मेदारी होती है, लक्ष्यों और उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए समूह या संगठन।

5. **योजना:** विकास की प्रक्रिया के लिए केंद्रीय है। सुनिश्चित करने के लिए महत्वपूर्ण है उद्देश्यों को पूरा करने वाली सेवाओं को सार्थक समझा जाता है।

निम्नलिखित सिद्धांतों का एक व्यापक दृष्टिकोण है जो गठित किया गया है

**ट्रेकर द्वारा:**

A. **सामाजिक कार्य मूल्य का सिद्धांत:** ये उन मूल्यों को संदर्भित करते हैं जिनके पास है एक संस्था द्वारा स्थापित किया गया है।

B. **समुदाय और व्यक्तिगत आवश्यकताओं का सिद्धांत:** व्यक्तिगत और सामुदायिक आवश्यकताओं ने सामाजिक एजेंसियों को जन्म दिया है।

C. **एजेंसी के उद्देश्यों का सिद्धांत:** ये सामाजिक उद्देश्य को संदर्भित करते हैं

एजेंसी का जिसे स्पष्टता के साथ मसौदा तैयार किया जाना चाहिए।

D. **सांस्कृतिक संदर्भ का सिद्धांत:** उचित सामाजिक उत्पन्न करने के लिए सेवाओं, व्यक्तिगत और सामाजिक आवश्यकताओं को उचित

रूप से समझा जाना चाहिए इसकी विशिष्ट संस्कृति के संदर्भ में।

- E. एक कार्यात्मक व्यावसायिक संबंध का सिद्धांत:** ये संदर्भित करते हैं बोर्ड, प्रशासक के बीच मौजूद संबंध की प्रकृति के लिए, कर्मचारी और निर्वाचन क्षेत्र।
- F. संपूर्णता का सिद्धांत:** ये उन तरीकों को संदर्भित करते हैं जिनमें संगठन, एजेंसियों और अन्य निकायों को इसकी समग्रता में देखा जाना चाहिए।
- G. व्यावसायिकता का सिद्धांत:** ये उन तरीकों को संदर्भित करते हैं जिनमें  
व्यावसायिकता के उच्च मानकों को सुनिश्चित करने के लिए प्रशासक जिम्मेदार हैं।
- H. भागीदारी का सिद्धांत:** ये पेशकश की गई उपयुक्त सहायता को संदर्भित करते हैं बोर्ड के सदस्यों, कर्मचारियों और अन्य निर्वाचन क्षेत्रों द्वारा।
- I. प्रबंध का सिद्धांत:** ये उस कार्य को संदर्भित करते हैं जो प्रशासक करता है प्रक्रियाओं में दक्षता सुनिश्चित करने के लिए। ये इस तरह से संरचित किया गया है जो स्पष्ट रूप से कार्यों और जिम्मेदारियों को परिभाषित करता है। इसके अलावा, आउटपुट को समन्वित और वर्गीकृत करना होगा। प्रशासक का कर्तव्य यह सुनिश्चित करना है कि कार्य अधिकतम क्षमता के साथ प्रभावी रूप से किया जाए।
- J. उपयोगिता का सिद्धांत:** ये मौद्रिक संसाधनों और सुविधाओं को संदर्भित करते हैं जिसे सावधानी पूर्वक संरक्षित करने की आवश्यकता है।
- K. परिवर्तन का सिद्धांत:** ये परिवर्तनों को संदर्भित करते हैं और परिवर्तन जो व्यक्ति और समुदाय दोनों के भीतर होता है और बदले में संगठनों को आकार देते हैं।

- L. मूल्यांकन का सिद्धांत:** प्रक्रियाओं का सतत मूल्यांकन महत्वपूर्ण है एक एजेंसी के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए।
- M. विकास का सिद्धांत:** प्रशासक के दायरे में वृद्धि और विकास का पहलू एक महत्वपूर्ण अवधारणा है।
- 

## 1.4 समाज कार्य प्रशासक के कार्य

---

एक समाज कार्य प्रशासक न केवल दिन-प्रतिदिन कार्य करता है बल्कि संगठन को लोकप्रिय बनाने और संगठन में विकास करने के प्रयासों को भी निर्देशित करता है।

**वारहैम (1967)** ने निम्नलिखित कार्यों को रेखांकित किया है जो होना चाहिए

एक समाज कल्याण प्रशासक द्वारा किया गया:

1. **उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए:** ईमानदारी से एक समाज कल्याण प्रशासक

एक समाज कल्याण प्रशासक एक औपचारिक संरचना बनाता है, कर्मचारियों के लिए मानक निर्धारित करता है और कार्य का विकास करता है।

3. **सहकारी प्रयासों को प्रोत्साहित करने के लिए:** एक समाज कल्याण प्रशासक, जिस संगठन में कर्मचारी काम करते हैं, उसमें अनुकूल कार्य वातावरण बनाता है जिससे सदस्य अपने कर्तव्यों और जिम्मेदारियों को आसानी से निभा सकते हैं। अगर वहाँ संघर्ष होता तो कहीं न कहीं इसे हल करना प्रशासक का कार्य बन जाता है। विशेष रूप से कार्य और आचरण को उचित मान्यता

संगठन की नीतियों को लागू करता है। प्रशासनिक प्रक्रियाओं के माध्यम से नीतियों को लागू किया जा सकता है। व्यवस्थापक भी इसमें भाग लेता है ताकि उद्देश्यों और नीतियों के बीच एकरूपता को बनाए रखा जा सकता है।

2. **औपचारिक ढाँचा बनाने के लिए:** अधिक प्रभावी, संचार प्रणाली बनाने के लिए

देकर कर्मचारियों के बीच उच्च स्तर के मनोबल को बनाए रखने के लिए प्रयास करना आवश्यक है ।

4. **संसाधनों की खोज और उपयोग:** वित्तीय और मानव दोनों किसी भी संगठन के प्रभावी कामकाज के लिए आवश्यक संसाधन हैं। पैसा और कुशल कर्मचारी पर्याप्त होने पर एक संगठन अपनी जिम्मेदारियों का प्रभावी ढंग से निर्वहन कर सकता है। प्रशासक का कार्य है वित्तीय संसाधनों का अन्वेषण और उचित उपयोग करना । एक प्रशासक का कार्य, वित्तीय नियंत्रण भी है जो आवश्यकता पड़ने पर अपनी शक्तियों को प्रत्यायोजित करेगा ताकि सहकर्मी इस शक्ति का उपयोग कर सकें और प्रभावी ढंग से कार्य कर सकें।

5. **पर्यवेक्षण और मूल्यांकन:** प्रभावी प्रशासक संगठन के कार्यों का प्रदर्शन, संगठन के स्टाफ पर नजर रखते हैं, संगठन किसी भी प्रकार की दुर्भावना की जाँच करने के लिए, और जब भी आवश्यक हो सहायता निर्देश प्रदान करने के लिए । हिसाब रखते हैं प्रदर्शन और लगातार काम की प्रगति का मूल्यांकन। मामलों में, जहां वे अक्षमता के साथ संयुक्त आचरण को असंतोषजनक पाते हैं स्थापित नियम के अनुसार आवश्यक अनुशासनात्मक कार्रवाई करने के लिए आगे बढ़ सकते हैं ।

**एल गुलिक (1937)** ने के कार्यों का वर्णन करने के लिए एक उपयोगी परिवर्णी शब्द दिया है समाज कल्याण प्रशासन - POSDCORB - जो योजना का प्रतिनिधित्व करता है, क्रमशः आयोजन, स्टाफिंग, निर्देशन, समन्वय, रिपोर्टिंग और बजट।

इन कार्यों का विस्तृत विवरण नीचे दिया गया है:

1. **नियोजन:** यह एक बौद्धिक प्रक्रिया है जिसका उद्देश्य योजना की रूपरेखा तैयार करना है और कार्यों का व्यवस्थित प्रदर्शन करना है। अंतर्निहित दर्शन और भविष्य को ध्यान में रखते हुए उपलब्ध तथ्यों और व्यापक योजना के आधार पर यह रूपरेखा तैयार की



गई है। नियोजन का मुख्य कार्य स्पष्ट रूप से उद्देश्य निर्दिष्ट करना है। इसके बाद लक्ष्यों और उद्देश्यों को प्राप्त करने की नीति को तैयार किया गया है, जिसके बाद आवश्यक तरीके और प्रक्रियाएं हैं। अगला चरण उन विधियों और संसाधनों को निर्दिष्ट करना है जिन्हें निर्दिष्ट लक्ष्यों और उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए लागू किया जाना है। प्रगति का सतत मूल्यांकन भी कार्य योजना के भाग के रूप में शामिल किया गया है।

नियोजन, संक्षेप में, समायोजन लाने की एक प्रक्रिया है। प्राथमिकता वाली ज़रूरतें एक ओर, और उपलब्ध या चल संसाधन, एवं अन्य दूसरी ओर। स्थापित लक्ष्यों और उद्देश्यों के लिए योजना एक दस्तावेज है जो स्पष्ट रूप से रेखांकित करता है कि क्या किया जाना है, यह कैसे किया जाना है, किस प्रकार के संसाधन जुटाए या उपयोग किए जाने हैं और किस दिशा में प्रगति की निगरानी का तरीका क्या होगा।

2. **आयोजन:** प्रदर्शन के कारण आयोजन एक महत्वपूर्ण कार्य है किसी भी संस्था के कार्य इसी पर निर्भर करते हैं। यह भूमिकाओं और निर्दिष्ट करता है कार्य और शर्तें जिनमें उन्हें निष्पादित किया जाना है। यह परिभाषित करता है संगठन के विभिन्न घटकों के बीच संबंध और नियम और जिम्मेदारियाँ उन्हें स्पष्ट करता है। प्राप्त किए जाने वाले लक्ष्यों और उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए संगठन की रूपरेखा तैयार की जाती है।

3. **स्टाफिंग या कार्मिक पर्यवेक्षण:** स्टाफ का चयन महत्वपूर्ण है क्योंकि प्रदर्शन मुख्य रूप से कर्मचारी की क्षमता पर निर्भर करता है। प्रत्येक प्रशासक के कार्य द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाओं की गुणवत्ता संगठन कर्मचारियों की गुणवत्ता पर निर्भर करता है।

निम्नलिखित विचार सक्षम कर्मचारियों के चयन में महत्वपूर्ण हैं:

(i) कर्मचारी चयन, पदोन्नति और अन्य निर्णयों से संबंधित नीति स्पष्ट होना चाहिए। विभिन्न पद के लिए केवल सक्षम कर्मचारियों की नियुक्ति की जानी चाहिए।

- (ii) कर्मचारियों की शिकायतों का शीघ्र समाधान किया जाना चाहिए।
- (iii) संगठन के तथ्यों और दर्शन के आधार पर निर्णय लेने चाहिए और उन्हें दबाव में नहीं बदलना चाहिए।
- (iv) सभी कर्मचारियों के कार्य और भूमिकाएँ स्पष्ट होनी चाहिए, और उनकी जिम्मेदारी ठीक से तय होनी चाहिए।
- (v) कर्मचारियों के बीच सहयोगी प्रथाओं और सहकारी रवैया विकसित करने के लिए निरंतर प्रयास किए जाने चाहिए।
- (vi) संचार द्विपक्षीय होना चाहिए अर्थात् मुक्त और स्पष्ट होना चाहिए कर्मचारियों और प्रशासन के बीच सूचनाओं का आदान-प्रदान।

**4. निर्देशन या कार्यालय प्रशासन :** निर्देशन देना आवश्यक है कर्मचारियों के लिए, खासकर जब वे कार्रवाई के बारे में निर्णय लेने में सक्षम नहीं हैं अप्रत्याशित स्थितियों में उनके द्वारा लिया जाना। दिशा के उद्देश्य निम्नानुसार हैं:

- (i) यह देखने के लिए कि नियमों और निर्देशों के अनुसार कार्य किया जा रहा है या नहीं।
- (ii) कर्मचारियों को सौंपे गए कार्यों और कार्यों को करने में मदद करना।
- (iii) टीम भावना और सहयोग की भावना को बनाए रखना।
- (iv) काम के मानकों को बनाए रखना।
- (v) कमियों को समझना और उन्हें दूर करने के प्रयास करना।
- (vi) अप्रत्याशित और कठिन से निपटने के मामले में मार्गदर्शन प्रदान करना स्थितियों।

**5. समन्वय:** समन्वय विभिन्न के प्रयासों को सिंक्रनाइज़ करने की प्रक्रिया है

लक्ष्यों को प्रभावी ढंग से प्राप्त करने के लिए घटक; विशेष रूप से सभी से परहेज करके संसाधनों की बर्बादी के प्रकार। के दो महत्वपूर्ण कार्य हैं

एक संगठन में समन्वय:

- (i) लक्ष्यों के बीच एकरूपता लाने के लिए और कार्यों और
- (ii) किए गए कार्यों को एकीकृत करने के लिए। यह तभी संभव है

जब संगठन का प्रत्येक सदस्य संगठन के प्रति पूरी तरह से प्रतिबद्ध हो और अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए ईमानदार और सर्वोत्तम प्रयास करने के लिए तैयार हो पूरी प्रतिबद्धता के साथ।

6. **रिपोर्टिंग (प्रतिवेदन) :** तथ्यों को रिपोर्टिंग की प्रणाली के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है। एक संक्षिप्त एक निर्दिष्ट अवधि के दौरान की गई विभिन्न गतिविधियों का विवरण दिया गया है रिपोर्ट में। काम के मूल्यांकन की दृष्टि से एक रिपोर्ट बहुत महत्वपूर्ण है प्रदर्शन। विभिन्न दस्तावेजों के आधार पर एक रिपोर्ट तैयार की जाती है संगठन में उपलब्ध है और विभिन्न के प्रमुखों द्वारा किए गए प्रस्तुतियाँ प्रभाग, विभाग, इकाइयाँ और प्रकोष्ठ।

7. **बजट बनाना:** एक प्रशासक को हर साल के लिए बजट तैयार करना चाहिए और इसे संबंधित नीति निर्माण निकाय द्वारा अनुमोदित करवाना चाहिए। जिन उद्देश्यों को तैयार किया गया है, उन्हें ध्यान में रखते हुए एक बजट तैयार किया जाता है। बजट आय और व्यय का विवरण होता है। एल. गुलिक द्वारा प्रस्तुत उपरोक्त सात कार्यों के अतिरिक्त सूची में दो और कार्य जोड़े गए हैं। इनमें शामिल हैं: (1) मूल्यांकन, और (2) फीडबैक।

परिणाम स्वरूप, संक्षिप्त नाम अब **POSDCORBEF** है। मूल्यांकन लक्ष्यों और उद्देश्यों की प्राप्ति की दिशा में की गई प्रगति का आकलन है। यह उन कारकों और शक्तियों पर प्रकाश डालता है जिनके कारण निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त नहीं किया जा सकता है

और भविष्य की कार्रवाई के लिए दिशा-निर्देश सुझाता है। विशेष रूप से ऐसी रणनीतियाँ जिन्हें लक्ष्य प्राप्ति के लिए प्रभावी तरीके से अपनाया जाना चाहिए। प्रतिक्रिया किसी भी व्यवहार के परिणामों का ज्ञान प्रदान करने की प्रक्रिया है। संचार के संदर्भ में, यह वक्ता द्वारा प्रेषित संदेश के प्रति प्राप्तकर्ता की प्रतिक्रिया या प्रतिक्रिया को संदर्भित करता है ताकि संचारक को यह पता चल सके कि भेजा गया संदेश प्राप्तकर्ता द्वारा उसी अर्थ में प्राप्त किया गया है जिसमें इसका इरादा था।

## बोध प्रश्न

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. समाज कार्य प्रशासन क्या है?
2. समाज कार्य प्रशासन के सिद्धांत क्या हैं?
3. समाज कार्य प्रशासन की विभिन्न अवधारणाओं की चर्चा कीजिए?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. समाज कल्याण प्रशासक के कार्यों का वर्णन कीजिए?
2. समाज कार्य प्रशासन के विभिन्न सिद्धांत क्या हैं?

---

## 1.5 सारांश

सामाजिक कार्यकर्ताओं द्वारा समाज कार्य हस्तक्षेप और सामाजिक सेवाओं के संगठन के लिए अधिकारियों और अन्य स्टाफ सदस्यों की भूमिकाओं के अनुरूप ज्ञान, कौशल और दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है; सामाजिक कार्यकर्ता का प्रदर्शन लिए गए प्रशासनिक निर्णयों के साथ-साथ प्रशासनिक नेतृत्व और ग्राहकों को सेवाओं के संगठन में दिए गए निर्देश पर निर्भर करता है; सामाजिक केस वर्कर या समूह कार्यकर्ता द्वारा उपयोग किए जाने वाले ज्ञान और कौशल के अतिरिक्त और अलग-अलग निकाय को शामिल करते हुए प्रशासनिक अभ्यास के माध्यम से प्रभावी सामाजिक कार्य हस्तक्षेप और अभ्यास किया जाना है;

## 1.6 पारिभाषिक शब्दावली

---

**प्रशासन :** “प्रशासन "साधनों की प्रक्रियाओं के रूप में जिसके द्वारा किसी संगठन के लक्ष्य निर्धारित किए जाते हैं, इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए बनाई गई योजनाएं और कार्यान्वित की जाती हैं”

**समन्वय:** समन्वय विभिन्न के प्रयासों को एकीकृत करने की प्रक्रिया है तथा

सभी लक्ष्यों को प्रभावी ढंग से प्राप्त करने के लिए विशेष घटक के दो महत्वपूर्ण कार्य हैं एक संगठन में समन्वय: (लक्ष्यों और कार्यों के बीच एकरूपता लाने के लिए, और किए गए कार्यों को एकीकृत करने के लिए।

**स्वीकृति:** समूह या टीम के नेताओं को सामूहिक रूप से काम करना चाहिए और लेना चाहिए उचित कार्रवाई। मकसद सुरक्षा की बुनियादी भावना को बढ़ावा देना है कर्मचारी।

---

## 1.7 संदर्भित पुस्तकें

---

- सचदेवा, डी.आर. 1992. भारत में समाज कल्याण प्रशासन। नई दिल्ली: किताब महल।
  - डॉ. डी. पॉल, चौधरी। 1979. समाज कल्याण प्रशासन। नई दिल्ली: आत्मा
  - राम एंड संस।
  - प्रो. डी.के. सिंह भारत में समाज कल्याण प्रसाद [हिंदी] रॉयल बुक पब्लिकेशन लखनऊ ।
  - कृपाल सिंह सूदन- समाज कार्य सिद्धांत एवं अभ्यास-रावत पब्लिकेशन।
- 

## 1.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

---

## लघु उत्तर

1.

2.

3.

## दीर्घ उत्तर

1.

2.

# इकाई 2 संगठन, नीति निर्माण और योजना

---

## इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 संगठन: अर्थ और परिभाषा

2.2.1 संगठन: दृष्टिकोण और सिद्धांत

2.3 नीति निर्माण: भारत के संविधान में अवधारणा और तत्व

2.4 योजना: परिभाषा, विशेषताएं

2.4.1 नियोजन प्रक्रिया के चरण

2.5 सारांश

2.6 पारिभाषिक शब्दावली

2.7 संदर्भित पुस्तकें

2.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

---

## 2.0 उद्देश्य

---

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप सक्षम होंगे:

- संगठन के अर्थ और परिभाषा पर चर्चा करने में।
- सामाजिक नीति के लिए संवैधानिक आधार की व्याख्या करने में।
- नियोजन की विशेषताओं और प्रक्रिया का वर्णन करने में।

---

## 2.1 परिचय

---

सामाजिक कार्य विभिन्न सामाजिक सेवाओं के अध्ययन और प्रबंधन से संबंधित है, जो मान्यता प्राप्त सामाजिक समस्याओं के समाधान में योगदान देने के उद्देश्य से परिवार, समूह और सामुदायिक संबंधों की स्थापना में व्यक्तियों को उपलब्ध कराई जाती हैं ताकि सुधार हो सके। व्यक्तियों, समूहों और समुदायों लोगों की भलाई में समाज कार्य एक

सहकारी और समन्वित प्रयास है जिसमें संगठन के सभी सदस्य शामिल होते हैं, जिनमें से प्रत्येक लक्ष्य निर्माण, योजना, कार्यान्वयन, परिवर्तन और मूल्यांकन की प्रक्रियाओं के लिए विभिन्न तरीकों से कार्य करता है। समाज प्रशासन ने समाज कल्याण संगठनों या सामाजिक कल्याण के लिए कार्य करने वाली एक परियोजना पर प्रशासनिक अनुप्रयोगों पर ज्ञान प्रदान किया जो एक संगठन के समान है। पेशेवर प्रवीणता के लिए एक सामाजिक कार्यकर्ता "समाज कार्य" में प्रशासनिक अनुप्रयोग के मूल्य और आवश्यकता को समझता है

## 2.2 संगठन: अर्थ और परिभाषा और प्रकार:

एक संगठन इकाई है - जैसे कि एक कंपनी, एक संस्था, या एक संघ - जिसमें एक या अधिक लोग शामिल हैं और एक विशेष उद्देश्य रखते हैं।

यह शब्द ग्रीक शब्द ऑर्गनॉन से लिया गया है, जिसका अर्थ है उपकरण या वाद्य यंत्र, संगीत वाद्ययंत्र और अंग।

संगठन का अर्थ: "संगठन "यह निर्धारित कर रहा है कि किसी भी उद्देश्य के लिए कौन सी गतिविधियाँ आवश्यक हैं और उन्हें समूहों में व्यवस्थित करना जो व्यक्तियों को सौंपा जा सकता है"। संगठन सामान्य उद्देश्य की प्राप्ति के लिए प्रत्येक मानव संघ का रूप है "। शब्द संगठन विशिष्ट लक्ष्यों को प्राप्त करने के उद्देश्य से जानबूझकर संरचित इकाई को संदर्भित करता है। "संगठन से हमारा अभिप्राय सहकारी प्रयास की एक नियोजित प्रणाली से है जिसमें प्रत्येक प्रतिभागी की एक मान्यता प्राप्त भूमिका होती है और कर्तव्यों और कार्यों को पूरा करना होता है"। एक संगठन कुछ वांछित उद्देश्यों को पूरा करने के लिए व्यवस्थित और प्रभावी समन्वय में एक साथ लाए गए आवश्यक मनुष्यों, सामग्री, उपकरण, उपकरण, काम करने की जगह और साज-सामान का संयोजन है"।

संगठन का सिद्धांत कहता है :

(ए) दो या दो से अधिक व्यक्ति संगठन का गठन करते हैं।

(b) इसका गठन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए किया गया था।



(सी) यह अपेक्षा करता है कि संगठन के सदस्यों के बीच अच्छा सहयोग बना रहे।

(डी) एक संगठन वांछित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए पर्याप्त संसाधन, सामग्री और सामान की व्यवस्था करता है।

(ई) इन संसाधनों के बीच एकता और आपसी समन्वय मौजूद है।

(च) प्रत्येक संगठन के कार्यों का विशेष रूप से वर्णन और वर्गीकरण किया जाता है।

### **संगठन की परिभाषा:**

संगठन की कुछ परिभाषाएँ निम्नलिखित हैं।

1. **एल.डी. सफ़ेद।** "संगठन कार्यों और जिम्मेदारियों के आवंटन के माध्यम से कुछ सहमत उद्देश्य की उपलब्धि को सुविधाजनक बनाने के लिए कर्मियों की व्यवस्था है।"

2. **पिफनर।** "संगठन में व्यक्ति से व्यक्ति और समूहों के संबंध होते हैं जो श्रम के बारे में और व्यवस्थित विभाजन के उपयोग से संबंधित होते हैं।"

3. **लूथर गुलिक।** "संगठन प्राधिकार का औपचारिक ढाँचा है जिसके माध्यम से परिभाषित उद्देश्य के लिए कार्य उपविभाग को व्यवस्थित, परिभाषित और समन्वित किया जाता है।"

4. **एम मार्क।** "संगठन का तात्पर्य सरकार में मुख्य कार्यकारी और उसके प्रशासनिक अधीनस्थों को सौंपे गए कार्यों को पूरा करने के लिए विकसित संरचना से है।"

### **1. नौकरशाही सिद्धांत :**

'नौकरशाही' शब्द के दो प्रयोग हैं; यह प्रशासन के कार्यों और प्रक्रियाओं को संदर्भित करता है, साथ ही प्रशासनिक अधिकारियों के एक निकाय के लिए एक सामूहिक शब्द के रूप में उपयोग किया जाता है। अक्सर, यह अक्षमता और अधिकारियों की ओर से शक्ति के अनुचित प्रयोग के लिए भी खड़ा होता है, और इस प्रकार यह दुरुपयोग का शब्द बन गया है। 'नौकरशाही' शब्द सबसे पहले

फ्रांस के एक अर्थशास्त्री **विन्सेंट डी गौरने (1759 का 1712-17)** द्वारा गढ़ा गया था। उन्होंने देखा था "फ्रांस में हमें एक बीमारी है जो हमारे साथ कहर ढाने के लिए उचित है; इस बीमारी को ब्यूरोमैनिया कहा जाता है।" फ्रांसीसी अकादमी के शब्दकोश ने अपने 1798 के पूरक में इस शब्द को स्वीकार किया और इसे "शक्ति, सरकारी ब्यूरो के प्रमुखों और कर्मचारियों का प्रभाव" के रूप में परिभाषित किया।

हालांकि यह मैक्स वेबर ही थे जिन्होंने नौकरशाही के आधुनिक समाजशास्त्रीय अध्ययन की स्थापना की और इस शब्द को निंदनीय अर्थों से मुक्त किया और एक संगठन के लक्ष्यों की तर्कसंगत प्राप्ति के लिए नौकरशाही की अपरिहार्यता पर जोर दिया। वेबर ने अपने सूत्रीकरण को आदर्श प्रकार कहा। आदर्श प्रकार एक मानसिक मानचित्र या मानसिक निर्माण है। इसकी वैचारिक शुद्धता में यह मानसिक निर्माण अनुभवजन्य रूप से वास्तविकता में कहीं भी नहीं पाया जा सकता है। वेबर की नौकरशाही के वैचारिक ढांचे को उसकी प्राधिकार प्रणाली की टाइपोलॉजी को समझे बिना ठीक से नहीं समझा जा सकता है।

उनके अनुसार, नौकरशाही प्रशासन, "सामाजिक क्रिया के संगठनात्मक रूप का वह अशक्त और सशर्त रूप है जो अपने स्वयं के परिसर के विषयीकरण को रोकता है। नियमबद्ध नौकरशाही का अर्थ है कि स्वयं अभिनेताओं के निपटान में कार्रवाई क्षेत्र का परिसर। सभी जरूरत इस बात की है कि विशिष्ट स्थितियों के लिए कानूनी मानदंडों को अंधा और यांत्रिक रूप से लागू किया जाए।

नौकरशाही सिद्धांत की विशेषता कठोरता, अनम्यता, साध्य के बजाय साधनों पर जोर और मानवतावाद विरोधी है। एम. भट्टाचार्य के शब्दों में निष्कर्ष निकालने के लिए, "वेबर के नौकरशाहीवाद को आमतौर पर शास्त्रीय प्रशासनिक विचार की श्रेणी में रखा जाता है और वैचारिक स्तर पर लोक प्रशासन में वेबेरियन आदर्श प्रकार प्रमुख प्रतिमान बना हुआ है, वेबर के सूत्रीकरण का आकर्षण कभी दूर नहीं हुआ दूर, जो इसकी प्रतिमानात्मक शक्ति

का स्पष्ट प्रमाण है।

इस सिद्धांत का मूल विषय नौकरशाही के महत्व या कुलीन वर्ग के महत्व के बारे में बताता है।

## 2. मानव संबंध सिद्धांत:

संगठनात्मक विश्लेषण के शास्त्रीय दृष्टिकोण की प्रतिक्रिया के रूप में मानव संबंध सिद्धांत 1930 के दशक में अस्तित्व में आया। टेलर जैसे शास्त्रीय विचारक। फेयोल। गुलिक, उर्विक और वेबर ने संगठन की औपचारिक संरचना पर जोर दिया और संगठन में मानव तत्व की भूमिका की उपेक्षा की। दूसरे शब्दों में, उन्होंने समाज में व्यक्तिगत व्यवहार के समाजशास्त्रीय और मनोवैज्ञानिक पहलुओं पर जोर दिया

यह वह विफलता है जिसने मानवीय संबंधों के दृष्टिकोण को जन्म दिया। इस सिद्धांत को मानवतावादी सिद्धांत, सामाजिक-आर्थिक सिद्धांत और नव-शास्त्रीय सिद्धांत के रूप में भी जाना जाता है। अमेरिकी समाजशास्त्री एल्टन मेयो को 'मानव संबंध सिद्धांत का जनक' माना जाता है। मानवीय संबंधों के सिद्धांत के विकास में योगदान देने वाले अन्य लेखकों में एफ. जे. रोएथ्लिसबर्गर, विलियम जे. डिकसन, डब्ल्यू. लॉयड, ई. वार्नर और एल.जे. हैंडरसन शामिल हैं। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि मानव संबंध सिद्धांत ने शास्त्रीय सिद्धांत को पूरी तरह से खारिज या खारिज नहीं किया है। इसमें संशोधन किया गया और किसी तरह शास्त्रीय सिद्धांत को बढ़ाया गया। इसने शास्त्रीय दृष्टिकोण की आर्थिक मनुष्य की अवधारणा और औपचारिक संस्थागतकरण अवधारणाओं को खारिज कर दिया है।

दूसरे शब्दों में, इस सिद्धांत ने संगठन में व्यक्तिगत व्यवहार के समाजशास्त्रीय और मनोवैज्ञानिक पहलुओं पर बल दिया।

## 3. व्यवहारिक दृष्टिकोण

व्यवहारिक दृष्टिकोण संगठन के मानवीय संबंधों के दृष्टिकोण का एक सुधारित, व्यवस्थित और अधिक परिष्कृत संस्करण है। इस

दृष्टिकोण को 'सामाजिक-मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण' और 'नव मानव संबंध दृष्टिकोण' के रूप में भी जाना जाता है। इसका उद्देश्य संगठनात्मक व्यवहार का वैज्ञानिक अध्ययन करना है। लोक प्रशासन व्यवहारवाद में अध्ययन की एक अलग पंक्ति के रूप में 1980 के दशक में मानव संबंध आंदोलन के साथ शुरू हुआ और मुख्य रूप से विभिन्न सामाजिक परिवेशों में मानव व्यवहार के वैज्ञानिक अध्ययन से संबंधित है। यह सामाजिक विज्ञानों में पारंपरिक, प्रामाणिक और बड़े पैमाने पर वर्णनात्मक दृष्टिकोणों के विरोध के रूप में शुरू हुआ। व्यवहारिक दृष्टिकोण वास्तव में संगठन का सिद्धांत नहीं है। वास्तव में, यह संगठनात्मक व्यवहार के अध्ययन में व्यवहार विज्ञान का उपयोग है। व्यवहार विज्ञान से हमारा तात्पर्य मानव विज्ञान, मनोविज्ञान और समाजशास्त्र के विषयों से है। इसमें सामाजिक भूगोल, मनोचिकित्सा और अर्थशास्त्र, राजनीति विज्ञान और कानून के व्यवहारिक पैर भी शामिल हैं। व्यवहार विज्ञान अपने अध्ययन विशेष क्षेत्रों जैसे शारीरिक मनोविज्ञान, पुरातत्व, तकनीकी भाषा विज्ञान और अधिकांश भौतिक मानव विज्ञान को बाहर करता है।

### **संगठन: प्रकार:-**

विभिन्न प्रकार के संगठन हैं, जिनमें निगम, सरकारें, गैर-सरकारी संगठन, राजनीतिक संगठन, अंतर्राष्ट्रीय संगठन, सशस्त्र बल, दान, गैर-लाभकारी निगम, भागीदारी, सहकारी समितियाँ और शैक्षणिक संस्थान आदि शामिल हैं।

एक संकर संगठन एक निकाय है जो सार्वजनिक कर्तव्यों को पूरा करने और वाणिज्यिक बाजार गतिविधियों को विकसित करने के साथ-साथ सार्वजनिक क्षेत्र और निजी क्षेत्र दोनों में संचालित होता है।

एक स्वैच्छिक संघ स्वयंसेवकों से मिलकर बना एक संगठन है। इस तरह के संगठन अधिकार क्षेत्र के आधार पर कानूनी औपचारिकताओं के बिना संचालित करने में सक्षम हो सकते हैं, जिसमें अनौपचारिक क्लब या समन्वय निकाय शामिल हैं, जो एक

लक्ष्य के साथ घोषणापत्र, मिशन स्टेटमेंट के रूप में व्यक्त कर सकते हैं, या एक अनौपचारिक तरीके से परिलक्षित हो सकते हैं जो वे करते हैं। क्योंकि याद रखें कि किसी संगठन द्वारा कानूनी और अवैध दोनों तरह से की गई हर कार्रवाई दिमाग में एक लक्ष्य को दर्शाती है।

गुप्त समाजों, आपराधिक संगठनों और प्रतिरोध आंदोलनों के मामले में संगठन गुप्त रूप से या अवैध रूप से भी काम कर सकते हैं। और कुछ मामलों में अन्य संगठनों से बाधाएँ हो सकती हैं (उदा: MLK का संगठन)।

सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त एक संगठन या तो सामाजिक दबाव (उदा: वकालत समूह) के रूप में निगमन (व्यवसाय) या मान्यता को भरता है, चिंता पैदा करता है (उदा: प्रतिरोध आंदोलन)

---

## 2.3 नीति निर्माण

---

स्वैच्छिक संगठन में नीति निर्माण की प्रक्रिया इस प्रकार है:

1. जिस मुद्दे पर ध्यान देने की आवश्यकता है, उस पर आम तौर पर संगठन की प्रबंध समिति में चर्चा की जाती है।
2. संगठन की कार्यकारिणी नीति को लागू करती है।
3. आवश्यक जानकारी या तो संगठन के एक कार्यकारी या इस उद्देश्य के लिए गठित समिति द्वारा एकत्र की जाती है।
4. इस जानकारी का विश्लेषण किया जाता है और प्रबंध समिति के समक्ष ठोस प्रस्ताव रखा जाता है।
5. प्रबंध समिति नीति निर्माण के प्रस्ताव पर विस्तार से विचार करती है।
6. प्रबंध समिति प्रस्ताव को मंजूरी देती है और इसे आम सभा में रखती है।
7. आम सभा प्रस्ताव को मंजूरी देती है।
8. सामान्य निकाय के अनुमोदन के बाद, नीति को स्वैच्छिक संगठन

में घोषित या आत्मसात किया जाता है।

9. प्रायोजक एजेंसी, अनुदान देने वाली एजेंसी, दाता, सब्सक्राइबर आदि के नियम, विनियम, इच्छा और संवेदनशीलता।
10. नीति के परिणामों का मूल्यांकन संगठन की कार्यकारिणी द्वारा किया जाता है।
11. सामान्य निकाय के अनुमोदन से प्रबंध समिति द्वारा आवश्यक परिवर्तन किए जा सकते हैं।

### **सार्वजनिक (सरकारी) एजेंसियों में नीति निर्माण-**

सरकार के नियम और विनियम और साथ ही सरकार का शासनादेश सरकारी एजेंसियों में नीति निर्माण प्रक्रिया का निर्धारण करते हैं। नीति निर्माण के लिए आमतौर पर निम्नलिखित प्रक्रिया को क्रियान्वित किया जाता है:

1. संबंधित लोगों, सामाजिक और नैतिक नवप्रवर्तकों, परिवर्तन के पैरोकारों या नए कार्यक्रमों, मीडिया, शिक्षाविदों, सामाजिक गतिविधियों में चर्चाओं के माध्यम से सामाजिक सेवाओं में एक अपूर्ण आवश्यकता (ओं) या सामाजिक समस्या (ओं) या अंतर पर व्यक्त की गई चिंता, सम्मेलन, अपील, आंदोलन, इलेक्ट्रॉनिक शो और प्रिंट मीडिया, लेख और चर्चा आदि।
2. लोगों के साथ-साथ सरकारी अधिकारियों के औपचारिक और संरचित समूहों का विकास।
3. अकादमिक स्रोतों, सांख्यिकीय संगठनों, पेशेवरों और उनके संगठनों, सामाजिक नियोजन संगठनों, स्वतंत्र या प्रायोजित जांच, सेमिनार, सम्मेलन, पूछताछ आदि के माध्यम से आवश्यकता या समस्या या अंतर और इससे प्रभावित लोगों से संबंधित संरचित जानकारी एकत्र करना।
4. सामान्य नीति समाधानों का विकास और लक्ष्यों का निर्धारण (ए) नीति विकल्पों को जानना, (बी) सामाजिक वास्तविकता और समाज के मूल्य संदर्भ के भीतर व्यावहारिक संभावनाओं पर ध्यान

देना, (सी) विभिन्न प्रकार के उद्देश्यों को ध्यान में रखना सहयोगियों की जो कार्यक्रम को समर्थन या प्रतिरोध की पेशकश करेंगे, (डी) इस सामान्य नीति के प्रकट और अपेक्षित कार्यों और गुप्त कार्यों या अनपेक्षित परिणामों की कल्पना करना, (ई) आबादी के संख्यात्मक आकार और विशेषताओं का अनुमान लगाना जिस पर उनकी नीति केंद्रित किया जाएगा, और (च) वैकल्पिक समाधानों की लागत का आकलन और आवश्यकता श्रेणी में विभिन्न समूहों के कवरेज का।

## 5. संबंधित संगठनों द्वारा परिवर्तन के लिए पैरवी करना

- (ए) राजनेताओं और सिविल सेवकों से समर्थन प्राप्त करना,
- (बी) संभावित सहयोगियों की तलाश करना और सामान्य संस्थागत समूहों की सहायता प्राप्त करना।

## 6. संचालन नीति और कानूनों का निर्माण

- (ए) नीति को संचालन में लाने के लिए कार्यबलों की स्थापना और कानून के प्रावधानों को लिखने के लिए, संभवतः अनुसंधान संगठनों या एजेंसी की अनुसंधान शाखा में या सामाजिक योजना परिषद या योजना प्रभाग में एक पेशेवर समूह का,
- (बी) परिचालन दिशानिर्देशों में नीति को आकार देना, प्रावधान के प्रकार, प्रावधान की विधि और प्रावधान की डिग्री, संगठन संरचना, वित्त पोषण और विभिन्न प्रशासनिक स्तरों जैसे संघीय, राज्य और स्थानीय के बीच जिम्मेदारी का आवंटन,
- (सी) कांग्रेस या राज्य विधायिका समितियों की कार्रवाई या राष्ट्रीय पेशेवर संगठनों के समग्र बोर्ड या स्थानीय समुदाय छाती या स्थानीय परिषद जैसे अन्य अधिनियमित समूहों की प्रतिक्रियाओं के कारण प्रावधानों को जोड़ना या समझौता करना या हटाना।

- ## 7. कानून के साथ-साथ एजेंसी कार्यक्रम का वास्तविक अधिनियमन
- (ए) अंतिम प्रावधानों या कार्यक्रम संरचना पर सहमति के बयान के माध्यम से; और (बी) कार्यक्रम चलाने के लिए एजेंसी या अन्य

संरचना की स्थापना।

8. स्थानीय स्तर पर सेवाओं या लाभों के प्रावधान के लिए

(ए) कानूनों, कार्यकारी आदेशों या परिचालन दिशानिर्देशों का अनुवाद करके कार्यक्रम का कार्यान्वयन;

(बी) एक संगठनात्मक संरचना की स्थापना और इसके घटकों को स्टाफ करना;

(सी) एजेंसी क्लाइंट स्तर पर एक वितरण प्रणाली की संरचना करना और

(डी) सूचना, वकालत और पहुंच तंत्र के माध्यम से सेवा तक पहुंच को सुविधाजनक बनाना।

9. कार्यक्रम का मूल्यांकन और मूल्यांकन

(ए) यह तय करने के लिए कि क्या कार्यक्रम इच्छित लक्ष्य समूहों की जरूरतों को पूरा करता है और बताए गए उद्देश्यों तक पहुँचता है और समस्या को कम करता है;

(बी) छिपे हुए कार्यों या प्रभावों का आकलन;

(सी) वितरण में बाधाओं का पता लगाना;

(डी) समाज में सभी सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक संस्थानों में नीति कार्यक्रम का एकीकरण, और

(ई) वैकल्पिक नीतियों की परीक्षा

### 2.3.1 भारत के संविधान में सामाजिक नीति तत्व

#### प्रस्तावना

हम, भारत के लोग, भारत को एक संपूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न समाजवादी पंथनिरपेक्ष लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए और इसके सभी नागरिकों के लिए: न्याय, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक;

विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, आस्था और पूजा की स्वतंत्रता;



स्थिति और अवसर की समानता; और उन सभी के बीच प्रचार करने के लिए व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखंडता सुनिश्चित करने वाली बंधुता;

भारतीय संविधान भी कुछ प्रासंगिक को सफलतापूर्वक शामिल करता है और राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों (DPSP) के महत्वपूर्ण लेख प्रभावित करते हैं

एक न्यायसंगत और निष्पक्ष सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था को बढ़ावा देने पर।

राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों के कुछ महत्वपूर्ण लेख निम्नलिखित हैं।

**अनुच्छेद 38** - राज्य कल्याण के प्रचार के लिए लोगों की एक सामाजिक व्यवस्था को सुरक्षित करेगा।

राज्य सुरक्षित और सुनिश्चित करके लोगों के कल्याण को बढ़ावा देने का प्रयास करेगा।

एक सामाजिक व्यवस्था को यथासंभव प्रभावी ढंग से संरक्षित करना जिसमें न्याय, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक, राष्ट्रीय जीवन की संस्थाओं को सूचित करेगा।

राज्य, विशेष रूप से, आय में असमानताओं को कम करने का प्रयास करेगा,

और स्थिति, सुविधाओं और अवसरों में असमानताओं को खत्म करने का प्रयास करें, केवल व्यक्तियों के बीच ही नहीं, बल्कि अलग-अलग जगहों पर रहने वाले लोगों के समूहों के बीच भी क्षेत्रों या विभिन्न व्यवसायों में लगे हुए हैं।

**अनुच्छेद 39** - राज्य द्वारा नीति के कुछ सिद्धांतों का पालन किया जाना।

राज्य, विशेष रूप से, अपनी नीति को सुरक्षित करने की दिशा में निर्देशित करेगा

(ए) कि नागरिकों, पुरुषों और महिलाओं को समान रूप से पर्याप्त अधिकार है

आजीविका के साधन;

(बी) कि समुदाय के भौतिक संसाधनों का स्वामित्व और नियंत्रण

इस प्रकार वितरित किए जाते हैं कि वे सर्वसाधारण की भलाई के लिए सर्वोत्तम हों;

(सी) कि आर्थिक प्रणाली के संचालन के परिणामस्वरूप एकाग्रता नहीं होती है

धन और उत्पादन के साधनों का आम नुकसान;

(डी) पुरुषों और महिलाओं दोनों के लिए समान काम के लिए समान वेतन है;

(ई) कि श्रमिकों, पुरुषों और महिलाओं के स्वास्थ्य और शक्ति, और निविदा

बच्चों की उम्र का दुरुपयोग नहीं किया जाता है और नागरिकों को आर्थिक रूप से मजबूर नहीं किया जाता है।

उनकी आयु या शक्ति के अनुपयुक्त व्यवसायों में प्रवेश करने की आवश्यकता; और

(च) कि बच्चों को एक स्वस्थ वातावरण में विकसित होने के अवसर और सुविधाएं दी जाती हैं तरीके से और स्वतंत्रता और गरिमा की स्थितियों में और वह बचपन

और युवाओं को शोषण के खिलाफ और नैतिक और भौतिक परित्याग के विरुद्ध संरक्षित किया जाता है ।

**अनुच्छेद 41** - काम, शिक्षा और कुछ मामलों में सार्वजनिक सहायता का अधिकार मामलों।

राज्य, अपनी आर्थिक क्षमता और विकास की सीमाओं के भीतर, काम, शिक्षा और जनता के अधिकार को सुरक्षित करने के लिए प्रभावी

प्रावधान करें बेरोजगारी, वृद्धावस्था, बीमारी और अक्षमता के मामलों में सहायता, और मेंअल्पसेवित अभाव के अन्य मामले।

**अनुच्छेद 45** - बच्चों के लिए मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा का प्रावधान।

राज्य दस वर्ष की अवधि के भीतर प्रदान करने का प्रयास करेगा इस संविधान का प्रारंभ, सभी के लिए मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा के लिए चौदह वर्ष की आयु पूरी करने तक बच्चे। साथ ही, मौलिक अधिकारों पर अध्याय के निम्नलिखित प्रावधान सुनिश्चित करते हैं।

### **नागरिक समानता:**

(ए) कानून के समक्ष समानता (अनुच्छेद 14)

(बी) धर्म, नस्ल, जाति, लिंग या स्थान के आधार पर भेदभाव का निषेध

जन्म का (अनुच्छेद 15)

(सी) सार्वजनिक रोजगार के मामलों में अवसर की समानता (अनुच्छेद 16)

(डी) अस्पृश्यता का उन्मूलन (अनुच्छेद 17)

(ई) उपाधियों का उन्मूलन (अनुच्छेद 18)

समस्या को वर्गीकृत करने के लिए एक सामाजिक कार्यकर्ता को सही ढंग से योजना बनाने के बारे में सोचना चाहिए। इसलिए योजना सेटिंग और संगठन का सबसे महत्वपूर्ण कार्य है।

नियोजन की निम्नलिखित विशेषताओं को परिभाषित किया जा सकता है:

(I) योजना संगठन के लक्ष्यों के साथ घनिष्ठ रूप से जुड़ी हुई है। ये लक्ष्य निहित या स्पष्ट हो सकते हैं; हालाँकि, अच्छी तरह से परिभाषित लक्ष्य कुशल नियोजन की ओर ले जाते हैं।

(II) नियोजन मुख्य रूप से भविष्य को देखने से संबंधित है। इसके लिए भविष्य की भविष्यवाणी की आवश्यकता होती है।

- (III) योजना में संगठन में प्राप्त करने के लिए सर्वोत्तम विकल्पों का चयन शामिल है।
- I) योजना संगठन के लक्ष्यों के साथ घनिष्ठ रूप से जुड़ी हुई है। ये लक्ष्य निहित या स्पष्ट हो सकते हैं; हालाँकि, अच्छी तरह से परिभाषित लक्ष्य कुशल नियोजन की ओर ले जाते हैं।
- II) नियोजन मुख्य रूप से भविष्य को देखने से संबंधित है। इसके लिए भविष्य की भविष्यवाणी की आवश्यकता होती है।
- III) योजना में संगठन में प्राप्त करने के लिए सर्वोत्तम विकल्पों का चयन शामिल है।
- IV) योजना व्यापक है और इसमें संगठन में हर तरह की कार्रवाई शामिल है।
- V) नियोजन लचीला है क्योंकि इसका संबंध भविष्य की परिस्थितियों से है जो गतिशील हैं

---

## 2.4 नियोजन: अर्थ और परिभाषा

---

नियोजन की परिभाषाएँ :-

प्रत्येक समाज में सामाजिक समस्याएँ होती हैं जिन पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता होती है। साथ ही सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया नई समस्याओं को जन्म देती है जिसके लिए सामाजिक क्रियाओं की आवश्यकता होती है। सामाजिक कल्याण कार्यक्रम, इसलिए, इनमें से कुछ समस्याओं से निपटने के प्रभाव का हिस्सा बनते हैं। एक कल्याणकारी राज्य का मुख्य उद्देश्य दी गई परिस्थितियों में समुदाय को दी जाने वाली अधिकतम राशि की तलाश करना है। सामाजिक समस्याओं के कल्याण हेतु कार्य करने हेतु प्रशासनिक कार्यवाही आवश्यक होगी। आधुनिक समय की सामाजिक समस्याओं में तुरंत समूह क्रिया या सामाजिक क्रिया करना। कार्रवाई करने के लिए संगठनात्मक व्यवस्था आवश्यक है। और

संगठनात्मक व्यवस्था के लिए किसी संगठन के लिए अच्छी और रचनात्मक योजना होनी चाहिए।

संगठन के विभिन्न सिद्धांत हैं। इन्हें इस रूप में दर्शाया गया है-

**नियोजन:** यह प्रत्येक कार्य की शुरुआत की प्राथमिक तैयारी है। यह व्यक्तिगत और सहकारी या सामूहिक प्रयास का एक अंतर्निहित हिस्सा है। उदाहरण के लिए चुनाव में जीतने के लिए राजनेता की योजना और इसके लिए वे टीम तैयार करेंगे या अपनी पार्टी के सदस्यों को जोड़कर जीतने की रणनीति तैयार करेंगे। सामाजिक कार्य के समान सामाजिक समस्या और किसी क्षेत्र की उसकी निरंतरता या सर्वेक्षण विधि द्वारा जांच और उससे संबंधित संगठनात्मक कार्य को स्थापित करने की योजना का अवलोकन ।

निम्नलिखित सामाजिक वैज्ञानिक आमतौर पर "योजना" शब्द के बारे में अपने विचार देते हैं।

**डिमॉक** के अनुसार, नियोजन "तर्कसंगत संरचना का उपयोग है, जो परिवर्तन के विपरीत है, कार्रवाई शुरू होने के बाद सुधार के बजाय कार्रवाई की एक पंक्ति में निर्णय लेने से पहले पहुंच जाता है।

**एमई हार्ले** के अनुसार, "क्या किया जाना है, यह पहले से तय करना ही नियोजन है। इसमें विकल्पों में से उद्देश्यों, नीतियों की प्रक्रियाओं और कार्यक्रम का चयन शामिल है।

**डेविड क्लेवेंड और विलियम किंग**, "योजना एक समग्र उद्देश्य या उद्देश्य को पूरा करने के लिए आवश्यक रणनीति, कार्यों और संबंधों के माध्यम से सोचने और स्पष्ट करने की प्रक्रिया है। सफ़ेद। "नियोजन, जैसा कि लोक प्रशासन के संदर्भ में प्रयुक्त शब्द मूल नीति पर निर्णय लेने के समतुल्य नहीं है। प्रशासन के संदर्भ में योजना वहीं से शुरू होती है जहां सामान्य नीति समाप्त हो जाती है; इसका संबंध उन साधनों से है जिनके द्वारा लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सकता है।" इन परिभाषाओं की समीक्षा से नियोजन की निम्नलिखित विशेषताओं का पता चलता है।

1. नियोजन एक व्यवस्थित प्रक्रिया है।
2. इसमें लक्ष्य निर्धारण होता है।
3. इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए नीति निर्धारित की जाती है।
4. निर्धारित नीति के अनुसार प्रक्रियाओं और संसाधनों का निर्धारण किया जाता है।

5. लक्ष्य प्राप्त करने के लिए विभिन्न अधिकारियों को आवश्यक गतिविधियाँ दी जाती हैं।
6. मूल्यांकन सफलता या असफलता को देखते हुए किया जाता है।

### 2.4.1 नियोजन प्रक्रिया:

नियोजन सचेत और जानबूझकर किया गया प्रयास है। यह एक उद्देश्य की उपलब्धि के लिए तर्कसंगत और दृढ़ दृष्टिकोण है। यह संयोग का परिणाम नहीं है और इसे "अनुपस्थित-मानसिकता के द्वारा प्राप्त नहीं किया जा सकता है। फ़िनर और प्रेस्थस के शब्दों में: नियोजन तर्कसंगत है क्योंकि यह कई संभावित साधनों और सिरों के एक व्यवस्थित विश्लेषण की मांग करता है, इसके बाद उन साधनों का चयन किया जाता है जो निर्दिष्ट अंत के लिए सबसे उपयुक्त माने जाते हैं। योजना प्रकृति में एकीकृत और व्यापक है। यह उद्देश्यों की उपलब्धि के लिए प्रयासों के समन्वय, एकीकरण और व्यवस्थितकरण का एक प्रयास है।

**सेकलर-हडसन के अनुसार, चरण हैं:**

---

1. जहाँ तक संभव हो समस्याओं की पहचान कर सावधानीपूर्वक और सीमा के अन्दर प्रयाश करना।
2. समस्या से संबंधित सभी उपलब्ध सूचनाओं की खोज।
3. संभावित वैकल्पिक समाधान या समस्याओं को हल करने के तरीके प्रस्तुत करना।
4. वास्तविक संक्रियाओं के माध्यम से एक या अधिक अस्थायी समाधानों का प्रयोग।

**मिलेट के अनुसार, चरण हैं:**

1. लक्ष्यों या उद्देश्यों का निरूपण।
2. इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए उपलब्ध साधनों या संसाधनों का आकलन।
3. निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए डिज़ाइन किए गए कार्य और

कार्यक्रमों की तैयारी।

समकालीन काल में आवश्यकता की तुलना में संसाधनों की कमी है। इसके लिए जरूरी है कि संसाधनों का भरपूर उपयोग किया जाए। यह उनकी प्राथमिकता के अनुसार जरूरतों को पूरा करने के लिए संसाधनों के नियोजित उपयोग की मांग करता है। इस प्रकार, नियोजन सभी मानव व्यवहारों **(पिफनर और शेरवुड)** की एक तर्कसंगत प्रक्रिया विशेषता है। इसलिए, संगठन के मामले में, यह समान रूप से महत्वपूर्ण है कि प्रत्येक संगठन को अपने उद्देश्यों को योजनाबद्ध तरीके से पूरा करना चाहिए और प्रत्येक प्रशासक के लिए योजना बनाना महत्वपूर्ण है, भले ही संगठन में उसका स्तर कुछ भी हो। समाज कार्य प्रशासक के लिए मुख्य रूप से निम्नलिखित कारणों से नियोजन की आवश्यकता होती है:

निष्कर्ष निकालने के लिए, यह कहा जा सकता है कि नियोजन कार्यवाही का प्रथम चरण है और यह आधारशिला है जिसके चारों ओर निर्णय लेने की नींव रखी गई है।

नियोजन को विभिन्न आधारों पर विभाजित किया जा सकता है जो इस प्रकार हैं:

### **पिफनर और प्रेस्थस द्वारा नियोजन प्रक्रिया**

नियोजन तर्कसंगत है क्योंकि यह कई संभावित साधनों और लक्ष्यों के एक व्यवस्थित विश्लेषण की मांग करता है, इसके बाद उन साधनों का चयन किया जाता है जो नामित अंत के लिए सबसे उपयुक्त माने जाते हैं।

**(पिफनर और प्रेस्थस)** नियोजन में चरणों का एक क्रम शामिल है क्योंकि यह प्रकृति में एकीकृत और व्यापक है; यह स्व-उद्देश्यों की प्राप्ति के प्रयासों के समन्वय, एकीकरण और व्यवस्थितकरण का एक प्रयास है।

### **2.4.2 नियोजन प्रक्रिया के चरण:**

**शेफ़र कॉर्पोरेट** योजना में चार क्लासिक चरणों का सुझाव देते हैं:

1. अनुसंधान: कॉर्पोरेट ताकत, कमजोरियों और अन्य कारकों का विश्लेषण करने के लिए और बाहरी प्रवृत्तियों द्वारा बनाए गए अवसरों और जोखिमों को निर्धारित करने के लिए।
2. उद्देश्यों का निरूपण: परिभाषित करने के लिए कि कंपनी को दीर्घावधि

भविष्य में क्या बनना चाहिए।

3. रणनीतिक योजना: निगम अपने अंतिम उद्देश्यों की ओर कैसे बढ़ेगा, इसकी रूपरेखा तैयार करने के लिए एक समग्र रूपरेखा विकसित करना।

### **बोध प्रश्न**

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. संगठन का अर्थ स्पष्ट कीजिये
2. नियोजन का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. संगठन के सिद्धांत पर प्रकाश डालिए।

---

## **2.5 सारांश**

---

यह इकाई प्रशासनिक सिद्धांतों और संगठनात्मक संरचना की व्याख्या करती है एक संगठन संचालन के सिद्धांतों और कौशलों को वहन करता है। ये सिद्धांत योजना आयोजन स्टाफिंग निर्देशन बजटिंग हैं। ये सिद्धांत प्रोजेक्ट फॉर्मूलेशन से भी जुड़े हुए हैं। यानी अपनी एजेंसी के लिए योजना कैसे बनाएं। बढ़ाने के लिए दुनिया के सभी देश अपनी आर्थिक नीति बनाते हैं लोगों का आर्थिक कल्याण। अर्थशास्त्रियों का मानना है कि यह है इसे संचालित करने की जिम्मेदारी सरकार और मौद्रिक प्राधिकारियों की है। आर्थिक कल्याण में वृद्धि के लिए अर्थव्यवस्था का सामान्य दृष्टिकोण यह है कि एक अर्थव्यवस्था स्वाभाविक रूप से अधिकतम आर्थिक कल्याण की ओर बढ़ेगी और पूर्ण रोजगार उपलब्ध कराएगी तब , जब इसके बाजारों को स्वतंत्र रूप से संचालित करने की अनुमति दी जाती है। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि नियोजन में तीन चरण शामिल हैं - योजनाओं का निर्माण, निष्पादन और मूल्यांकन। इसमें कहा गया है, नियोजन में तीन चरण शामिल होते हैं- योजनाओं का निर्माण, क्रियान्वयन। योजना के निम्नलिखित चरण योजनाओं का निर्माण, निष्पादन और मूल्यांकन हैं। इन तीन चरणों का संक्षिप्त विवरण निर्माण, निष्पादन और मूल्यांकन



## 2.6 पारिभाषिक शब्दावली

---

- सामाजिक नीतियां: संबंधित नीतियों, योजनाओं और संस्थानों का एक जटिल जाल नागरिकों की सामाजिक स्थितियों और आर्थिक गतिविधियों के प्रभाव से संबंधित राज्य पर।
  - सामाजिक न्याय: यह बिना किसी सामाजिक भेदभाव के सभी नागरिकों के समान व्यवहार को जाति, रंग, नस्ल, धर्म और लिंग के आधार पर दर्शाता है ।
  - सामाजिक एकीकरण: यह उन कार्यों को लागू करता है और बढ़ावा देता है जो पुनर्परिभाषित करने का प्रयास करते हैं मौजूदा सामाजिक अनुबंध ताकि एक अधिक समतामूलक समाज का निर्माण हो सके।
- 

## 2.7 संदर्भित पुस्तकें

---

डिसीजन मेकिंग एंड प्रॉब्लम सॉल्विंग (हिंदी) (पेपरबैक हिंदी डॉ. राजेश सेठी) लेखक : डॉ. राजेश सेठी 400 पेज भाषा: हिन्दी प्रकाशक: विद्या प्रकाशन मंदिर लिमिटेड।

---

## 2.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

---

लघु उत्तर

1. संगठन का अर्थ:
2. नियोजन: अर्थ और परिभाषा:

दीर्घ उत्तर

1. संगठन का सिद्धांत कहता है:



---

## इकाई 3 निर्णय निर्माण संचार

---

### इकाई की रूपरेखा

#### 3.0 उद्देश्य

#### 3.1 प्रस्तावना

#### 3.2 निर्णय निर्माण का अर्थ और परिभाषा

#### 3.3 निर्णय निर्माण का कौशल

##### 3.3.1 निर्णय लेने की समस्याएं

#### 3.4 संचार: अवधारणा

##### 3.4.1 संचार: परिभाषाएं

##### 3.4.2 संचार: प्रक्रिया

#### 3.5 सारांश

#### 3.6 पारिभाषिक शब्दावली

#### 3.7 संदर्भित पुस्तकें

#### 3.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

---

### 3.0 उद्देश्य

---

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप सक्षम होंगे: निर्णय लेने के अर्थ और परिभाषा पर चर्चा करने में। कौशल और निर्णय लेने की समस्याओं की व्याख्या करने में। प्रभावी संचार की अवधारणा और चैनल का वर्णन करने में। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप सक्षम होंगे: संचार के अर्थ और अवधारणा को समझने में। संचार की प्रक्रिया को समझेंगे।

---

### 3.1 प्रस्तावना

---

सामाजिक वैज्ञानिकों ने वैज्ञानिक रूप से "योजना" शब्द को बढ़ाने के लिए "निर्णय लेने" की अवधारणा का उपयोग किया। "निर्णय लेने" के

महत्व को सही दिशा में योजना को क्रियान्वित करने या लागू करने के लिए संगठन के लगभग सभी स्तरों की आवश्यकता है। अवधारणा को "वेबस्टर डिक्शनरी" द्वारा बेहतर ढंग से समझाया गया है कि "निर्णय लेने की कला के रूप में निर्णय लेना या कार्रवाई के कारण के लिए अपने स्वयं के दिमाग की राय"। किसी की योजना को सही निर्णय लेने से प्रामाणिक और उद्देश्य उन्मुख होना चाहिए। इस इकाई में हमने संचार शब्द के बारे में चर्चा की। "संचार" शब्द "सामान्य" शब्द से लिया गया है - साझा करने विनिमय करने साथ भेजने संचारित करने बात करने इशारा करने लिखने उपयोग में लाने संबंधित करने के लिए। तो इस विषय की जांच इस प्रश्न से शुरू हो सकती है: संचार के सभी अध्ययनों में क्या समानता है साझा अवधारणाएं क्या हैं जो "संचार" के अध्ययन को "विचार" या "साहित्य" या "जीवन" जैसे विषयों के अध्ययन से अलग बनाती हैं जब कोई कहता है इसका क्या अर्थ है यह एक संचार समस्या है

---

## 3.2 निर्णय निर्माण का अर्थ और परिभाषा

---

विभिन्न सामाजिक वैज्ञानिकों ने निम्नलिखित संदर्भ में अपने विचार दिए:

**एमोरी और निलैंड:** निर्णय चयन और प्रतिबद्धता का बिंदु है निर्णय कार्रवाई का सबसे अच्छा तरीका है ।

**डोनाल्ड जे. चॉफ़:** "निर्णय लेने की प्रक्रिया में कई विकल्प और समस्या शामिल होती है जिसके द्वारा कई लक्ष्यों को पूर्ण किया जाना चाहिए और व्यक्ति को अपनी योजना में एक सर्वोत्तम संभव कार्य करना चाहिए"।

**डब्ल्यू बुक ग्रोव्स:** "निर्णय लेना दो या दो से अधिक उचित संभावनाओं का चयन है लेकिन सही निर्णय केवल फलदायी होगा और समय और परिस्थितियों के लिए सबसे अच्छा समाधान प्रदान करता है"।

**हॉज एंड जॉनसन:** निर्णय लेने से किसी भी समस्या का अंतिम समाधान होता है जो निर्णय निर्माता और संगठन की उपलब्धि के बीच खड़ा होता है।

निर्णय" के प्रकार के बारे में साइमन जैसे प्रख्यात लेखकों द्वारा दिए गए कई अच्छे संग्रहों ने योगदान दिया है

- प्रोग्राम्ड - नॉन-प्रोग्राम्ड
- ड्रकर ( सामान्य) (अद्वितीय)
- डेलबर्ग (रूटीन) ( क्रिएटिव) ( बातचीत)
- विलियम गोर (रूटीन) ( एडाप्टेटिव) ( इनोवेटिव)।

---

### 3.3 निर्णय निर्माण का कौशल

---

समस्या की पहचान: समस्या की पहचान इसका तात्पर्य यह है कि सामाजिक समस्याओं में जटिल हैं। लोगों और उनके व्यवहार को समझना मुश्किल है। स्थितियों की व्याख्या करना मुश्किल है लेकिन हैंडरसन और सुजेनेन ने निम्नलिखित कदमों की पहचान की है। (वर्तमान मानक के अनुसार अपेक्षा का निर्धारण। (अपेक्षित प्रदर्शन और वास्तविक निर्णयों का अवलोकन करना। (अवलोकन और माप के माध्यम से अपेक्षित समस्या की पहचान।

समस्याओं से संबंधित तथ्यों का संग्रह: समस्या के उचित विश्लेषण के लिए संबंधित तथ्यों का अध्ययन किया जाता है। उचित विश्लेषण के लिए समस्या का अध्ययन करें इससे संबंधित तथ्यों को खोजें लोगों से मिलें निर्णय पूछें प्रभावशाली सहयोगियों को खोजें और निर्णय को ध्यान से खोजें। इसी तरह समस्या को वर्गीकृत करें और एकत्रित तथ्यों को अलग करें। डेटा का विश्लेषण करें और उपयोगी डेटा का निर्धारण करें और अनुपयोगी डेटा को अलग करें। फिर समाधान के लिए उचित मूल्यांकन किया जाएगा।

---

निर्णय लेना या संभावित विकल्प: जब भी किसी को न्याय करना हो तो निष्कर्ष में वैकल्पिक विकल्प लेना चाहिए उसके पास ऐसे विकल्प होने चाहिए जिनमें से कोई भी चुन सके। विकल्प विभिन्न परिस्थितियों पर निर्भर करता है जैसे उस समय एकत्र किए गए संभावित संसाधनों के

साथ। तर्कसंगत दृष्टिकोण के अलावा उपलब्ध तथ्यों और प्रत्याशित परिणामों पर सावधानीपूर्वक विचार करना आवश्यक है। निर्णय निर्माता द्वारा लिया गया निर्णय लचीला और वेटेज होना चाहिए। यदि स्थिति की मांग है तो संभावित संशोधनों को तुरंत लिया जा सकता है

### 3.3.1 निर्णय लेने की समस्याएं

स्किडमोर का विचार:

लेखक स्किडमोर ने निर्णय लेने में कई कठिनाइयों को सूचीबद्ध किया है।

- निर्णय लेना एक समयबद्ध प्रक्रिया है और निर्णयकर्ता को कार्रवाई की आवश्यकता होती है। यदि निर्णय लेने वाला निर्णय लेने में अधिक समय लेता है तो परिणाम एक बड़ी असफलता होगी।
- निर्णय लेने वाला मुख्य रूप से समस्या को सरल करता है और इसे सरल बनाने के बाद सही कार्रवाई की संभावनाओं का पता लगाता है।
- समस्या की जटिलता के कारण सही निर्णय लेना संभव नहीं होता पाता और लोगों के व्यवहार का अंदाजा नहीं लगाया जा सकता। प्रकृति की जटिलताओं और लोगों की अप्रत्याशित भावनाओं का ठीक से आकलन नहीं किया जा सकता।
- निर्णय लेने में बार-बार गलतियां करने से कुछ समय के लिए निराशा बढ़ जाती है। जब अलग-अलग कारणों से बार-बार गलतियाँ की जाती हैं तो निर्णय लेने वाला खुद को असहाय और निराश महसूस करता है। उचित प्रणाली की कमी या पक्षपात भ्रष्टाचार भाई-भतीजावाद के कारण निर्णय लेने के समय अस्वास्थ्यकर स्थिति पैदा हो गई।

---

### 3.4 संचार: अर्थ और अवधारणा

---

संचार संबंध स्थापित करता है और आयोजन को संभव बनाता है।

हर संदेश का एक उद्देश्य या उद्देश्य होता है। प्रेषक का इरादा है - चाहे होशपूर्वक या अनजाने में - संप्रेषण द्वारा कुछ पूरा करना। संगठनात्मक संदर्भों में संदेशों का आमतौर पर एक निश्चित उद्देश्य होता है: प्रेरित करना सूचित करना सिखाना राजी करना मनोरंजन करना या प्रेरित करना। यह निश्चित उद्देश्य वास्तव में आकस्मिक बातचीत और प्रबंधकीय संचार के बीच मुख्य अंतरों में से एक है। संगठन के लक्ष्यों और मिशन का समर्थन करने वाले अच्छी तरह से परिभाषित उद्देश्यों पर संगठन केंद्रों में प्रभावी संचार। पर्यवेक्षक अपने संचार के लिए पार्टियों के बीच समझ हासिल करने का प्रयास करते हैं। संगठनात्मक संचार सूचना को लंबवत और क्षैतिज रूप से ले जाने के लिए औपचारिक संचार चैनलों का एक पैटर्न स्थापित करता है। (संगठन चार्ट इन चैनलों को प्रदर्शित करता है।) उद्देश्यों की कुशल और प्रभावी उपलब्धि सुनिश्चित करने के लिए सूचनाओं का आदान-प्रदान किया जाता है। सूचनाओं को कर्मचारियों से लेकर पर्यवेक्षकों तक और बाद में आसन्न विभागों तक पहुँचाया जाता है। विभाग के कार्य-निष्पादन और व्यवसाय संचालन की नीतियों से संबंधित निर्देश पर्यवेक्षकों से लेकर कर्मचारियों तक नीचे की ओर भेजे जाते हैं। संगठन विभाग के भीतर से लेकर शीर्ष प्रबंधन तक की जानकारी वहन करता है। प्रबंधन इस बारे में जानकारी देता है कि चीजें कैसे चल रही हैं पर्यवेक्षक को समस्याओं के बारे में सूचित करता है और स्पष्टीकरण और सहायता के लिए अनुरोध प्रदान करता है। पर्यवेक्षक बदले में अपने कर्मचारियों को सूचित करते हैं और सहायता प्रदान करते हैं। पर्यवेक्षक आवश्यक स्पष्टीकरण और समस्या समाधान प्राप्त करने की प्रक्रिया को लगातार सुविधाजनक बनाते हैं संगठन के ऊपर और नीचे दोनों। इसके अलावा पर्यवेक्षक संगठन के बाहर के स्रोतों जैसे विक्रेताओं और ग्राहकों के साथ संवाद करते हैं। संचार वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक प्रेषक से एक प्राप्तकर्ता को एक संदेश या सूचना का आदान-प्रदान किया जाता है। उदाहरण के लिए एक उत्पादन प्रबंधक (प्रेषक) एक बिक्री प्रबंधक (प्राप्तकर्ता) को एक संदेश भेज सकता है जिसमें अगले 6 महीनों के लिए बिक्री के पूर्वानुमान मांगे जा सकते हैं ताकि वे उत्पादन स्तर की योजना बना सकें। बिक्री प्रबंधक तब उचित

आंकड़ों के साथ उत्पादन प्रबंधक को उत्तर (फीडबैक) देगा। यह आंतरिक संचार का एक उदाहरण है अर्थात जब किसी व्यवसाय के कर्मचारियों के बीच संचार होता है।

### 3.4.1 संचार की परिभाषाएँ

संचार उन सभी चीजों का योग है जो एक व्यक्ति तब करता है जब वह दूसरे के दिमाग में समझ पैदा करना चाहता है। इसमें कहने, सुनने और समझने की एक व्यवस्थित और सतत प्रक्रिया शामिल है।

**लुई ए एलन** संचार को उस प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसके माध्यम से दो या दो से अधिक व्यक्ति आपस में विचारों और समझ का आदान-प्रदान करते हैं। संचार शब्द एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक संदेशों (तथ्यों विचारों दृष्टिकोणों और मतों) को पहुँचाने की प्रक्रिया का वर्णन करता है ताकि उन्हें समझा जा सके।

**कमिंग** संचार वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा भाषण संकेत या क्रियाएं एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक जानकारी पहुंचाती हैं। यह परिभाषा संक्षिप्त और निश्चित है लेकिन इसमें संचार के सभी पहलुओं को शामिल नहीं किया गया है। अन्य परिभाषाएँ भी हैं जो बताती हैं कि संचार में एक पक्ष से दूसरे पक्ष को सूचना प्रसारित करना शामिल है। इस व्यापक परिभाषा के लिए यह आवश्यक नहीं है कि प्राप्त करने वाला पक्ष संदेश की पूर्ण समझ प्राप्त करे। बेशक संचार तब बेहतर होता है जब दोनों पक्ष समझते हैं ... लेकिन यह अभी भी उस घटक के बिना मौजूद हो सकता है संचार मौखिक और गैर मौखिक संदेशों को प्रसारित करने और प्राप्त करने की एक प्रक्रिया है जो एक प्रतिक्रिया उत्पन्न करती है। संचार को प्रभावी माना जाता है जब यह वांछित प्रतिक्रिया या रिसीवर से प्रतिक्रिया प्राप्त करता है बस कहा गया है संचार मनुष्यों के बीच विचारों या सूचनाओं के आदान-प्रदान की एक दो तरह की प्रक्रिया है।

संचार को उस प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसके माध्यम से दो या दो से अधिक व्यक्ति आपस में विचारों और समझ का आदान-प्रदान करने आते हैं। संचार दृश्य की नहीं अपितु



अदृश्य और गुप्त की समझ है। संस्कृति में निहित ये छिपे हुए और प्रतीकात्मक तत्व दृश्य संचार प्रक्रिया को अर्थ देते हैं। समान रूप से यदि अधिक महत्व नहीं है तो यह तथ्य है कि संचार एक व्यक्तिगत प्रक्रिया है जिसमें व्यवहारों का आदान-प्रदान शामिल है।

इनवानसेविच और मैटेसन ने कहा कि लोगों के बीच संचार प्रौद्योगिकी पर निर्भर नहीं है बल्कि लोगों और उनके आसपास की शक्तियों पर निर्भर करता है। यह एक प्रक्रिया है जो लोगों के भीतर होती है। संचार के प्रकार या तंत्र से कोई फर्क नहीं पड़ता। संचार के प्रत्येक उदाहरण में एक संदेश होना चाहिए जो प्रेषक से रिसीवर तक स्थानांतरित किया जा रहा हो। संचार सफल होने के लिए प्रेषक और रिसीवर के पास एक दूसरे के साथ कुछ संकेत शब्द या संकेत होने चाहिए ताकि भेजे गए संदेश को समझा जा सके।

### 3.4.2 संचार प्रक्रिया

संचार एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को जानकारी और समझ देने की प्रक्रिया है। संचार प्रक्रिया में छह मूल तत्व शामिल होते हैं: प्रेषक (एनकोडर), संदेश, चैनल, रिसीवर (डिकोडर), शोर और प्रतिक्रिया। पर्यवेक्षक इन तत्वों से अवगत होकर संचार कौशल में सुधार कर सकते हैं और वे कैसे सफल संचार में योगदान करते हैं। इनमें से किसी एक तत्व पर संचार टूट सकता है। संचार के विभिन्न मॉडलों में से, जिनकी चर्चा पिछले पृष्ठों में की गई है, संचार का इंटरएक्टिव मॉडल संचार के सबसे अधिक उपयोग किए जाने वाले, चर्चित और कार्यान्वित मॉडल में से एक है। संचार प्रक्रिया का मॉडल निम्नानुसार दर्शाया गया है:

प्रेषक एनकोड करता है प्रेषक संचार प्रक्रिया शुरू करता है। जब प्रेषक ने एक अर्थ तय कर लिया है, तो वह एक संदेश को एनकोड करता है और एक रिसीवर को संदेश भेजने के लिए एक चैनल का चयन करता है। सांकेतिक शब्दों में बदलना एक संदेश को शब्दों या छवियों में डालना है। संदेश वह सूचना है जिसे प्रेषक प्रेषित करना चाहता है। माध्यम संचार का साधन है, जैसे प्रिंट, मास, इलेक्ट्रिकल और डिजिटल। एक प्रेषक

के रूप में, पर्यवेक्षक को संदेश के उद्देश्य को परिभाषित करना चाहिए, प्रत्येक संदेश को प्राप्तकर्ता को ध्यान में रखकर बनाना चाहिए, सर्वोत्तम माध्यम का चयन करना चाहिए, प्रत्येक प्रसारण को सोच-समझकर करना चाहिए, और प्रतिक्रिया प्राप्त करनी चाहिए। एक बाहरी उत्तेजना प्रेषक को संदेश भेजने के लिए प्रेरित करती है। यह संकेत कई तरीकों से आ सकता है: पत्र, ईमेल, फैक्स आदि। जैसा कि प्रेषक संदेश के लिए विचारों के बारे में सोचता है, वह अपने बाहरी वातावरण में विभिन्न स्थितियों - भौतिक परिवेश, मौसम, शोर, असुविधाओं, सांस्कृतिक पर भी प्रतिक्रिया करता है। सीमा शुल्क और अन्य। अगला, आंतरिक उत्तेजनाओं का एक जटिल प्रभाव होता है कि प्रेषक विचारों को संदेश में कैसे अनुवादित करता है। जब प्रेषक एनकोड करता है, तो उसके अपने अनुभव की दुनिया, उसके प्रतीकों की पसंद को प्रभावित करती है - मानसिक, शारीरिक, मनोवैज्ञानिक, शब्दार्थ। दृष्टिकोण, राय, भावनाएं, पिछले अनुभव, पसंद और नापसंद, शिक्षा, नौकरी की स्थिति और संचार कौशल भी प्रेषक द्वारा विचारों को संप्रेषित करने के तरीके को प्रभावित कर सकते हैं। रिसीवर के दृष्टिकोण, जरूरतों, कौशल, स्थिति, मानसिक क्षमता और अनुभव की धारणा और विचार भी विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं।

### **प्रेषक-एनकोडर**

बाहरी वातावरण आंतरिक उत्तेजना (अनुभव, दृष्टिकोण, कौशल)

धारणा विचार

एन्कोडिंग

प्रतीक निर्णय

तंत्र भेजना

शब्द मौखिक - लिखित और बोले जा सकते हैं। शब्दों का उपयोग चित्र बनाने के लिए किया जाता है और कहानियों (परिदृश्य) का उपयोग भागीदारी बनाने के लिए किया जाता है। लिखित संचार का उपयोग तब

किया जाना चाहिए जब स्थिति औपचारिक, आधिकारिक या दीर्घकालिक हो; या जब स्थिति कई लोगों को संबंधित तरीकों से प्रभावित करती है। इंटरऑफिस मेमो का उपयोग अनौपचारिक पूछताछ या उत्तर रिकॉर्ड करने के लिए किया जाता है। पत्र स्वर में औपचारिक होते हैं और एक व्यक्ति को संबोधित करते हैं। उनका उपयोग आधिकारिक सूचनाओं, औपचारिक रूप से रिकॉर्ड किए गए बयानों और लंबे संचार के लिए किया जाता है। रिपोर्ट एक पत्र की तुलना में अधिक अवैयक्तिक और अधिक औपचारिक हैं। उनका उपयोग सूचना, विश्लेषण और सिफारिशों को संप्रेषित करने के लिए किया जाता है। समूहों के लिए लिखित संचार में बुलेटिन-बोर्ड नोटिस, पोस्टर, प्रदर्शन, डिस्प्ले और ऑडियो और विजुअल एड्स शामिल हैं। संचार और सूचनाओं के आदान-प्रदान की आवश्यकता अब स्थान और समय से विवश नहीं है। ईमेल, वॉयस मेल और फैक्स ने संचार और ज्ञान के आदान-प्रदान की सुविधा प्रदान की है। ईमेल लिखित संदेशों का कंप्यूटर प्रसारण और भंडारण है। वॉयस मेल डिजीटल बोले गए संदेशों का प्रसारण और भंडारण है। फैक्सिमाइल (फैक्स) दस्तावेजों का प्रसारण है। मौखिक या बोले गए संचार में अनौपचारिक कर्मचारी बैठकें, नियोजित सम्मेलन और सामूहिक बैठकें शामिल हैं। आवाज और वितरण महत्वपूर्ण हैं। अनौपचारिक बातचीत दिन-प्रतिदिन के संपर्क, निर्देशों, आदान-प्रदान या सूचनाओं, प्रगति की समीक्षा और प्रभावी पारस्परिक संबंधों के रखरखाव के लिए उपयुक्त हैं। नियोजित नियुक्तियाँ नियमित मूल्यांकन समीक्षा और आवर्ती संयुक्त कार्य सत्रों के लिए उपयुक्त हैं। नियुक्ति के लिए योजना बनाने में तैयारी करना, पर्याप्त जानकारी लाना और व्यवधानों को सीमित करना शामिल है। टेलीफोन कॉल का उपयोग त्वरित जांच और सूचना देने या प्राप्त करने के लिए किया जाता है। सूचना प्रौद्योगिकी का उपयोग करने वाली टीमों के पास सूचना तक पहुंच, ज्ञान साझा करना और दस्तावेजों का निर्माण करना है। बैठकें कई स्थानों से इलेक्ट्रॉनिक रूप से होती हैं, संगठन के संसाधनों को अलग-अलग स्थानों से लोगों को भौतिक रूप से एक साथ लाने के खर्चों की बचत होती है, और यात्रा करने वाले कर्मचारियों के समय की हानि होती है। टेलीकांफ्रेंसिंग एक साथ समूह मौखिक आदान-प्रदान है। वीडियोकांफ्रेंसिंग समूह मौखिक और

दृश्य आदान-प्रदान है।

अशाब्दिक संचार अशाब्दिक संदेशों में संवाद करने के लिए उपयोग की जाने वाली छवियां, क्रियाएं और व्यवहार शामिल हैं। छवियों में फ़ोटोग्राफ़, फ़िल्म, चार्ट, तालिकाएँ, ग्राफ़ और वीडियो शामिल हैं। अशाब्दिक व्यवहार में कार्य, शरीर की भाषा और सक्रिय सुनना शामिल है। क्रियाओं और हाव-भाव में आँख से संपर्क, हावभाव, चेहरे के भाव, मुद्रा और दिखावट शामिल हैं। प्रभावी कम्युनिकेटर दूर देखने से पहले चार से पांच सेकंड के लिए आँख से संपर्क बनाए रखता है। इशारों को स्वाभाविक और समय पर होना चाहिए। स्थिति के लिए सौंदर्य और पोशाक उपयुक्त होनी चाहिए। सुनने के लिए अच्छे नेत्र संपर्क, सतर्क शारीरिक मुद्रा और मौखिक प्रोत्साहन के लगातार उपयोग की आवश्यकता होती है।

चैनल वह पथ है जो प्रेषक से प्राप्तकर्ता तक संदेश का अनुसरण करता है। कर्मचारियों को संदेश भेजने के लिए पर्यवेक्षक नीचे की ओर चैनल का उपयोग करते हैं। पर्यवेक्षकों को संदेश भेजने के लिए कर्मचारी अपवर्ड चैनल का उपयोग करते हैं। क्षैतिज चैनलों का उपयोग विभागीय लाइनों में, आपूर्तिकर्ताओं के साथ, या ग्राहकों के साथ संचार करते समय किया जाता है। एक अनौपचारिक चैनल ग्रेपवाइन है। यह औपचारिक चैनलों के बाहर मौजूद है और लोगों द्वारा काम पर आकस्मिक, व्यक्तिगत और सामाजिक आदान-प्रदान को प्रसारित करने के लिए उपयोग किया जाता है। अंगूर की बेल में अफवाहें, गपशप और सच्ची जानकारी होती है। पर्यवेक्षक को अंगूर की बेल पर ध्यान देना चाहिए, लेकिन सटीक जानकारी के लिए उस पर निर्भर नहीं रहना चाहिए।

रिसीवर डिकोड करता है सूचना प्रौद्योगिकी संगठनात्मक सदस्यों के संवाद करने के तरीके में क्रांति ला रही है। नेटवर्क सिस्टम, एक संगठन के कंप्यूटर हार्डवेयर और सॉफ्टवेयर के बीच इलेक्ट्रॉनिक लिंक, सदस्यों को किसी भी समय, कहीं से भी जानकारी प्राप्त करने और साझा करने के लिए तत्काल संवाद करने में सक्षम बनाता है। रिसीवर वह व्यक्ति या समूह है जिसके लिए संचार प्रयास का इरादा है। शोर कुछ भी है जो संचार में बाधा डालता है। प्रतिक्रिया सुनिश्चित करती है कि संचार में

आपसी समझ बनी है। यह प्राप्तकर्ता से वापस प्रेषक को सूचना का हस्तांतरण है। प्राप्तकर्ता संदेश को डिकोड करता है या उसका अर्थ निकालता है। इस प्रकार, फीडबैक लूप में, प्राप्तकर्ता प्रेषक बन जाता है और प्रेषक प्राप्तकर्ता बन जाता है। प्राप्तकर्ता और साथ ही प्रेषक अशाब्दिक कारकों जैसे स्पर्श, स्वाद और गंध से प्रभावित होते हैं। ये सभी कारक व्यक्तिगत अनुभवों के अनुसार व्याख्या की मांग करते हैं।

रिसीवर - डिकोडर

रिसीवर - डिकोडर

बाहरी वातावरण

आंतरिक उत्तेजना

(अनुभव, दृष्टिकोण, कौशल)

रिसेप्टर तंत्र

धारणा डिकोडिंग

विचार व्याख्या

## बोध प्रश्न

1. संचार को परिभाषित करें?
2. संचार प्रक्रिया की व्याख्या करिए ?
3. निर्णय लेने का अर्थ और परिभाषा का वर्णन करे ↓?

---

## 3.6 सारांश

---

निर्णय लेना एक नियमित गतिविधि है जिसका अर्थ है कि दिन-प्रतिदिन की गतिविधियों के अनुसार निर्णय लेना। स्थिति के दृष्टिकोण से जब ऐसी स्थिति उत्पन्न होती है, उसके अनुसार निर्णय लिया जा सकता है। निर्णय रचनात्मक या अभिनव हो सकता है, यह गतिविधियों को बढ़ावा दे सकता है। प्रायोगिक उद्देश्य के लिए निर्णय लिया जा सकता है।

## 3.6 पारिभाषिक शब्दावली

---

**डिकोडर:** किसी संदेश का डिकोडिंग यह है कि एक दर्शक सदस्य कैसे संदेश को समझने और उसकी व्याख्या करने में सक्षम होता है। यह एक बोधगम्य रूप में कोडित जानकारी की व्याख्या और अनुवाद की एक प्रक्रिया है। दर्शक प्रतीकों को अर्थ देकर और संदेशों को समग्र रूप से व्याख्या करके विचार को फिर से बनाने की कोशिश कर रहे हैं।

**प्रेषक-एनकोडर:** कोडिंग की प्रक्रिया में, प्रेषक (यानी एनकोडर) मौखिक (जैसे शब्द, संकेत, चित्र, वीडियो) और गैर-मौखिक (जैसे शरीर की भाषा, हाथ के इशारे, चेहरे के भाव) प्रतीकों का उपयोग करता है जिसके लिए वह रिसीवर पर विश्वास करता है (कि है, डिकोडर) समझ जाएगा।

**एन्कोडिंग:** एन्कोडिंग विचारों को संचार में बदलने की प्रक्रिया है। संदेश भेजने के लिए एनकोडर एक 'माध्यम' का उपयोग करता है - एक फोन कॉल, ईमेल, पाठ संदेश, आमने-सामने बैठक, या अन्य संचार उपकरण। सचेतन विचार का स्तर जो संदेशों को कूटबद्ध करने में जाता है, भिन्न हो सकता है।

---

## 3.7 संदर्भित पुस्तकें

---

- संचार कौशल और व्यक्तित्व विकास [हिंदी] (पेपरबैक सरजू नारायण सागर मंडल)
- सप्रेषण कला- अरुण चतुर्वेदी केन्द्रीय हिन्दी संस्थान आगरा

---

## 3.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

---

1. संचार की परिभाषाएँ
2. संचार प्रक्रिया:
3. निर्णय लेने का अर्थ और परिभाषा

# इकाई 4 वित्तीय प्रशासन निगरानी और मूल्यांकन

## इकाई की रूपरेखा

### 4.0 उद्देश्य

#### 4.1 प्रस्तावना

#### 4.2 वित्तीय प्रशासन की परिभाषा

##### 4.2.1 वित्तीय प्रशासन का दायरा

#### 4.3 वित्तीय प्रशासन: महत्व

##### 4.3.1 वित्तीय प्रशासन: सिद्धांत

#### 4.4 निगरानी और मूल्यांकन: अवधारणा

##### 4.4.1 एम एंड ई का उद्देश्य

##### 4.4.2 एम एंड ई का महत्व

#### 4.5 सारांश

#### 4.6 पारिभाषिक शब्दावली

#### 4.7 संदर्भित पुस्तकें

#### 4.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

---

## **4.0 उद्देश्य**

---

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप: वित्तीय प्रशासन की प्रकृति की व्याख्या कर सकेंगे; इसके दायरे की जांच करें; इसके महत्व पर चर्चा करें; और वित्तीय प्रशासन के सिद्धांतों का वर्णन कर सकेंगे। पाठक परिभाषा और निगरानी और मूल्यांकन के बीच के अंतर को समझने में सक्षम होंगे। शिक्षार्थी समाज कल्याण एजेंसियों में निगरानी और मूल्यांकन के उद्देश्य के बारे में जानेंगे। शिक्षार्थी को निगरानी और मूल्यांकन चक्र के महत्व की बुनियादी समझ होगी।

## 4.1 प्रस्तावना

---

वित्तीय प्रशासन सार्वजनिक धन के अध्ययन से संबंधित है। सभी सरकारी गतिविधियों को धन के साथ किया जाता है जो अपने नागरिकों से करों और सार्वजनिक क्षेत्र के संगठनों से मुनाफे के माध्यम से एकत्र किया जाता है। इसलिए, वित्तीय प्रशासन का अध्ययन वित्त और कराधान से संबंधित है, जिसमें संघ और राज्य स्तर पर विभाग और एजेंसियां शामिल हैं, जो बजट, कर संग्रह, प्रशासनिक प्रणाली, संवितरण प्रणाली, लेखा, ऋण और उधार, प्रशासन और लेखा परीक्षा से संबंधित हैं। यह इकाई शिक्षार्थियों को वित्तीय प्रशासन की प्रकृति, कार्यक्षेत्र, महत्व और सिद्धांतों से परिचित कराती है। एम एंड ई के रूप में लोकप्रिय निगरानी और मूल्यांकन परियोजना प्रबंधन में उपयोग की जाने वाली बहुत महत्वपूर्ण तकनीकों का एक सेट है। ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी के अनुसार, मॉनिटरिंग किसी प्रक्रिया या गतिविधि का सावधानीपूर्वक निरीक्षण है ताकि यह जांचा जा सके कि यह निष्पक्ष रूप से किया गया है। दूसरी ओर मूल्यांकन, किए गए कार्य की मात्रा, मूल्य या गुणवत्ता के बारे में एक राय है। नागरिकों, विशेष रूप से वंचित समूहों के कल्याण में सुधार लाने के उद्देश्य से सामाजिक कार्यक्रमों और नीतियों के प्रभाव को मापने के लिए 1990 के दशक के दौरान व्यवस्थित प्रक्रियाओं के रूप में कार्यक्रम मूल्यांकन और निगरानी विकसित हुई। समाज कल्याण प्रशासन में, निगरानी और मूल्यांकन बहुत महत्वपूर्ण हैं। लगभग सभी एनजीओ अपनी परियोजनाओं में किसी न किसी प्रकार की निगरानी और मूल्यांकन उपकरणों का उपयोग करते हैं। कार्य की निगरानी और मूल्यांकन आंतरिक कर्मियों या बाहरी एजेंसियों द्वारा किया जाता है।

---

## 4.2 वित्तीय प्रशासन की परिभाषा

---

**कौटिल्य:** राज्य की सभी गतिविधियां पहले राजकोष पर निर्भर करती हैं। इसलिए, एक राजा को अपना सर्वश्रेष्ठ इरादा इसके लिए समर्पित करना चाहिए। एक खाली खजाने वाली प्रणाली नागरिकों और देश की जीवन शक्ति को खा जाती है।



**एल.डी वाइट:** राजकोषीय प्रबंधन में वे कार्य शामिल हैं जिन्हें अधिकारियों को धन उपलब्ध कराने और उनके वैध और कुशल उपयोग को सुनिश्चित करने के लिए डिज़ाइन किया गया है।

**जाजे गास्तों:** वित्तीय प्रशासन सरकारी संगठन का वह भाग है जो सार्वजनिक धन के संग्रह, संरक्षण और वितरण से संबंधित है, सार्वजनिक राजस्व और व्यय के समन्वय के साथ, राज्य की ओर से ऋण संचालन के प्रबंधन के साथ और सामान्य नियंत्रण के साथ सार्वजनिक घर के वित्तीय मामले।

**ऍम.एस केंद्रिक:** वित्तीय प्रशासन अर्थव्यवस्था के प्रबंधन और देश में सामाजिक आर्थिक विकास के लिए भुगतानों को संतुलित करने, बजट की तैयारी, विभिन्न राजस्व संसाधनों को प्रशासित करने की विधि, सार्वजनिक धन की अभिरक्षा, धन खर्च करने की प्रक्रिया, वित्तीय रिकॉर्ड रखने और रखने के सभी पहलुओं को शामिल करता है। पसन्द। लोक वित्त के संचालन के प्रभावी संचालन के लिए ये कार्य महत्वपूर्ण हैं।

**दिमोक:** वित्तीय प्रशासन में चरणों की एक श्रृंखला शामिल होती है जिसके द्वारा धन को उनके कानूनी और कुशल उपयोग को सुनिश्चित करने के लिए कुछ आधिकारिक प्रक्रियाओं के माध्यम से उपलब्ध कराया जाता है। मुख्य सामग्री बजट, लेखा परीक्षा और खरीद और आपूर्ति हैं।

उपर्युक्त सभी परिभाषाओं से निष्कर्ष निकालने के लिए, वित्तीय प्रशासन किसी देश की वित्तीय प्रणालियों, प्रक्रियाओं और प्रक्रियाओं का अध्ययन है। वित्तीय प्रशासन की प्रकृति के संबंध में, इस बात पर हमेशा बहस होती रही है कि विषय विज्ञान है या कला। इस बात पर सहमति बनी है कि यह सर्वोत्तम रूप से एक सामाजिक विज्ञान है।

वित्तीय प्रशासन के वास्तविक स्वरूप को निर्धारित करने के लिए विज्ञान या कला होने के पक्ष और विपक्ष में तर्क नीचे दिए गए हैं:

वित्तीय प्रशासन के विज्ञान होने के पक्ष में तर्क: वित्तीय प्रशासन विज्ञान और कला की सीमा से लगा हुआ विषय है।

नीचे दिए गए आधार हैं कि विद्वान इसे विज्ञान क्यों मानते हैं:

**1. प्रणाली:** प्रत्येक विज्ञान को तभी माना जाता है जब वह व्यवस्थित

हो और कारण और प्रभाव के बीच संबंधों का विश्लेषण करता हो। वित्तीय प्रशासन का विषय गतिविधियों को इस तरह से करता है जो सटीकता और तथ्यों को दर्शाता है। यह सरकार के राजस्व और व्यय के बीच संबंध को निर्धारित करता है।

2. **निश्चितता:** सार्वजनिक वित्त तथ्यों के साथ निश्चित ज्ञान का अध्ययन करता है और मानव ज्ञान के बारे में सब कुछ जानने और अध्ययन करने का दावा नहीं करता है।
3. **सिद्धांत:** यह वित्तीय प्रशासन में अपनाई जाने वाली सर्वोत्तम प्रथाओं का अध्ययन और निर्माण करता है, जिससे उन्हें अनुशासन के सिद्धांतों के रूप में स्थापित किया जाता है।
4. **वैज्ञानिक तरीके:** वित्तीय प्रशासन सार्वजनिक वित्त के सभी चार पहलुओं का अध्ययन करने के लिए वैज्ञानिक तरीकों का उपयोग करता है जो सार्वजनिक राजस्व, सार्वजनिक व्यय, सार्वजनिक ऋण और वित्तीय प्रशासन हैं।
5. **अनुभवजन्य:** वित्तीय प्रशासन अपने अध्ययन को आधार बनाता है और अनुभवजन्य विश्लेषण पर अवधारणाओं, सिद्धांतों, प्रक्रियाओं और प्रक्रियाओं का विश्लेषण करता है। यहाँ यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि वित्तीय प्रशासन एक विज्ञान है क्योंकि यह सभी का उपयोग करता है

#### 4.2.1 वित्तीय प्रशासन: कार्यक्षेत्र

कौटिल्य ने कई सदियों पहले कहा था कि पूरे देश को वित्तीय प्रशासन द्वारा प्रबंधित किया जा सकता है। यह वर्तमान समय में भी सत्य है, आधुनिक लोकतंत्रों में सरकारों को अपनी गतिविधियों में आश्चर्यजनक वृद्धि का सामना करना पड़ रहा है, जो केवल वित्त द्वारा ही किया जा सकता है। इस कार्य को मितव्ययता, दक्षता और प्रभावशीलता के साथ करने के लिए ध्वनि प्रशासन की आवश्यकता है। गतिविधियों की सीमा सूचना और प्रौद्योगिकी के युग के साथ चौड़ी हो गई है जिसने दुनिया को एक साथ ला दिया है। वैश्विक बाजार सरकारों द्वारा प्रबंधित किया जाने वाला एक अभिन्न अंग बन गया है क्योंकि ई-

कॉमर्स का आकार भी बढ़ गया है। वित्त हर सरकारी कार्रवाई की जीवनदायिनी है और वित्तीय प्रशासन का दायरा व्यापक है। इसके दायरे में आने वाले क्षेत्र नीचे दिए गए हैं:

- 1. सार्वजनिक क्षेत्र के संगठन (PSUs):** PSUs का प्रबंधन सरकारी धन से किया जाता है और लाभ कमाने के लिए व्यवसाय करते हैं ताकि इसका उपयोग नागरिकों के कल्याण के लिए किया जा सके। वित्तीय प्रशासन यह सुनिश्चित करता है कि पीएसयू बिना किसी अक्षमता के सुचारू रूप से चल रहे हैं।
- 2. सार्वजनिक राजस्व:** वित्तीय प्रशासन कर और गैर-कर चैनलों के माध्यम से राजस्व एकत्र करने के लिए प्रक्रियाएँ और प्रक्रियाएँ बनाता है। आर्थिक विकास और विकास को प्राप्त करने के लिए राजस्व लोक वित्त और प्रशासन का सबसे महत्वपूर्ण परिचय है, उदाहरण के लिए वर्तमान संदर्भ में, सतत विकास लक्ष्यों, 2030 की प्राप्ति। भारत विकास के सभी सूचकांकों पर बहुत नीचे है और मांगों को पूरा करने के लिए अपने राजस्व में वृद्धि करने की आवश्यकता है।
- 3. सार्वजनिक व्यय:** सरकारों का उत्तरदायित्व होता है कि वे संचित सार्वजनिक राजस्व से विकासात्मक लक्ष्यों को पूरा करने पर व्यय करें। ऐसा करने के लिए, यह सुनिश्चित करना होगा कि बजट प्रक्रिया विधायिका द्वारा अनिवार्य प्रक्रियाओं के अनुसार की जाती है। कानूनी आवंटन के बिना कोई भी राशि खर्च नहीं की जा सकती है या उचित कारण के बिना खर्च नहीं की जा सकती है।
- 4. विधायी नियंत्रण:** सार्वजनिक व्यय अपनी संसदीय समितियों के विधायी नियंत्रण के अधीन है। भारत में, तीन प्रमुख समितियाँ हैं - लोक लेखा समिति, प्राक्कलन समिति और सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों की समिति - जो सार्वजनिक धन के उचित उपयोग पर नियंत्रण रखती हैं और यह सुनिश्चित करती हैं कि कोई दुर्विनियोजन न हो। हम इन समितियों के बारे में पाठ्यक्रम की अगली इकाइयों में विस्तार से चर्चा करेंगे।
- 5. संसाधन जुटाना:** वित्तीय प्रशासन इस बात का ध्यान रखता है कि

विकासात्मक निधियों के लिए आवश्यक संसाधनों को पीएसयू के उचित प्रबंधन और राजस्व संग्रह के माध्यम से जुटाया जाए। अधिक लाभ और बाद में अधिक राजस्व प्राप्त करने के लिए व्यवसाय के अवसरों को बढ़ाने के लिए वातावरण को अनुकूल बनाया जाना चाहिए। अतिरिक्त राजस्व का उपयोग बेहतर सुविधाओं और सामाजिक और भौतिक बुनियादी ढांचे के लिए किया जा सकता है।

6. **लेखांकन और लेखा परीक्षा:** वित्तीय प्रशासन उन मदों के लेखांकन में काम करता है जिन पर यह सुनिश्चित करने के लिए सार्वजनिक धन खर्च किया गया था कि विनियोजित धन का उपयोग निर्दिष्ट उद्देश्य पर किया गया था। लेखांकन की प्रक्रिया पूरी होने के बाद, भारत के नियंत्रक और महालेखा परीक्षक यह सुनिश्चित करने के लिए खातों की लेखापरीक्षा करते हैं कि कोई दुर्विनियोजन नहीं हुआ है।
7. **ईज ऑफ डूइंग बिजनेस:** आज सरकारों की जिम्मेदारी है कि वे बाजार अर्थव्यवस्था में ईज ऑफ डूइंग बिजनेस को बढ़ाएं ताकि वैश्विक बाजार में देश की आर्थिक वृद्धि बढ़े। ई-कॉमर्स के विकास के लिए व्यापार के नए तरीकों को समायोजित करने के लिए राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों की आवश्यकता होती है। आर्थिक विकास में बाधा डालने वाली बाधाओं के बिना एक वातावरण बनाने की जिम्मेदारी वित्तीय प्रशासन की है।

---

### 4.3 वित्तीय प्रशासन: महत्व और सिद्धांत

---

वित्तीय प्रशासन, सामान्य शब्दों में, सार्वजनिक राजस्व के संग्रह और लोक प्रशासन पर खर्च से संबंधित है। आर्थिक विकास और समावेशी विकास सुनिश्चित करने के लिए सरकार की वित्तीय गतिविधियों को वित्तीय प्रशासनिक संरचना द्वारा प्रबंधित किया जाता है। जैसा कि लोक प्रशासन विद्वानों द्वारा स्थापित किया गया है, यह किसी भी अर्थव्यवस्था की जीवनदायिनी है; यह अर्थव्यवस्था के स्वास्थ्य और विकास को प्रभावित करता है। देश की सामाजिक आर्थिक स्थिति को मजबूत करने के लिए एक अच्छा वित्तीय प्रशासन कई मायनों में

महत्वपूर्ण है।

नीचे दिए गए वित्तीय प्रशासन के महत्व को इंगित करने के औचित्य हैं:

- 1. आर्थिक गतिविधि:** किसी राष्ट्र में वित्तीय क्षेत्र किसी अर्थव्यवस्था का सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्र होता है। वित्तीय प्रशासन इस बात का ध्यान रखता है कि किसी देश में अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देने और बनाए रखने के लिए पर्याप्त अनुपात में वित्त उत्पन्न हो।
- 2. सार्वजनिक व्यय का राष्ट्रीय आय से समायोजन –** सरकार के क्रियाकलापों में वृद्धि के साथ-साथ सार्वजनिक व्यय के राष्ट्रीय आय के अनुपात को समायोजित करने की आवश्यकता होती है जो कि वित्तीय प्रशासन द्वारा किया जाता है।
- 3. सरकारी मशीनरी का प्रशासन:** सरकार को सुशासन देने के लिए धन की आवश्यकता होती है जिसके लिए वित्त के सुदृढ़ प्रशासन की भी आवश्यकता होती है। कर्मियों के वेतन भुगतान, सरकारी विभागों और एजेंसियों के कार्यालयों और उनके कार्यक्रमों और परियोजनाओं को चलाने के लिए धन की आवश्यकता होती है।
- 4. ऑपरेटिंग सिस्टम:** ऑपरेटिंग सिस्टम को अर्थव्यवस्था के साथ काम करने के लिए कुशलतापूर्वक काम करना चाहिए। किसी एजेंसी के प्रत्येक निर्णय के वित्तीय परिणाम होते हैं जिसके लिए विवेकपूर्ण वित्तीय प्रशासन की आवश्यकता होती है।
- 5. राष्ट्रीय उद्देश्य:** हर सरकार ने अपनी नीतियों के अनुरूप लक्ष्यों को परिभाषित किया है। इस तरह के उद्देश्यों को तभी पूरा किया जा सकता है जब उन्हें बढ़े हुए योजना परिव्यय के साथ धन का समर्थन प्राप्त हो। इसलिए, वित्तीय प्रशासन सरकार के लक्ष्यों की प्राप्ति की सुविधा प्रदान करता है।
- 6. सामाजिक-आर्थिक उत्थान:** जैसे-जैसे अधिक राष्ट्रीय उद्देश्य प्राप्त होते हैं, विकासात्मक कार्य लोगों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति को ऊपर उठाने में मदद करते हैं। वे बेहतर जीवन स्तर प्राप्त करने में सक्षम होंगे।
- 7. अपव्यय में कमी:** वित्तीय प्रशासन धन और संसाधनों की बर्बादी

को कम करने के लिए सामग्री प्रबंधन के विभिन्न उपकरणों का उपयोग करता है।

8. **संसाधन सृजन:** सरकारी वित्त के सुदृढ़ प्रशासन से आंतरिक और बाह्य संसाधनों का सृजन होता है।
9. **सार्वजनिक ऋण और सार्वजनिक उधार:** वित्तीय प्रशासन सार्वजनिक ऋण और उधार लेने से व्यवस्थित रूप से व्यवहार करता है ताकि यह साधनों के भीतर रहे और अर्थव्यवस्था को अस्थिर न करे। ऋण और उधार का कुप्रबंधन एक अस्थिर बाजार की ओर जाता है जो मुद्रास्फीति और कमजोर राजनीतिक अर्थव्यवस्था को जन्म देता है।
10. **राजकोषीय नीति:** वित्तीय प्रशासन अधिक रोजगार पैदा करके, कीमतों को नियंत्रित करके, प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को बढ़ावा देकर और भुगतानों को संतुलित करके आय में क्षेत्रीय असमानताओं को कम करने के लिए राजकोषीय नीति का सहारा लेता है।

#### 4.3.1 वित्तीय प्रशासन के सिद्धांत

यह स्थापित किया गया है कि वित्तीय प्रशासन एक कला के साथ-साथ विज्ञान भी है। यह देश-विशिष्ट सामाजिक-आर्थिक और राजनीतिक स्थितियों के अनुसार आर्थिक विकास और समावेशी विकास को बढ़ावा देने के लिए नीतियां बनाता है। वित्तीय प्रशासन योजनाओं, कार्यक्रमों, परियोजनाओं और गतिविधियों के माध्यम से नीतियों के कार्यान्वयन में आने वाली समस्याओं से निपटता है। हालाँकि, उन्हें तभी प्राप्त किया जा सकता है जब यह ध्वनि सिद्धांतों पर आधारित हो। वे सरकार और अन्य विभागों और एजेंसियों के सामान्य प्रशासन का मार्गदर्शन करते हैं।

नीचे दिए गए वित्तीय प्रशासन के महत्वपूर्ण सिद्धांत हैं जिन पर यह अपनी प्रक्रियाओं को तैयार करता है:

1. **संगठन की एकता:** नीतियों के निष्पादन में सरकारी एजेंसियों की दक्षता को एकीकृत बजट प्रक्रिया के माध्यम से सुधारा जा सकता है। इसमें समन्वय का सिद्धांत भी शामिल है ताकि काम का दोहराव न हो और भौतिक, वित्तीय और मानव संसाधनों का

अपव्यय न हो। केंद्रीकरण का सिद्धांत संगठन की एकता के साथ भी काम करता है। अधिक केंद्रीकृत एजेंसी है, पी.जे.जे. पिंटो, के अनुसार। जितना अधिक यह कुशल है। हालाँकि, निर्णय लेने का विकेंद्रीकरण होना चाहिए ताकि इष्टतम उत्पादकता और उपयोगिता प्राप्त करने के लिए स्थानीय समस्याओं पर विचार किया जा सके।

2. **विधायी नियंत्रण:** संसदीय समितियाँ विनियोग अधिनियम, वित्त अधिनियम, मौद्रिक नीति और अन्य राजकोषीय नीतियों और उपायों के माध्यम से योजनाओं के निर्माण और निष्पादन पर विधायी नियंत्रण रखती हैं। नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक द्वारा लेखा परीक्षा वित्तीय गतिविधियों की निगरानी के लिए एक उपकरण के रूप में कार्य करती है।

3. **राजनीतिक दिशा:** वित्तीय प्रशासन लोक प्रशासन की एक शाखा है और इसे खुद को एक राष्ट्र की राजनीतिक अर्थव्यवस्था के साथ संरेखित करना होता है। विकासशील देशों में जनसंख्या बुनियादी आवश्यकताओं के बिना घोर गरीबी में रहती है जिसके लिए सरकार समावेशी विकास सुनिश्चित करने के लिए नीतियां और योजनाएं बनाती है। वित्तीय प्रशासन को लोगों की सामाजिक आर्थिक समस्याओं को पूरा करने के लिए राष्ट्रीय उद्देश्यों की सुविधा प्रदान करनी चाहिए।

4. **पत्राचार का सिद्धांत:** पत्राचार के सिद्धांत का अर्थ है कि वित्तीय प्रशासन के उद्देश्यों और कार्यों के बीच समानता होनी चाहिए। वित्तीय प्रशासन की गतिविधियों को अंजाम देने की अंतिम जिम्मेदारी जिन अधिकारियों और अधिकारियों की है, उन्हें उचित प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। सूचना और प्रौद्योगिकी के युग में, कर्मियों को नवीनतम तकनीकों का उपयोग करने में सक्षम बनाने के लिए प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। सरकारी विभागों और एजेंसियों के डिजिटलीकरण के लिए अधिकारियों को न केवल परिचित होना बल्कि कम से कम समय में उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए विशेषज्ञ होना भी आवश्यक है।

5. **लोक हित की प्रधानता, लोक चयन एवं लोक नीति :** आर्थिक

वित्तीय प्रशासन : प्रकृति, क्षेत्र, महत्व एवं सिद्धान्त समस्याओं का आधुनिक आर्थिक तंत्रों की सहायता से लोक चयन सिद्धान्त के साथ अध्ययन करने की आवश्यकता है। सार्वजनिक पसंद सिद्धांत राजनेताओं और सरकारी अधिकारियों के व्यवहार और व्यवहार पर ध्यान केंद्रित करता है और दावा करता है कि वे स्व-हित के लिए काम करते हैं। नागरिकों के साथ उनकी सामाजिक अंतःक्रिया और सरकारी अधिकारियों और निर्वाचित प्रतिनिधियों के रूप में उनके कामकाज का सार्वजनिक चयन सिद्धांतकारों द्वारा विश्लेषण किया जाता है। यह सिद्धांत सकारात्मक विश्लेषण (क्या है) पर आधारित है, लेकिन अक्सर एक समस्या का निर्धारण करने के लिए मानक उद्देश्यों (क्या होना चाहिए) के लिए उपयोग किया जाता है। यह सत्ता में बैठे लोगों की व्यवहार संबंधी समस्याओं को उजागर कर सकता है और जो सत्ता में हैं और उनमें जनहित को शामिल किया जा सकता है। सार्वजनिक नीति को उनके निर्माण में सार्वजनिक पसंद पर ध्यान देने के साथ एक प्रमुख कारक के रूप में सार्वजनिक हित के आधार को शामिल करना चाहिए।

6. **स्थिरता और संतुलन:** वित्तीय प्रशासन के लिए स्थिरता और संतुलन प्राप्त करने के लिए मानव संसाधन विकास आवश्यक है। सरकार की योजनाओं और कार्यक्रमों को लागू करने के लिए क्षमता निर्माण बाढ़ की जरूरत है। स्थिर और संतुलित कार्मिक संसाधनों के निर्माण से प्रभावशीलता, दक्षता और मितव्ययिता का परिणाम मिलता है।
7. **जागरूकता और जवाबदेही :** इस विश्वास के विपरीत कि सरकार के पास शक्ति और अधिकार है, यह लोकतंत्र में मतदाता है जिसके पास वास्तविक शक्ति है। निर्वाचित प्रतिनिधियों को जवाबदेह ठहराने के लिए नागरिकों के बीच चुनावी प्रक्रियाओं और उनके मौलिक अधिकारों के बारे में जागरूकता होनी चाहिए। एक जागरूक और सतर्क नागरिक अपने मतदान के अधिकार का प्रयोग करके सही चुनाव करने में सक्षम होगा और सरकार और प्रशासन के प्रदर्शन का मूल्यांकन करने में सक्षम होगा। यह मतदाताओं को उम्मीदवारों को चुनने के लिए सरकार के प्रदर्शन को समझने और



उसका मूल्यांकन करने में सक्षम बनाता है।

8. **लचीलापन:** वित्तीय प्रशासन लचीला होना चाहिए ताकि लोगों की बदलती सामाजिक-आर्थिक आवश्यकताओं के अनुरूप योजनाओं और परियोजनाओं को संशोधित किया जा सके।

---

## 4.4 निगरानी और मूल्यांकन: अवधारणा

---

### निगरानी और मूल्यांकन क्या है?

निगरानी एक परियोजना या कार्यक्रम इनपुट, गतिविधियों, आउटपुट, परिणामों और प्रभावों के बारे में प्राथमिकता वाली जानकारी की नियमित ट्रैकिंग और रिपोर्टिंग है। दूसरी ओर मूल्यांकन किसी विशिष्ट कार्यक्रम की योग्यता या मूल्य निर्धारित करने के लिए गतिविधियों, विशेषताओं और परिणामों के बारे में जानकारी का व्यवस्थित संग्रह है। यदि किसी कार्यक्रम को योग्यता का आंका जाता है, तो यह निर्धारित करना भी महत्वपूर्ण है कि क्या यह इसकी लागत के लायक है या नहीं। मूल्यांकन कार्यक्रमों में सुधार, सीखे गए पाठों की पहचान करने और भविष्य के संसाधन आवंटन के बारे में निर्णय लेने के लिए विश्वसनीय जानकारी प्रदान करता है।

**निगरानी:** निगरानी परियोजना की प्रगति के लिए व्यवस्थित और वैज्ञानिक संग्रह और सूचना का विश्लेषण है। इसका मुख्य उद्देश्य किसी परियोजना या संगठन की दक्षता और प्रभावशीलता में सुधार करना है। यह कार्य के नियोजन चरणों के दौरान निर्धारित लक्ष्यों और नियोजित गतिविधियों पर आधारित है। यह काम को ट्रैक पर रखने में मदद करता है। यह निर्धारित करने में सक्षम बनाता है कि उपलब्ध संसाधन पर्याप्त हैं या नहीं।

**मूल्यांकन :** मूल्यांकन सहमत रणनीतिक योजनाओं के विरुद्ध वास्तविक परियोजना प्रभावों की तुलना है। यह देखता है कि आप क्या करने के लिए तैयार हैं और आपने इसे कैसे पूरा किया। यह रचनात्मक हो सकता है या योगात्मक (सुधार के लिए) एक परियोजना के दौरान (पूर्ण परियोजना से सीख लेना)।

## 4.4.1 निगरानी और मूल्यांकन का उद्देश्य

### निगरानी का उद्देश्य:

- भविष्य में प्रथाओं और गतिविधियों को बेहतर बनाने के लिए अनुभवों से सीखना।
- उपयोग किए गए संसाधनों और प्राप्त परिणामों की आंतरिक और बाहरी जवाबदेही रखना।
- पहल के भविष्य पर सूचित निर्णय लेने के लिए।
- पहल के लाभार्थियों के सशक्तिकरण को बढ़ावा देना।

### मूल्यांकन का उद्देश्य :

- पूरी हो चुकी परियोजना का व्यवस्थित मूल्यांकन करना।
- रणनीतिक निर्णयों को सूचित करने वाले डेटा और जानकारी का मूल्यांकन करना, इस प्रकार भविष्य में परियोजना या कार्यक्रम में सुधार करना।
- प्रासंगिकता, प्रभावशीलता, दक्षता, प्रभाव और स्थिरता के बारे में निष्कर्ष निकालने के लिए।

## 4.4.2 निगरानी और मूल्यांकन का महत्व

- विश्व बैंक के अनुसार, एम एंड ई के निम्नलिखित लाभ हैं:
- एम एंड ई प्रणाली समस्याओं की पूर्व चेतावनी के माध्यम से कार्यान्वयन में सुधार कर सकती है। यह गतिविधियों के परिणामों के बारे में प्रतिक्रिया प्रदान कर सकता है और सुधार के लिए सुझाव दे सकता है।
- एम एंड ई प्रणाली यह मापने के द्वारा कार्यान्वयन में सुधार कर सकती है कि क्या नियोजित और कार्यान्वित गतिविधियां वास्तव में अभीष्ट परिणाम दे रही हैं और क्या संशोधित या अतिरिक्त गतिविधियां आवश्यक हैं।
- एम एंड ई सिस्टम परिणामों और परिणामों को मापता है। यह परियोजना टीम की जवाबदेही को बढ़ावा देगा और प्रदर्शन को

प्रोत्साहित करेगा।

बोध प्रश्न

- 1) वित्तीय प्रशासन के सिद्धांत क्या हैं?
- 2) वित्तीय प्रशासन के कार्यक्षेत्र की व्याख्या कीजिए।
- 3) निगरानी और मूल्यांकन और इसके उद्देश्य पर एक संक्षिप्त नोट लिखें।

---

## 4.5 सारांश

---

वित्तीय प्रशासन एक अर्थव्यवस्था का जीवनरक्त है। भारत, 1947 में ब्रिटिश शासन से अपनी स्वतंत्रता के बाद से, एक स्थिर अर्थव्यवस्था के लिए कठिन प्रयास कर रहा है क्योंकि यह कई मोर्चों पर पिछड़ रहा था। धीरे-धीरे एक स्थिर वित्तीय प्रशासन प्रणाली का विकास हुआ। हाल के दिनों में ही भारत को सबसे तेजी से बढ़ती बाजार अर्थव्यवस्था बनाने के लिए वित्तीय प्रशासन को इतना महत्व मिला है। इसमें सुशासन प्रदान करने की क्षमता है। संसाधनों का संग्रह, जिनकी मात्रा असीमित नहीं है, और उन सीमित संसाधनों का उचित उपयोग। आर्थिक प्रगति और पिछड़ापन दोनों काफी हद तक प्रभावी वित्तीय प्रशासन पर निर्भर करते हैं। एम एंड ई प्रणाली यह मापने के द्वारा कार्यान्वयन में सुधार कर सकती है कि नियोजित और कार्यान्वित गतिविधियां वास्तव में इच्छित परिणाम उत्पन्न कर रही हैं और क्या संशोधित या अतिरिक्त गतिविधियां आवश्यक हैं। एम एंड ई सिस्टम परिणामों और परिणामों को मापता है। यह परियोजना टीम की जवाबदेही को बढ़ावा देगा और प्रदर्शन को प्रोत्साहित करेगा।

---

## 4.6 परिभाषिक शब्दावली

---

माइक्रो-फाइनेंस क्रेडिट: यह उन सूक्ष्म उद्यमियों को दी जाने वाली कम राशि का ऋण है जो आय पैदा करने वाली गतिविधियों में हैं, जिनकी पारंपरिक बैंकिंग सेवाओं तक पहुंच नहीं है।

राष्ट्रीय आय: यह एक वित्तीय वर्ष के दौरान देश के निवासियों द्वारा निर्मित सभी वस्तुओं और सेवाओं के मूल्य का कुल योग है। यह

एक वर्ष के दौरान किसी देश की सभी आर्थिक गतिविधियों का शुद्ध परिणाम है।

राजनीतिक अर्थव्यवस्था: यह राजनीति और अर्थव्यवस्था के बीच अंतर्संबंध को संदर्भित करता है।

एम एंड ई: निगरानी और मूल्यांकन।

---

## 4.7 संदर्भित पुस्तकें

---

पांडा, एस। (1989)। सार्वजनिक उद्यमों में वित्तीय प्रशासन और कार्मिक प्रबंधन: उड़ीसा का एक अध्ययन। नई दिल्ली, भारत: मित्तल प्रकाशन।

रीड, बी.जे. और स्वेन, जे.डब्ल्यू. (1997)। सार्वजनिक वित्त प्रशासन। नई दिल्ली, भारत: सेज प्रकाशन।

शॉ, ए। (2007)। बजट और बजटीय संस्थान। वाशिंगटन, डी.सी., यूएसए: विश्व बैंक।

सिंह, आर.एस. (1988)। केंद्रीय बजट और वित्तीय प्रशासन। नई दिल्ली, भारत: दीप और दीप प्रकाशन।

---

## 4.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

---

- 1.
- 2.
- 3.



उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त  
विश्वविद्यालय, प्रयागराज

# MSW-109

## समाज कल्याण प्रशासन

### खंड- 2

#### मानव अधिकार और सामाजिक न्याय

इकाई-5. मानव अधिकारों और सामाजिक न्याय की अवधारणा

इकाई-6 मौलिक अधिकार और भारतीय संविधान

इकाई-7 राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांत

इकाई-8- सामाजिक न्याय सरोकार और समाज कल्याण

इकाई-9 मानव अधिकार और कल्याण का अधिकार



## खंड 2 . मानव अधिकार और सामाजिक न्याय

इस खंड का लक्ष्य विद्यार्थियों में मानवाधिकार एवं सामाजिक न्याय की अवधारण की समझ विकसित करना है मानव अधिकार सामाजिक न्याय का एक स्तंभ है सभी मानवाधिकारों की सुरक्षा के अभाव में एक न्यायसंगत समाज की कल्पना असम्भव सी प्रतीत होती है। हम अपने जीवन में मानवाधिकारों एवं सामाजिक न्याय के अंतरसंबद्धता एवं अंतर निर्भरता सर्वत्र अनुभव कर सकते हैं। अतः अवश्य हो जाता है कि इन दोनों अवधारणों का ज्ञान व्यवहारिक धरातल पर अधिक से अधिक प्रचारित किया जाए। इस उद्देश्य की प्राप्ति में हमारा युवा वर्ग एक मत्वपूर्ण स्थान रखता है तथा अपना योगदान द्वारा एक विशेष भूमिका का निर्वाह करता है उपरोक्त लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए उपलब्ध, ब्लॉक को पाँच इकाइयों में विभाजित किया गया है। ये इस प्रकार हैं :

**इकाई पांच** में मानव अधिकारों और सामाजिक न्याय की अवधारणा की व्याख्या की गई है। प्रस्तुति विषयों की गहन स्पष्टता हेतु विभिन्न विद्वानों के मतों का भी विशेषात्मक वर्णन किया गया है। **इकाई छह** में भारत के संविधान की विशेषताओं और मौलिक अधिकारों की विस्तृत व्याख्या शामिल है। इसमें मौलिक अधिकारों के सभी अनुच्छेदों की विस्तृत व्याख्या भी शामिल है।

**इकाई सात** में अर्थ एवं उद्देश्य स्रोत और विशेषताओं की व्याख्या की गई है। इसमें राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों के सभी अनुच्छेदों की विस्तृत व्याख्या भी शामिल है। **इकाई आठ** में सामाजिक न्याय के विभिन्न सिद्धांतों के समावेश के साथ सामाजिक न्याय के विभिन्न आयाम शामिल हैं। इस इकाई में सामाजिक कल्याण की अवधारणा का भी उल्लेख किया गया है। बेहतर समझ के लिए भारत सरकार की विभिन्न कल्याणकारी योजनाओं को भी सूचीबद्ध किया गया है। **इकाई नौ** में मानवाधिकारों की विशेष विशेषताएं शामिल हैं। इसमें मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा के सभी अनुच्छेदों की विस्तृत व्याख्या भी शामिल है। इस निरंतरता में यह इकाई मानव अधिकारों की रक्षा के लिए संस्थागत संरचना और कल्याण की अवधारणा को शामिल करती है।

---

## संरक्षण एवं मार्गदर्शक

---

कुलपति

—प्रो० सीमा सिंह, माननीय कुलपति, उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

---

## विशेषज्ञ समिति

---

1. प्रो. सन्तोषा कुमार

निदेशक, समाज विज्ञान विद्याशाखा,

उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज —अध्यक्ष

2. प्रो. अनूप भारतीय,

समाज कार्य विभाग लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ —सदस्य

3. डॉ. सन्दीप गिरी,

समाज कार्य विभाग. महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी —सदस्य

4. डॉ. रोहित मिश्रा,

समाज कार्य विभाग विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ —सदस्य

5. डॉ. रूपेश सिंह,

डॉ. शकुन्तला मिश्रा विकलांग विश्वविद्यालय, लखनऊ —सदस्य

6. डॉ. अलका वर्मा,

असिस्टेंट प्रोफेसर, समाज कार्य, उ.प्र.रा.ट. मुक्त

विश्वविद्यालय, प्रयागराज

---

## परिभाषक

---

प्रो० विवेक सिंह,

समाज कार्य विभाग, प्रो० राजेन्द्र सिंह (रज्जू भय्या) विश्वविद्यालय, प्रयागराज

---

## सम्पादक

---

प्रो० विवेक सिंह,

समाज कार्य विभाग, प्रो० राजेन्द्र सिंह (रज्जू भय्या) विश्वविद्यालय, प्रयागराज

---

## समन्वयक

डॉ. अलका वर्मा, असिस्टेंट प्रोफेसर, समाज कार्य, उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

---

## लेखक —

---

खण्ड 1 श्री मनीष सिंह,

असिस्टेंट प्रोफेसर, समाज कार्य

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

खण्ड 2 डॉ० गीतांजलि श्रीवास्तव,

असिस्टेंट प्रोफेसर,

प्रो० राजेन्द्र सिंह (रज्जू भय्या) विश्वविद्यालय, प्रयागराज

खण्ड 3 डॉ० कविता गौतम

असिस्टेंट प्रोफेसर समाज कार्य

प्रो० राजेन्द्र सिंह (रज्जू भय्या) विश्वविद्यालय, प्रयागराज

---

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

**ISBN No. - 978-81-19530-81-6**

---

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस सामग्री के किसी भी अंश को उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में मिनियोग्राफी (वक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

**नोट :** पाठ्य सामग्री में मुद्रित सामग्री के विचारों एवं आकड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय, उत्तरदायी नहीं हैं।

प्रस्तुत पाठ्य सामग्री में विषय से सम्बन्धित सभी तथ्य एवं विचार मौलिक रूप से लेखक के द्वारा स्वयं उपलब्ध कराई गई है। विश्वविद्यालय, इस सामग्री के सम्बन्ध में किसी भी प्रकार से उत्तरदायी नहीं है।



# इकाई 5. मानव अधिकारों और सामाजिक न्याय की अवधारणा

---

## इकाई की रूपरेखा

- 1.0 इकाई का उद्देश्य
- 1.1 परिचय
- 1.2 मानव अधिकार की अवधारणा परिभाषा
- 1.3 मानवाधिकारों का उद्‌विकास
- 1.4 सामाजिक न्याय
- 1.5 न्याय के प्रकार
- 1.6 सार संक्षेप
- 1.7 परिभाषिक शब्दावली
- 1.8 अभ्यास प्रश्न लघु विवरण
- 1.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

---

## 1.0 इकाई का उद्‌देश्य

---

प्रिय विद्यार्थियों प्रस्तुत इकाई में आपको मानवाधिकारों के अवधारण के बारे में जानकारी प्राप्त होगी। इसके अतिरिक्त आपको मानवाधिकारों के उद्‌विकास के बारे में भी विस्तार से बताया जाएगा। इसका उद्‌देश्य विद्यार्थियों में मानवाधिकारों की समझ को विकसित करना है। इस उद्‌देश्य की प्राप्ति हेतू इस इकाई में विभिन्न दर्शनिकों के विचारों का भी वर्णन किया गया है। इकाई के दूसरे भाग में न्याय की अवधारण की व्याख्या की गई है। मानव समाज से जुड़ी हुई विभिन्न परिस्थितियों के संदर्भ में न्याय के प्रकारों का भी वर्णन किया गया है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आपको निम्नलिखित विषयों के बारे में जानकारी प्राप्त होगी-

---

### 1.1 परिचय

---

मनुष्य एक बुद्धिमान और विवेक पूर्ण प्रणी है इसी कारण इसको कुछ ऐसे

मूल तथा आहार अधिकार प्राप्त करते हैं। जिससे सामान्यतः मानव अधिकार कहा जाता है क्योंकि यह अधिकार उसके अस्तित्व के कारण उनसे संबंधित रहते हैं अतः वे उनमें जन्म से ही निहित रहते हैं इस प्रकार मानव अधिकार सभी से संबंधित हैं चाहे उनका मूल वंश धर्म लिंग प्रजाति राष्ट्रीयता तथा संस्कृति कुछ भी हो यह अधिकार सभी व्यक्तियों के लिए आवश्यक है क्योंकि यह उनकी गरिमा एवं स्वतंत्रता से संबंधित है तथा शारीरिक नैतिक सामाजिक और भौतिक कल्याण के लिए आवश्यक एवं सहायक होते हैं इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि जो अधिकार व्यक्ति की स्वतंत्रता तथा उसकी अंतर्निहित गरिमा को सुरक्षा प्रदान करते हैं उन्हें मानव अधिकार कहते हैं इसके अतिरिक्त कोई ऐसी क्रिया अथवा गतिविधि जो मानव गरिमा के लिए सती कारक हो उस क्रिया को मानव अधिकार के हनन की श्रेणी में रखा जाता है इस तथ्य को संज्ञान में रखते हुए यह कहा जा सकता है कि मानव अधिकार मनुष्य के व मूलभूत अधिकार हैं जो व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन का आधार हैं जिसमें वह निवास करता है यह अधिकार इस मान्यता पर आधारित है कि सभी मनुष्यों ने स्वतंत्रता गरिमा एवं समान प्राकृतिक अधिकारों के साथ जन्म लिया है

---

## 1.2 मानव अधिकारकी अवधारणा एवम परिभाषा

---

मानव अधिकार की परिभाषा मुख्यता दो स्वरूप में देखने को मिलती है। सामान्यता परिभाषा एवं जटिल परिभाषा सामान्य अर्थों में यह कहा जा सकता है अथवा यह तर्क दिया जा सकता है कि मानव अधिकार एक सार्वभौमिक संहिता है जिसके अनुसार कुछ अधिकार प्रत्येक व्यक्ति द्वारा प्रत्येक स्थान पर पालन किए जाने चाहिए एक व्यक्ति मानव की अंतर्निहित गरिमा के कारण अवैध रूप से इन अधिकारों के उपयोग का हकदार है। जटिल परिभाषा के संदर्भ में मानव अधिकारों का भौगोलिक सांस्कृतिक एवं सामाजिक मूल्यों के आधार पर परिभाषित करना अथवा इनके आधार पर को एक परिभाषा प्रस्तुत करना अत्यंत कठिन प्रतीत होता है। मानव अधिकार आधारभूत आवश्यकता एवं स्वतंत्रता से संबंधित है तथा यह सभी मनुष्यों पर समान रूप से लागू होते हैं जिससे प्रत्येक व्यक्ति जीवन जीने के अधिकार स्वतंत्रता समानता समान

व्यवहार दायित्व एवं तत्व एवं शोषण से मुक्ति तथा वाक्य एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार का अपने चौमुखी विकास में उपयोग कर सकें कर सके ।

**डीडी बसु** के शब्दों में मानव अधिकार मनुष्य के वे न्यूनतम अधिकार हैं जिन्हें प्रत्येक व्यक्ति बिना किसी अन्य विचारण के मानव परिवार का सदस्य होने के फलस्वरूप राज्य लोक प्राधिकार के विरुद्ध धारण कर सकता है। **गेंस एजीजियोफर** के शब्दों में मानव अधिकार आधारभूत अधिकारों का आधुनिक स्वरूप है जिसे हम परंपरागत रूप में प्राकृतिक अधिकार कहते हैं जिन्हें नैतिक अधिकारों के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसे प्रत्येक व्यक्ति किसी भी स्थान पर किसी भी समय इसलिए धारण किए रहता है क्योंकि वह अन्य जीव धारियों की तुलना में तार्किक एवं नैतिक व्यवहार करता है। **जस्टिस जैकसन** के अनुसार मूलभूत अधिकार किसी भी व्यक्ति के जीवन स्वतंत्रता संपत्ति वाह एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता धार्मिक क्रियाकलापों एवं संगठन की स्वतंत्रता एवं राजनीतिक स्वतंत्रता से संबंधित अधिकार है मौलिक अधिकारों को विधिक संरक्षण प्रदान किया जाना चाहिए व्यवहारिक रूप से इसे लागू करने के लिए मुख्यता 3 पक्षों को सम्मिलित किया जाना आवश्यक हो जाता है

1. मौलिक अधिकार एवं प्रशासनिक प्रक्रियाओं का निदेशक सिद्धांत के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए
2. अधिकार प्रत्येक व्यक्ति को शोषण एवं दमन से मुक्ति का अधिकार प्रदान करते हैं इनके द्वारा प्रदत्त सीमाओं का किसी भी व्यक्ति द्वारा हनन नहीं किया जा सकता क्योंकि यह सीमाएं विधि एवं कार्यपालिका भेदभाव पूर्ण व्यवहार पर अंकुश लगाती हैं मानव अधिकारों को विधि के अंतर्गत पूर्ण एवं स्पष्ट रूप से परिभाषित किया गया है
3. मौलिक अधिकार द्वारा नियमों को एक स्पष्ट व्यवस्था विकसित की गई है जो इन अधिकारों को प्रत्येक व्यक्तियों को प्रदान करने का आश्वासन देती है इस व्यवस्था को सामान्य शब्दों में न्यायपालिका कहा जाता है

### 1.3 मानवाधिकारों का उद्विकास

वह सटीक क्षण जब मानवाधिकारों की अवधारणा उत्पन्न हुई, उसे इंगित करना कठिन है। इस संदर्भ में मानव मूल्य को कई संस्कृतियों और पारंपरिक समाजों ने प्रत्येक व्यक्ति के मानव मूल्य को महत्व देना प्रारंभ किया। फिर भी, यह शुरुआती दौर आधुनिक यूरोप में था जब मानवाधिकारों के विचार को "प्राकृतिक अधिकारों" के रूप में उभरने के लिए कहा जा सकता है। जॉन लोके, थॉमस हॉब्स, ह्यूगो ग्रेटियस आदि जैसे दार्शनिकों ने कुछ अधिकारों को इस अर्थ में प्राकृतिक घोषित किया कि वे मानव के लिए मौलिक थे और मानव प्रकृति के मूल हैं। हालाँकि, कुछ शुरुआती योगदानों को महत्वपूर्ण माना जाता है और उन स्थलों के रूप में देखा जाता है जिनके कारण मानवाधिकारों की काफी नई अवधारणा की शुरुआत हुई।

कुछ प्रमुख ऐतिहासिक योगदानों में 1215 का मैग्ना कार्टा, 1688 का बिल ऑफ राइट्स, 1776 का यूएस डिक्लरेशन ऑफ इंडिपेंडेंस और राइट्स ऑफ मैन एंड द सिटीजन, 1789 फ्रांस शामिल हैं। इन शताब्दियों में मानवतावादी नैतिकता का विकास हुआ और अधिकारों को लागू करने के क्रमिक प्रयास हुए। उदाहरण के लिए, 1815 की वियना की कांग्रेस ने दास व्यापार के उन्मूलन को बढ़ावा देने की कोशिश की, जो अंततः 1890 के ब्रसेल्स कन्वेंशन द्वारा हासिल किया गया था। यहां तक कि जब अधिकांश योगदान राज्यों द्वारा अपने देश और अपने स्वयं के लोगों के लिए दिए गए थे, तब भी उन्होंने निर्धारित किया था। दो क्रूर विश्व युद्धों के अंत के साथ था कि सार्वभौमिक मानवाधिकारों की लोकप्रियता ने गति पकड़ी। 1948 में, संयुक्त राष्ट्र ने अपनी आम सभा में मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा को अपनाया। 1966 में, दो प्रमुख मानवाधिकार दस्तावेजों को अपनाया गया, अर्थात् नागरिक और राजनीतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय अनुबंध और आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय अनुबंध, दोनों 1976 में लागू हुए। एक प्रतिष्ठित और बहुत प्रसिद्ध मानवाधिकार विद्वान कारेल वासाक ने मानवाधिकारों की तीन पीढ़ियों का विचार पेश किया, जो हमें मानवाधिकारों के प्रकार और विकास को बेहतर ढंग से समझने की अनुमति देता है। मानवाधिकारों की पहली पीढ़ी

नागरिक और राजनीतिक अधिकार हैं। मानवाधिकारों की दूसरी पीढ़ी में आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकार शामिल हैं और मानवाधिकारों की तीसरी पीढ़ी को एकजुटता अधिकार कहा जाता है।

पहली पीढ़ी के अधिकार यानी नागरिक और राजनीतिक अधिकार प्राकृतिक अधिकारों का प्रारंभिक रूप हैं। ये अधिकार 17वीं शताब्दी की अंग्रेजी क्रांति और 18वीं शताब्दी की फ्रांसीसी और अमेरिकी क्रांति के दौरान विकसित हुए। इन अधिकारों का अंतर्निहित प्रमुख विषय स्वतंत्रता है। पहली पीढ़ी के अधिकारों में जीवन का अधिकार, स्वतंत्रता का अधिकार, और संपत्ति का अधिकार शामिल है और गैर-भेदभाव, मनमानी गिरफ्तारी से स्वतंत्रता, विचार की स्वतंत्रता, धर्म की स्वतंत्रता, आंदोलन की स्वतंत्रता आदि को शामिल करने के लिए विस्तारित किया गया है। ये अधिकार हैं अक्सर नकारात्मक अधिकारों की अभिव्यक्ति के रूप में देखा जाता है क्योंकि उनका आनंद तभी लिया जा सकता है जब दूसरों पर प्रतिबंध हो। मानव अधिकारों की पहली पीढ़ी की सामग्री को समझने के लिए प्रमुख दस्तावेज संयुक्त राष्ट्र घोषणा के अनुच्छेद 3 से अनुच्छेद 21 और 1966 के नागरिक और राजनीतिक अधिकारों की अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदा है जो 1976 में लागू हुई थी।

बीसवीं शताब्दी में, विशेष रूप से द्वितीय विश्व युद्ध के बाद, दूसरी पीढ़ी के अधिकार अधिक प्रमुखता अर्जित करने लगे। देशों की अर्थव्यवस्था युद्ध से चरमरा गई थी और विश्व युद्धों के परिणामस्वरूप बड़े पैमाने पर विनाश हुआ था। इसलिए, बीसवीं शताब्दी के दौरान आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों के लिए प्रयास विकसित हुए। अधिकार समाजवादी मान्यताओं पर निर्भर करते हैं और अंतर्निहित विषय समानता है जो पहली पीढ़ी के अधिकारों और स्वतंत्रता की धारणा के विपरीत है। दूसरी पीढ़ी के अधिकारों में काम करने का अधिकार, स्वास्थ्य देखभाल का अधिकार, शिक्षा का अधिकार, सामाजिक सुरक्षा का अधिकार आदि शामिल हैं। इसलिए, इन अधिकारों को सकारात्मक अधिकारों की अभिव्यक्ति के रूप में देखा जाता है क्योंकि वे राज्य पर दावा करते हैं और कार्रवाई के लिए उपकृत करने का कर्तव्य, उदाहरण के लिए, कल्याणकारी प्रावधान। दूसरी पीढ़ी के अधिकारों की सामग्री को समझने के लिए प्रमुख दस्तावेज संयुक्त राष्ट्र घोषणा के अनुच्छेद 22 से अनुच्छेद 27 और

1966 के आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों की अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदा हैं।

अधिकारों की तीसरी पीढ़ी 1945 के बाद उभरी और इसे एकजुटता अधिकार कहा जाता है। इसका साधारण सा कारण यह है कि ये अधिकार एक व्यक्ति के बजाय सामाजिक समूहों और पूरे समाज से संबंधित हैं। इसलिए उन्हें सामूहिक अधिकारों के रूप में देखा जाता है। तीसरी पीढ़ी के अधिकारों का अंतर्निहित विषय भ्रातृत्व है। आमतौर पर, ये अधिकार ग्लोबल साउथ के देशों के सामने आने वाली कठिनाइयों से आकार लेते हैं। इन अधिकारों में विकास का अधिकार, पर्यावरण संरक्षण का अधिकार, आत्मनिर्णय का अधिकार, शांति का अधिकार आदि शामिल हैं। इन अधिकारों को समझने के लिए 1972 के मानव पर्यावरण के स्टॉकहोम सम्मेलन और 1992 के पृथ्वी शिखर सम्मेलन का विश्लेषण किया जा सकता है।

---

## 1.4 सामाजिक न्याय

---

सामाजिक न्याय में एक न्यायसंगत और निष्पक्ष सामाजिक व्यवस्था का निर्माण शामिल है और यह व्यवस्था समुदाय के प्रत्येक सदस्य के लिए न्याय प्रदान करती है। सामाजिक न्याय का अर्थ: समाज में असमानताएं और सामाजिक क्षेत्र में सभी व्यक्तियों को समान अवसर प्रदान करना है सामाजिक न्याय की अवधारणा न्याय की अपेक्षा व्यापक है। 'सामाजिक' शब्द समाज से जुड़ा हुआ है। इसका दायरा व्यापक है, जिसमें सामाजिक मुद्दे, समस्याएं और सुधार शामिल हैं, इस प्रकार यह सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन को शामिल करता है। सामाजिक न्याय में समाज के दबे और वंचित वर्गों की उन्नति के लिए उपाय शामिल हैं इस तरह यह सोशल इंजीनियरिंग की मांग करता है जो सामाजिक समस्या से निपटने के लिए समाज को बदलने का प्रयास है

सामाजिक न्याय का उद्देश्य राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक लोकतंत्र बनाना, वर्ग और जाति भेद को समाप्त करना है। यह समाजवाद के सिद्धांतों को व्यक्तिगत स्वतंत्रता के साथ जोड़ता है न्याय की अवधारणा को विभिन्न दृष्टिकोणों से परिभाषित किया जा सकता है। यूनानी दार्शनिक प्लेटो ने न्याय को सामाजिक जीवन का सच्चा सिद्धांत माना। प्लेटो ने अपनी पुस्तक द

रिपब्लिक में न्याय की अवधारणा पर चर्चा की है सेफलस का कहना है कि न्याय में सत्य बोलना और अपना ऋण चुकाना शामिल है पोलेमार्चस व्याख्या करते हैं कि न्याय प्रत्येक व्यक्ति को वह देने में है जो उसके लिए उचित है। "न्याय है। रोसको पाउंड, एक विधिवेत्ता, कानूनी रूप से संरक्षित तीन हितों का वर्गीकरण करता है:

1. जनहित
2. सामाजिक हित
3. निजी हित।

भारत के सर्वोच्च न्यायालय के पूर्व न्यायाधीश न्यायमूर्ति वी आर कृष्णा अय्यर कहते हैं, "सामाजिक न्याय एक विवेकपूर्ण कार्य और सर्वोच्च कानून की सामाजिक शक्ति है।"। सामाजिक न्याय जनोन्मुख है, कानूनी न्याय कानून द्वारा नियंत्रित और प्रदत्त है। सामाजिक न्याय की अवधारणा बहुआयामी है और इसे विभिन्न तरीकों से देखा गया है सामाजिक न्याय सभी के लिए सामाजिक, भौतिक और राजनीतिक संसाधनों के समान वितरण की बात कहता है।

यह सभी सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक असमानताओं और भेदभावों को दूर करने में विश्वास करता है। सामाजिक और आर्थिक मामलों में सभी पुरुषों और महिलाओं को समान अवसर प्रदान करता सामाजिक न्याय सामाजिक अन्याय का उत्पाद है अतः ये सभी (गरीब, वृद्ध, निराश्रित, बच्चे, महिलाएं और समाज के अन्य वंचित व्यक्ति) के लिए स्थिति और अवसर की समानता सुनिश्चित करना चाहता है। सामान्य तौर पर, इसे "कमजोर का अधिकार" के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।

न्याय सबसे महत्वपूर्ण नैतिक और राजनीतिक अवधारणाओं में से एक है जिसकी कोई सर्वसम्मति परिभाषा नहीं है। न्याय शब्द है लैटिन शब्द "जस" से लिया गया है जिसका अर्थ है अधिकार या कानून। ऑक्सफोर्ड इंग्लिश डिक्शनरी "जस्ट" को परिभाषित करती है। न्याय एक विकासवादी अवधारणा है। न्याय की प्रारंभिक लिखित परिभाषाओं में से एक अरस्तू द्वारा दी गई है। जो वितरणात्मक न्याय, सुधारात्मक न्याय, विनिमेय न्याय, कानूनी न्याय, नैतिक के बारे में बात करता है मध्य युग में, न्याय को सेंट ऑगस्टाइन द्वारा राज्य

की नींव के रूप में वर्णित किया गया था, जो मानते थे न्याय चर्च द्वारा बनाया गया था। कार्ल मार्क्स के अनुसार, न्याय का विचार और इसकी सामग्री शासक वर्ग के आर्थिक हित के साथ बदलती रहती है। गौतम बुद्ध की न्याय की अवधारणा केवकानून का सम्मान करने के लिए सीमित नहीं है, लेकिन यह अवज्ञा या कानून की अवहेलना की एक क्रांतिकारी अवधारणा को भी सही ठहराता है, अगर कानून है

कांट, मिल, रॉल्स, नोजिक जैसे दार्शनिकों ने न्याय के अपने सिद्धांत दिए हैं। जॉन रॉल्स ने "निष्पक्षता के रूप में न्याय" का विचार प्रतिपादित किया। एथ्योरी ऑफ जस्टिस जॉन रॉल्स के सबसे महत्वपूर्ण कार्यों में से एक है। इसकी यूनानी अवधारणा में न्याय का नैतिकता से घनिष्ठ संबंध था। सेफलस के अनुसार न्याय का अर्थ है सत्य बोलना और किसी का कर्ज चुकाना है। पोलेमार्चस न्याय की परिभाषा समाज में प्रत्येक व्यक्ति को वह देने के रूप में देता है जो उसके लिए देय है। प्लेटो Vyaktiyo की प्राकृतिक असमानता में विश्वास करते थे और इसलिए उन्होंने वर्ग व्यवस्था की वकालत की। उन्होंने लोगों को विभाजित किया चार श्रेणियां, अर्थात्, शासक वर्ग, सैन्य वर्ग, उत्पादक वर्ग और शिल्पकार। प्लेटो के लिए, न्याय मौलिक गुण है और अहस्तक्षेप का सिद्धांत है, जो उचित सीमा के भीतर रहता है। अरस्तू के अनुसार, न्याय मुख्य रूप से कानून के अनुरूप एक आचरण का वर्णन करने के लिए प्रयोग किया जाता है। उन्होंने दो श्रेणियों में न्याय को वर्गीकृत किया : वितरणात्मक न्याय और सुधारात्मक न्याय। अरस्तू शक्तिशाली रूप से तर्क देता है कि सभी वैध और न्यायपूर्ण काम न्याय के हैं और सभी गैरकानूनी और अन्यायपूर्ण कार्य अनुचित हैं

---

## 1.5 न्याय के प्रकार

---

न्याय की विभिन्न परिभाषाओं को ध्यान में रखते हुए, इसे कुछ प्रकारों में वर्गीकृत किया जा सकता है, अर्थात् - प्राकृतिक न्याय, आर्थिक न्याय सामाजिक न्याय, राजनीतिक न्याय, कानूनी न्याय। नैसर्गिक न्याय: अभिव्यक्ति "नैसर्गिक न्याय" का अर्थ निष्पक्ष होने का जन्मजात गुण है, जिसका अर्थ है क्या सही है और क्या गलत है। पिछली पीढ़ियों के कानूनी विशेषज्ञ प्राकृतिक कानून और न्याय के बीच के बीच कोई अंतर नहीं करते थे सामाजिक न्याय



समाज में संसाधनों, अवसरों और विशेषाधिकारों के उचित और न्यायसंगत विभाजन ki baat करता है। समानता, नैतिक व्यवहार, वैधता और व्यवस्था की अवधारणाओं इसमें अंतरनिहित है न्याय को तीन प्रकारों में समझा जा सकता है: वितरणात्मक, प्रतिशोधात्मक और पुनर्स्थापनात्मक।

1. **वितरणात्मक न्याय** :वितरणात्मक न्याय एक समुदाय के भीतर संसाधनों के उचित विभाजन के बारे में कहता है। "उचित विभाजन" का अर्थ है कि सभी को या तो समान सेवाएँ और भौतिक सामान प्राप्त होते हैं या उन तक उनकी पहुँच सुनिश्चित हो। वितरणात्मक न्याय का आधार यह है कि हर कोई नैतिक रूप से समान है। वितरणात्मक न्याय आय, धन, अवसर, नौकरी, कल्याण और बुनियादी ढांचे जैसे क्षेत्रों को प्रभावित करता है। इसमें न्याय के सिद्धांतों में इक्विटी, आवश्यकता और आनुपातिकता शामिल है। वितरणात्मक न्याय समाज को संसाधनों का उचित वितरण करने पर बल देता है।
2. **प्रतिशोधात्मक न्याय** :प्रतिशोधात्मक न्याय, जिसे आपराधिक न्याय भी कहा जा सकता है, इस बात पर ध्यान केंद्रित करता है कि अपराध को कैसे दंडित किया जाए। यह इस विचार पर आधारित है कि जब गलत काम किया जाता है, तो गलत करने वाले को उचित सजा मिलनी चाहिए। इसका मतलब यह नहीं है कि गलत काम करने वाले को ठीक उसी तरह की परीक्षा के अधीन किया जाना चाहिए (यानी अगर कोई किसी को चेहरे पर मारता है, तो उसे अपनी औपचारिक सजा के रूप में वापस मारने की जरूरत नहीं है), लेकिन यह आनुपातिक होना चाहिए। जो लोग प्रतिशोधात्मक न्याय का अध्ययन करते हैं वे भी उदासीनता की आवश्यकता पर जोर देते हैं, जिसका अर्थ है कि न्याय व्यक्तिगत या प्रतिशोध पर आधारित नहीं होना चाहिए। जबकि कई न्याय प्रणालियों में कुछ प्रकार के प्रतिशोधात्मक न्याय शामिल हैं, इसकी प्रभावशीलता बहस योग्य है। कई आपराधिक न्याय प्रणालियों में खामियों को ध्यान में रखते हुए, प्रतिशोधी न्याय भी निर्दोष लोगों को नुकसान पहुंचा सकता है या दूसरों पर कुछ समूहों को गलत तरीके से दंडित कर सकता है।
3. **पुनर्स्थापनात्मक न्याय**:पुनर्स्थापनात्मक न्याय 1970 के दशक में

विकसित किया गया था, हालांकि इसके कई सिद्धांत स्वदेशी न्याय प्रथाओं से आते हैं। पुनर्स्थापनात्मक न्याय अपराधों के पीड़ितों की मदद करने पर ध्यान केंद्रित करता है, लेकिन यह अपराधियों को उनके द्वारा किए गए नुकसान को समझने में भी मदद करना चाहता है। लक्ष्य मरम्मत है, सजा नहीं। जुड़ाव, जवाबदेही, सहयोग और समुदाय सभी आवश्यक सिद्धांत हैं। कई आपराधिक न्याय मामलों में पुनर्स्थापनात्मक न्याय प्रथाओं का उपयोग किया गया है, लेकिन उन्हें परिवारों, स्कूलों और कार्यस्थलों से जुड़े संघर्षों के दौरान भी अपनाया गया है। प्रतिशोधात्मक न्याय के विपरीत, पुनर्स्थापनात्मक न्याय इस बात पर ध्यान केंद्रित नहीं करता है कि अपराधी क्या पात्र हैं, बल्कि इस बात पर ध्यान केंद्रित करता है कि पीड़ितों को क्या ठीक करने की आवश्यकता है और पुनः अपमान को रोकने के लिए समुदाय क्या कर सकते हैं।

### **कन्फ्यूशियस (551-479 ईसा पूर्व)**

हम पहले ही कन्फ्यूशियस पर थोड़ी चर्चा कर चुके हैं, लेकिन न्याय और कानून पर उनके विचारों के बारे में जानने लायक कुछ अन्य बातें भी हैं। उन्होंने सब कुछ इस विश्वास पर आधारित किया कि मनुष्य स्वाभाविक रूप से अच्छे थे, जिसका अर्थ था कि वे सही और गलत के बीच के अंतर को समझते थे और सही काम करने के लिए तैयार थे। हालाँकि, उन्हें अभी भी मार्गदर्शन की आवश्यकता थी, लेकिन विशिष्ट कानूनों के बजाय, कन्फ्यूशियस ने आचार संहिता की वकालत की जिसमें पाँच स्थिरांक और चार गुण शामिल थे। इनमें झोंग (वफादारी) और यी (न्याय और धार्मिकता) शामिल थे। इस आचार संहिता का पालन करके और अधिकार के पदानुक्रम को बनाए रखते हुए (पुत्र पिता की आज्ञा मानते हैं, छोटे भाई बड़े भाइयों की आज्ञा मानते हैं, और पत्नियाँ पतियों की आज्ञा मानती हैं), कन्फ्यूशियस के विचार में, न्याय नैतिक व्यवहार (जो स्वाभाविक रूप से मनुष्यों के लिए आता है) और पदानुक्रम बनाए रखने के बारे में है।

**प्लेटो (428/7-348/7 ईसा पूर्व)** प्लेटो ने न्याय के बारे में अपने शिक्षक सुकरात के विचारों से प्रभावित थे। प्लेटो का मानना था कि न्याय व्यक्तिपरक

नहीं हो सकता। इसके लिए पदानुक्रम, नियंत्रण एवं संतुलन आवश्यक होता है। प्लेटो की "न्यायपूर्ण" समाज की दृष्टि में तीन वर्ग थे: शिल्पकार, सहायक और अभिभावक। न्याय प्राप्त करने के लिए, सभी वर्गों को कुछ गुणों को धारण करना चाहिए। शिल्पकारों को संयमी होना चाहिए, सहायक साहसी होने चाहिए और अभिभावकों को बुद्धिमान होना चाहिए। प्लेटो के दिमाग में, केवल अभिभावक - जिनका नेतृत्व एक दार्शनिक राजा कर रहे थे ही समझ सकते थे कि न्याय कैसा दिखता है। कन्फ्यूशियस की तरह, प्लेटो की न्याय की अवधारणा पदानुक्रम में रहने वाले और नैतिक जीवन जीने वाले समूहों पर निर्भर करती है।

**इमैनुअल कांट (1724-1804):** जर्मन दार्शनिक इमैनुएल कांट, जिन्हें आधुनिक पश्चिम के सबसे प्रभावशाली व्यक्तियों में से एक माना जाता है, ने न्याय के बारे में अपने विचारों को स्वतंत्रता पर केंद्रित किया। उनके विचार में, स्वतंत्रता वह है जो मनुष्य को हमारी गरिमा प्रदान करती है। यह हमारा एकमात्र जन्मजात अधिकार है। सभी कानूनों को स्वतंत्रता के भाव से बनाया जाना चाहिए, यह ध्यान में रखते हुए कि लोगों को दूसरों की स्वतंत्रता का उल्लंघन करने का अधिकार नहीं है। कांट के लिए, एकमात्र नैतिक कानून वे कानून थे जो लोगों को स्वतंत्र, समान और स्वतंत्र के रूप में देखते थे। कांट प्रतिशोधात्मक न्याय और लेक्स टैलोनिस में विश्वास करते थे, जो कि सिद्धांत है कि दंडों को उसी तरह से नुकसान पहुंचाने की आवश्यकता होती है जैसे कि गलत किया गया। अगर कोई हत्या करता है, तो मौत ही एकमात्र सजा है। कांट क्षमा की वकालत भी करते हैं, हालांकि, यह कहते हुए कि बदला लेने या घृणा से गलत चुकाना पुण्य नहीं है। कांट ने अपने सिद्धांतों को निजी, निजी और अंतरराष्ट्रीय कानून में लागू करते हुए न्याय के लिए अपने काम का एक अच्छा सौदा समर्पित किया।

**जॉन रॉल्स (1921-2002):** 1971 में जॉन रॉल्स ने ए थ्योरी ऑफ जस्टिस प्रकाशित की, जो 20वीं सदी की सबसे महत्वपूर्ण किताबों में से एक है। इस पुस्तक में, रॉल्स ने यह परिभाषित करने की कोशिश की कि न्यायपूर्ण समाज कैसा दिखता है। उन्होंने एक विचार प्रयोग किया जहां लोगों का एक समूह "अज्ञानता के घूंघट" के पीछे रहता है। घूंघट व्यक्तियों के बीच के अंतरों को

छुपाता है, जैसे कि उनके सामाजिक, आर्थिक, लिंग, नस्लीय और ऐतिहासिक अंतर। बाहरी प्रभावों के बिना, लोग एक समूह को दूसरे पर लाभ पहुंचाने की कोशिश नहीं करेंगे। आखिरकार, समूह दो सिद्धांतों पर समझौता करेगा। पहले में कहा गया है कि सभी के पास समान मूल स्वतंत्रताएं हैं जिन्हें छीना नहीं जा सकता है, लेकिन यह केवल तभी सीमित हो सकती है जब किसी की स्वतंत्रता किसी अन्य व्यक्ति की स्वतंत्रता का उल्लंघन कर रही हो। रॉल्स का दूसरा सिद्धांत समानता पर ध्यान केंद्रित करता है, जिसमें निजी और सार्वजनिक कार्यालयों को रखने के समान अवसर, साथ ही समान (या जितना संभव हो बराबर के करीब) धन वितरण शामिल है। न्यायपूर्ण होने के लिए, एक समाज को असमानताओं को यथासंभव कम करना चाहिए। रॉल्स ने अपने सिद्धांत को "निष्पक्षता के रूप में न्याय" कहा। सामाजिक न्याय और मानवाधिकारों के साथ-साथ नीति-निर्माण के बारे में अकादमिक चर्चाओं में उनके विचार बहुत प्रभावशाली रहे हैं। एक सामान्य व्यक्ति के लिए, न्याय का अर्थ किसी अपराध के लिए उचित सजा हो सकता है। एक दार्शनिक के लिए, न्याय का मतलब हो सकता है नैतिकता। एक वकील के लिए, न्याय का अर्थ कानून के शासन को लागू करना हो सकता है। न्याय की अवधारणा स्थिर नहीं है; यह एक विकासवादी अवधारणा है। निष्पक्षता, नैतिक धार्मिकता और समानता को संकीर्ण रूप से या इस तरह से समझा जा सकता है मध्य युग में, सेंट ऑगस्टीन ने कहा कि न्याय राज्य की नींव है। उनके अनुसार, न्याय नागरिक प्राधिकरण द्वारा नहीं बनाया गया है। सेंट एक्विनास ने अरस्तू के साथ समानता पर आधारित न्याय की अवधारणा स्वीकार किया

**कार्ल मार्क्स** कार्ल मार्क्स के अनुसार न्याय उत्पादन के तरीकों और उत्पादन के संबंधों पर निर्भर करता है। न्याय और इसकी सामग्री शासक वर्ग के आर्थिक हित के साथ बदलती है। इस अवधारणा के बारे में चर्चा प्राचीन भारत के दार्शनिकों के विचारों के संदर्भ के बिना न्याय पूरी नहीं हो सकती। मनुस्मृति हिंदू का एक बहुत ही महत्वपूर्ण हिस्सा है जिसके अंतरगत "धर्म" लगभग "न्याय" या न्याय का पर्याय है। गौतम बुद्ध की न्याय की अवधारणा केवल कानून के सम्मान तक ही सीमित नहीं है, बल्कि यदि कानून बुरा है, तो अवज्ञा या कानून की अवहेलना की क्रांतिकारी अवधारणा को सही ठहराता है।

न्याय की मुख्य अवधारणाएँ। "प्रत्येक के लिए समान" का अर्थ है कि सभी लोगों के साथ समान व्यवहार किया जाना चाहिए "प्रत्येक को उसकी योग्यता के अनुसार" का अर्थ है मनुष्य उनकी योग्यता के अनुसार आनुपातिक विचार प्राप्त करना चाहिए। "प्रत्येक को उसके कर्मों के अनुसार" का अर्थ है सभी के लिए समान व्यवहार नहीं बल्कि उनके कार्यों के परिणामों के अनुसार। "प्रत्येक को उसके नीड्स अनुसार इस न्याय सूत्र को दान के समान बनाता है। "प्रत्येक को उसकी रैंक के अनुसार" का अर्थ पहचानना है

बेंथम की न्याय की अवधारणा उपयोगिता के उनके विचार को दर्शाती है क्योंकि यह कानून में वैध है। 19 बेंथम के शिष्य, जॉन स्टुअर्ट मिल आगे बेंथम की न्याय की अवधारणा की व्याख्या इस बात पर विचार करते हुए करते हैं कि व्यक्ति अपनी खुशी का त्याग कर सकता है पुण्य के लिए, जो खुशी से बेहतर है। इमैनुएल कांट के अनुसार, कोई भी कार्य जो अच्छा है किसी और चीज का साधन, एक काल्पनिक अनिवार्यता है

---

## 1.6 सार संक्षेप

---

अंतः हम ये कह सकते हैं किमानवाधिकार यह सुनिश्चित करते हैं कि लोगों की बुनियादी ज़रूरतें पूरी हों। वे कमजोर समूहों को दुर्यवहार से बचाते हैं। मानवाधिकार लोगों को सामाजिक भ्रष्टाचार के खिलाफ खड़े होने की अनुमति देते हैं। मानवाधिकार बोलने और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को प्रोत्साहित करते हैं और मानवाधिकार समान काम के अवसरों को प्रोत्साहित करते हैं जिससे एक सभ्य और सशक्त समाज की स्थापना की जा सके।

---

## 1.7 परिभाषिक शब्दावली

---

मानवाधिकार- मानव को जन्म से प्राप्त प्राकृतिक अधिकार।सामाजिक न्याय सामाजिक न्याय- समाज में संसाधनों, अवसरों और विशेषाधिकारों के उचित और न्यायसंगत विभाजन को संदर्भित करता है।

---

## 1.8 अभ्यास प्रश्न लघु

---

लघु प्रश्न:

1. मानव अधिकार एवं सामाजिक न्याय के अवधारण की व्याख्या कीजिये।

.....

.....

.....

.....

2. सामाजिक न्याय और के विभिन्न प्रकारों का संकल्पित विवरण दीजिये।

.....

.....

.....

.....

**विस्तृत प्रश्न:**

1. मानवाधिकारों के उद्घाटन का विश्लेषण करते हुए इसकी विभिन्न परिभाषाओं की व्याख्या कीजिये।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2. सामाजिक न्याय के बारे में विभिन्न दार्शनिकों के मतों का विश्लेषण कीजिये।

.....

.....

---

---

---

---

---

---

---

---

---

---

## 1.9 संदर्भ सूची:

---

1. ऑसैमुअल मोयन, द लास्ट यूटोपिया: ह्यूमन राइट्स इन हिस्ट्री (हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2010)
2. स्कॉट मैकलेमी, "द लास्ट यूटोपिया" इनसाइड हायर एजुकेशन 8 दिसंबर, 2010 ऑनलाइन
3. मानवाधिकार: प्रतिबद्धता और विश्वासघात, एम.जी. चितकारा। प्रकाशक, एपीएच प्रकाशन, 1996। आईएसबीएन 978-8170247272।
4. सैमुअल मोयन, 6 सितंबर, 2010 का 30 अगस्त-संस्करण, द नेशन, ह्यूमन राइट्स इन हिस्ट्री: ह्यूमन राइट्स 1940 के दशक में नहीं बल्कि 1970 के दशक में उभरा, और पूर्व सपनों के खंडहर पर, 14 अगस्त 2014 को पुनःप्राप्त
5. माइकल फ्रीमैन (2002)। मानवाधिकार: एक अंतःविषय दृष्टिकोण। पीपी. 15-17.
6. योफी, नॉर्मन (2005)। पुरातन राज्य के मिथक: प्रारंभिक शहरों, राज्यों और सभ्यताओं का विकास। कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस. पी। 103. आईएसबीएन 978-0521521567।
7. गस्टाइन, और एफ आर मोंटगोमरी हिचकॉक। 1922. सिटी ऑफ़ गॉड पर सेंट ऑगस्टाइन का ग्रंथ।
8. रोनल्ड डॉर्किन, ए मैटर ऑफ़ प्रिंसिपल, पी। 104-118, हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1985।
9. जॉन स्टुअर्ट मिल, उपयोगितावाद 36, ईबुक, गुटेनबर्ग, 2004।
10. इमैनुअल कांट, द फिलॉसफी ऑफ़ लॉ: एन एक्सपोजिशन ऑफ़ द

11. अधिकार के विज्ञान के रूप में न्यायशास्त्र का, लिबर्टी फंड इंक, ईबुक, 2010।
12. जॉन रॉल्स, ए थ्योरी ऑफ जस्टिस, कैम्ब्रिज, एमए, द बेलकनैप प्रेस ऑफ हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1971।
13. जॉन रॉल्स, ए थ्योरी ऑफ जस्टिस, कैम्ब्रिज, एमए, द बेलकनैप प्रेस ऑफ हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1971।
14. <https://ethicalrealism.wordpress.com/2011/04/26/three-theories-of-justice/>
15. [https://shodhganga.inflibnet.ac.in/bitstream/10603/67805/6/06\\_chapter%202.pdf](https://shodhganga.inflibnet.ac.in/bitstream/10603/67805/6/06_chapter%202.pdf)



# इकाई-6 मौलिक अधिकार और भारतीय संविधान

---

## इकाई की रूपरेखा

- 1.0 इकाई का उद्देश्य
- 1.1 परिचय
- 1.2 भारत का संविधान
- 1.3 मौलिक अधिकारों की अवधारणा और ऐतिहासिक पृष्ठभूमि
- 1.4 मौलिक अधिकारों की विशेषताएं
- 1.5 मौलिक अधिकारों की व्याख्या
- 1.6 सार संक्षेप
- 1.7 परिभाषिक शब्दावली
- 1.8 अभ्यास प्रश्न लघु विवरण
- 1.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

---

## 1.0 इकाई का उद्देश्य

---

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप यह जान सकेंगे कि लोकतांत्रिक देशों में लोगों को कुछ अधिकार प्राप्त होते हैं, जो संबंधित देश की न्यायिक प्रणाली द्वारा संरक्षित होते हैं। उनका उल्लंघन, यहां तक कि राज्य द्वारा भी, अदालतों द्वारा अनुमति नहीं दी जाती है। ऐसे अधिकारों को "मौलिक अधिकार" कहा जाता है। भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता जैसे बुनियादी अधिकारों के अभाव में कोई भी लोकतंत्र कार्य नहीं कर सकता है। भारत के संविधान में 'मौलिक अधिकार' निहित हैं। इस इकाई के अध्ययन के बाद, छात्र हमारे देश में विभिन्न सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक और राजनीतिक समस्याओं के बारे में ज्ञान प्राप्त करने में सक्षम होंगे जो मौलिक अधिकारों को महत्वपूर्ण बनाते हैं। संविधान के अनुच्छेद 14 से 32 तक भाग III में मौलिक अधिकारों की गणना की गई है। आप यह भी जानेंगे कि कुछ अधिकार ऐसे हैं जो केवल भारत के नागरिकों के लिए उपलब्ध हैं जबकि कुछ सभी व्यक्तियों - नागरिकों और गैर-नागरिकों के लिए उपलब्ध हैं। अनुच्छेद 15, 16, 19, 29 और 30 द्वारा

## 1-1 परिचय

---

भारतीय गणराज्य भारत के संविधान के अनुसार शासित है जिसे 26 नवंबर, 1949 को संविधान सभा द्वारा अपनाया गया था और 26 जनवरी, 1950 को लागू हुआ था। संविधान सरकार के संसदीय स्वरूप का प्रावधान करता है, जो संरचना में कुछ एकात्मक और संघीय है भारतीय संविधान के अनुच्छेद 12-35 मौलिक अधिकारों से संबंधित हैं। ये मानवाधिकार भारत के नागरिकों को प्रदान किए जाते हैं , क्योंकि संविधान बताता है कि ये अधिकार अनुल्लंघनीय हैं। जीवन का अधिकार, गरिमा का अधिकार, शिक्षा का अधिकार आदि सभी छह मुख्य मौलिक अधिकारों में से एक के अंतर्गत आते हैं। मौलिक अधिकार संविधान द्वारा सुरक्षित और सुनिश्चित किए जाते हैं। इसके बाद, दुरु्यवहार करने वाली पार्टी लुभाने के तरीके के विपरीत सीधे किसी भी उल्लंघन के लिए SC की ओर जा सकती है। संसद एक स्थापित परिवर्तन अधिनियम के माध्यम से FRs की व्यवस्था को बदल सकती है क्योंकि वे भारतीय संविधान के मूल डिजाइन की अवहेलना नहीं करते हैं। अनुच्छेद 20 और 21 द्वारा सुनिश्चित किए गए विशेषाधिकारों से अलग राष्ट्रीय आपातकाल की गतिविधि के दौरान एफआर को निलंबित किया जा सकता है। पूर्ण अधिकार नहीं, इसके अलावा, अनुच्छेद 19 के तहत मौलिक अधिकारों को युद्ध या बाहरी शत्रुता के आधार पर घोषित संकट की गतिविधि के दौरान विशिष्ट रूप से निलंबित किया जा सकता है संसद सैन्य, अर्ध-सैन्य शक्तियों, पुलिस शक्तियों, अंतर्दृष्टि संगठनों और प्रशासन के समान होने के कारण एफआर के उपयोग को सीमित या रद्द कर सकती है। सैन्य विनियमन लागू होने पर मौलिक अधिकार सीमित हो सकते हैं मौलिक अधिकारों को लागू करने के लिए संसद के अलावा कोई भी नियम नहीं बना सकता है।

---

## 1.3 भारत का संविधान

---

भारत का संविधान एक प्रस्तावना के साथ शुरू होता है। प्रस्तावना में संविधान के आदर्श, उद्देश्य और बुनियादी सिद्धांत शामिल हैं। संविधान की मुख्य विशेषताएं इन उद्देश्यों से प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से विकसित हुई हैं

जो प्रस्तावना से प्रवाहित होती हैं। हमारे संविधान ने देश की आवश्यकता के अनुसार विश्व के अधिकांश प्रमुख संविधानों की सर्वोत्तम विशेषताओं को अपनाया है। हालांकि दुनिया के लगभग हर संविधान से उधार लिया गया है, भारत के संविधान में कई प्रमुख विशेषताएं हैं नीचे सूचीबद्ध और संक्षिप्त हैं:

1. **सबसे लंबा लिखित संविधान :** भारतीय संविधान को अमेरिकी संविधान की तरह लिखित या ब्रिटिश संविधान की तरह अलिखित में वर्गीकृत किया गया है। भारत के संविधान को दुनिया का अब तक का सबसे लंबा और विस्तृत संवैधानिक दस्तावेज होने का गौरव प्राप्त है। दूसरे शब्दों में, भारत का संविधान दुनिया के सभी लिखित संविधानों में सबसे लंबा है। यह एक बहुत व्यापक, विस्तृत और विस्तृत दस्तावेज है। भारतीय संविधान के निर्माण में योगदान करने वाले कारक हैं भौगोलिक कारक, यानी देश की विशालता और इसकी विविधता, ऐतिहासिक कारक, उदाहरण के लिए, 1935 के भारत सरकार अधिनियम का प्रभाव, जो भारी था। केंद्र और राज्यों दोनों के लिए एक ही संविधान। संविधान सभा में कानूनी दिग्गजों का दबदबा। भारत के संविधान में न केवल शासन के मौलिक सिद्धांत हैं बल्कि विस्तृत प्रशासनिक प्रावधान भी हैं। न्यायसंगत और गैर-न्यायिक दोनों अधिकार संविधान में शामिल हैं।
2. **विभिन्न स्रोतों से लिया गया :** भारत के संविधान ने अपने अधिकांश प्रावधानों को विभिन्न अन्य देशों के संविधानों के साथ-साथ 1935 के भारत सरकार अधिनियम [1935 अधिनियम के लगभग 250 प्रावधानों को संविधान में शामिल किया गया है] से उधार लिया है। डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने गर्व से कहा कि भारत के संविधान को 'दुनिया के सभी ज्ञात संविधानों को बर्बाद' करने के बाद तैयार किया गया है। संविधान का संरचनात्मक हिस्सा काफी हद तक 1935 के भारत सरकार अधिनियम से लिया गया है। संविधान का दार्शनिक हिस्सा (मौलिक अधिकार और राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांत) क्रमशः अमेरिकी और आयरिश संविधानों से उनकी प्रेरणा प्राप्त करते हैं। संविधान का राजनीतिक हिस्सा (कैबिनेट सरकार का सिद्धांत और कार्यपालिका और विधायिका के बीच संबंध) काफी हद तक ब्रिटिश संविधान से लिया गया है।

3. **कठोरता और लचीलेपन का मिश्रण:** संविधान को कठोर और लचीले में वर्गीकृत किया गया है। एक कठोर संविधान वह है जिसके संशोधन के लिए एक विशेष प्रक्रिया की आवश्यकता होती है, उदाहरण के लिए, अमेरिकी संविधान। एक लचीला संविधान वह है जिसे सामान्य कानूनों की तरह संशोधित किया जा सकता है, उदाहरण के लिए, ब्रिटिश संविधान। भारतीय संविधान कठोरता और लचीलेपन के मेल का अनूठा उदाहरण है। एक संविधान को उसकी संशोधन प्रक्रिया के आधार पर कठोर या लचीला कहा जा सकता है। भारतीय संविधान तीन प्रकार के संशोधन प्रदान करता है, जो सरल से लेकर सबसे कठिन प्रक्रियाओं पर निर्भर करता है
4. **एकात्मकता के साथ संघीय प्रणाली:** भारत का संविधान सरकार की एक संघीय प्रणाली स्थापित करता है। इसमें एक संघ की सभी सामान्य विशेषताएं शामिल हैं, जैसे दो सरकारें, शक्तियों का विभाजन, लिखित संविधान, संविधान की सर्वोच्चता, संविधान की कठोरता, स्वतंत्र न्यायपालिका और द्विसदनीयता। हालाँकि, भारतीय संविधान में बड़ी संख्या में एकात्मक या गैर-संघीय विशेषताएं भी शामिल हैं, जैसे कि एक मजबूत केंद्र, एकल संविधान, केंद्र द्वारा राज्य के राज्यपाल की नियुक्ति, अखिल भारतीय सेवाएं, एकीकृत न्यायपालिका, और इसी तरह। इसके अलावा, संविधान में कहीं भी 'फेडरेशन' शब्द का इस्तेमाल नहीं किया गया है। अनुच्छेद 1, भारत को 'राज्यों के संघ' के रूप में वर्णित करता है जिसका तात्पर्य दो चीजों से है: भारतीय संघ राज्यों के समझौते का परिणाम नहीं है। किसी भी राज्य को संघ से अलग होने का अधिकार नहीं है। इसलिए, के सी व्हेयर द्वारा भारतीय संविधान को विभिन्न प्रकार से 'रूप में संघीय लेकिन भावना में एकात्मक', 'अर्ध-संघीय' के रूप में वर्णित किया गया है।
5. **सरकार का संसदीय स्वरूप :** भारत के संविधान ने सरकार की अमेरिकी राष्ट्रपति प्रणाली के बजाय सरकार की ब्रिटिश संसदीय प्रणाली को चुना है। संसदीय प्रणाली विधायी और कार्यकारी अंगों के बीच सहयोग और समन्वय के सिद्धांत पर आधारित है जबकि राष्ट्रपति प्रणाली दो अंगों

के बीच शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत पर आधारित है। सरकार के राष्ट्रपति और संसदीय रूपों के बीच अंतर के बारे में अधिक पढ़ने के लिए, लिंक किए गए लेख को देखें। संसदीय प्रणाली को सरकार, जिम्मेदार सरकार और कैबिनेट सरकार के 'वेस्टमिंस्टर' मॉडल के रूप में भी जाना जाता है। संविधान न केवल केंद्र में बल्कि राज्यों में भी संसदीय प्रणाली की स्थापना करता है। प्रणाली में प्रधानमंत्री की भूमिका इतनी महत्वपूर्ण हो गई है, और इसलिए इसे 'प्रधानमंत्री स्तरीय सरकार' कहा जाता है।

6. **संसदीय संप्रभुता और न्यायिक सर्वोच्चता का संश्लेषण:** संसद की संप्रभुता का सिद्धांत ब्रिटिश संसद से जुड़ा है जबकि न्यायिक सर्वोच्चता का सिद्धांत अमेरिकी सुप्रीम कोर्ट के साथ। जिस प्रकार भारतीय संसदीय प्रणाली ब्रिटिश प्रणाली से भिन्न है, भारत में सर्वोच्च न्यायालय की न्यायिक समीक्षा शक्ति का दायरा अमेरिका की तुलना में संकीर्ण है। ऐसा इसलिए है क्योंकि अमेरिकी संविधान भारतीय संविधान (अनुच्छेद 21) में निहित 'कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया' के खिलाफ 'कानून की उचित प्रक्रिया' प्रदान करता है। इसलिए, भारतीय संविधान के निर्माताओं ने संसदीय संप्रभुता के ब्रिटिश सिद्धांत और न्यायिक सर्वोच्चता के अमेरिकी सिद्धांत के बीच एक उचित संश्लेषण को प्राथमिकता दी है। सर्वोच्च न्यायालय अपनी न्यायिक समीक्षा की शक्ति के माध्यम से संसदीय कानूनों को असंवैधानिक घोषित कर सकता है। संसद अपनी संवैधानिक शक्ति के माध्यम से संविधान के अधिकांश भाग में संशोधन कर सकती है।

7. **कानून का शासन:** इसके अनुसार, लोग कानून द्वारा शासित होते हैं, लेकिन लोगों द्वारा नहीं, यानी बुनियादी सत्यवाद कि कोई भी व्यक्ति अचूक नहीं है। लोकतंत्र के लिए स्वयंसिद्ध महत्वपूर्ण है। अधिक महत्वपूर्ण अर्थ यह है कि लोकतंत्र में कानून संप्रभु है। का मुख्य घटक प्रथा है जो कुछ और नहीं बल्कि वर्षों की लंबी संख्या में आम लोगों की अभ्यस्त प्रथाओं और विश्वासों के अलावा कुछ भी नहीं है। अंतिम विश्लेषण में, कानून के शासन का अर्थ आम आदमी के सामूहिक ज्ञान

की संप्रभुता है। इस महत्वपूर्ण अर्थ के अलावा, कानून का शासन कुछ और चीजों का मतलब है जैसे मनमानी की कोई गुंजाइश नहीं है प्रत्येक व्यक्ति को कुछ मौलिक अधिकार प्राप्त होते हैं, और उच्चतम न्यायपालिका भूमि के कानून की पवित्रता को बनाए रखने में अंतिम अधिकार है। भारत के संविधान ने इस सिद्धांत को भाग III में शामिल किया है और अनुच्छेद 14 को अर्थ प्रदान करने के लिए (सभी कानून के समक्ष समान हैं और सभी कानूनों की समान सुरक्षा का आनंद लेते हैं), लोक अदालतों का प्रचार और सर्वोच्च न्यायालय के उद्यम को "" के रूप में जाना जाता है। जनहित याचिका" लागू की गई है। साथ ही, देश के आज के कानून के अनुसार, कोई भी वादी पीठासीन न्यायिक प्राधिकरण से अपील कर सकता है कि वह स्वयं मामले में बहस करे या न्यायपालिका की मदद से कानूनी सहायता प्राप्त करे।

8. **एकीकृत और स्वतंत्र न्यायपालिका:** भारत में एकल एकीकृत न्यायिक प्रणाली है। साथ ही, भारतीय संविधान कार्यपालिका और विधायिका के प्रभाव से मुक्त होने के लिए भारतीय न्यायपालिका को सक्षम करके स्वतंत्र न्यायपालिका की स्थापना करता है। सर्वोच्च न्यायालय न्यायिक प्रणाली के शीर्ष न्यायालय के रूप में खड़ा है। सर्वोच्च न्यायालय के नीचे राज्य स्तर पर उच्च न्यायालय हैं। एक उच्च न्यायालय के तहत, अधीनस्थ न्यायालयों का एक पदानुक्रम होता है, जो कि जिला अदालतें और अन्य निचली अदालतें होती हैं। सर्वोच्च न्यायालय एक संघीय अदालत है, अपील की सर्वोच्च अदालत, नागरिकों के मौलिक अधिकारों का गारंटर और संविधान का संरक्षक है। इसलिए, संविधान ने अपनी स्वतंत्रता सुनिश्चित करने के लिए विभिन्न प्रावधान किए हैं।
9. **मौलिक अधिकार :** भारतीय संविधान का भाग III सभी नागरिकों को छह मौलिक अधिकारों की गारंटी देता है। मौलिक अधिकार भारतीय संविधान की महत्वपूर्ण विशेषताओं में से एक हैं। संविधान में मूल सिद्धांत है कि प्रत्येक व्यक्ति एक मनुष्य के रूप में कुछ अधिकारों का आनंद लेने का हकदार है और ऐसे अधिकारों का उपभोग किसी बहुमत या अल्पसंख्यक की इच्छा पर निर्भर नहीं करता है। किसी भी बहुमत को

ऐसे अधिकारों को निरस्त करने का अधिकार नहीं है। मौलिक अधिकार राजनीतिक लोकतंत्र के विचार को बढ़ावा देने के लिए हैं। वे कार्यपालिका की निरंकुशता और विधायिका के मनमाने कानूनों की सीमाओं के रूप में कार्य करते हैं। वे प्रकृति में न्यायसंगत हैं, अर्थात्, उनके उल्लंघन के लिए अदालतों द्वारा लागू करने योग्य हैं।

10. **राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत:** डॉ बी आर अम्बेडकर के अनुसार, राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांत भारतीय संविधान की एक 'नवीन विशेषता' है। इनकी गणना संविधान के भाग IV में की गई है। हमारे लोगों को सामाजिक और आर्थिक न्याय प्रदान करने के लिए निर्देशक सिद्धांतों को हमारे संविधान में शामिल किया गया था। निर्देशक सिद्धांतों का उद्देश्य भारत में एक कल्याणकारी राज्य की स्थापना करना है जहां कुछ लोगों के हाथों में धन का संकेन्द्रण नहीं होगा। वे प्रकृति में गैर-न्यायिक हैं। मिन्वा मिल्स मामले (1980) में, सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि 'भारतीय संविधान की स्थापना मौलिक अधिकारों और निर्देशक सिद्धांतों के बीच संतुलन के आधार पर की गई है'।

11. **मौलिक कर्तव्य:** मूल संविधान में नागरिकों के मौलिक कर्तव्यों का प्रावधान नहीं था। स्वर्ण सिंह समिति की सिफारिश पर 1976 के 42वें संशोधन अधिनियम द्वारा मौलिक कर्तव्यों को हमारे संविधान में जोड़ा गया था। यह भारत के सभी नागरिकों के लिए दस मौलिक कर्तव्यों की एक सूची देता है। बाद में, 2002 के 86वें संविधान संशोधन अधिनियम में एक और मौलिक कर्तव्य जोड़ा गया। जबकि अधिकार लोगों को गारंटी के रूप में दिए जाते हैं, कर्तव्य ऐसे दायित्व हैं जिन्हें पूरा करने की अपेक्षा प्रत्येक नागरिक से की जाती है। हालाँकि, राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों की तरह, कर्तव्य भी प्रकृति में गैर-न्यायोचित हैं। कुल मिलाकर 11 मौलिक कर्तव्य हैं।

12. **भारतीय धर्मनिरपेक्षता :** भारत का संविधान एक धर्मनिरपेक्ष राज्य के लिए खड़ा है। इसलिए, यह भारतीय राज्य के आधिकारिक धर्म के रूप में किसी विशेष धर्म का समर्थन नहीं करता है। एक धर्मनिरपेक्ष लोकतंत्र भारत के संविधान की विशिष्ट विशेषता है। राज्य स्वयं को किसी धर्म के

साथ नहीं जोड़ेगा या उसके द्वारा नियंत्रित नहीं होगा जबकि राज्य हर किसी को किसी भी धर्म का पालन करने के अधिकार की गारंटी देता है (जिसमें एक विरोधी या नास्तिक होने का अधिकार भी शामिल है), यह उनमें से किसी को भी अधिमान्य उपचार नहीं देगा, राज्य द्वारा किसी भी व्यक्ति के खिलाफ उसके धर्म या आस्था के आधार पर कोई भेदभाव नहीं दिखाया जाएगा और किसी भी सामान्य शर्त के अधीन राज्य के अधीन किसी भी कार्यालय में प्रवेश करने का प्रत्येक नागरिक का अधिकार साथी नागरिकों के समान होगा। राजनीतिक समानता जो किसी भी भारतीय नागरिक को राज्य के तहत सर्वोच्च पद पाने का अधिकार देती है, संविधान द्वारा परिकल्पित धर्मनिरपेक्षता का दिल और आत्मा है। एक धर्मनिरपेक्ष राज्य की स्थापना करने का मतलब यह नहीं है कि भारत में राज्य धर्म विरोधी है। धर्मनिरपेक्षता की पश्चिमी अवधारणा धर्म और राज्य के बीच पूर्ण अलगाव को दर्शाती है (धर्मनिरपेक्षता की नकारात्मक अवधारणा)। लेकिन, भारतीय संविधान धर्मनिरपेक्षता की सकारात्मक अवधारणा का प्रतीक है, यानी सभी धर्मों को समान सम्मान देना या सभी धर्मों की समान रूप से रक्षा करना। इसके अलावा, संविधान ने सांप्रदायिक प्रतिनिधित्व की पुरानी व्यवस्था को भी समाप्त कर दिया है। हालांकि, यह अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए पर्याप्त प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने के लिए सीटों के अस्थायी आरक्षण का प्रावधान करता है।

13. **सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार और एकल नागरिकता:** भारतीय लोकतंत्र 'एक व्यक्ति एक मत' के आधार पर कार्य करता है। भारत का प्रत्येक नागरिक जो 18 वर्ष या उससे अधिक आयु का है, जाति, लिंग, नस्ल, धर्म या स्थिति के बावजूद चुनाव में वोट देने का हकदार है। भारतीय संविधान सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार की पद्धति के माध्यम से भारत में राजनीतिक समानता स्थापित करता है। एक संघीय राज्य में आमतौर पर नागरिक दोहरी नागरिकता का आनंद लेते हैं जैसा कि संयुक्त राज्य अमेरिका में होता है। भारत में केवल एक ही नागरिकता है। इसका अर्थ है कि प्रत्येक भारतीय भारत का नागरिक है, चाहे उसका



निवास स्थान या जन्म स्थान कुछ भी हो। वह झारखंड, उत्तरांचल या छत्तीसगढ़ जैसे घटक राज्य का नागरिक नहीं है, जिससे वह संबंधित हो सकता है, लेकिन भारत का नागरिक बना रहता है। भारत के सभी नागरिक देश में कहीं भी रोजगार सुरक्षित कर सकते हैं और भारत के सभी हिस्सों में समान रूप से सभी अधिकारों का आनंद ले सकते हैं। संविधान निर्माताओं ने जानबूझकर क्षेत्रवाद और अन्य विघटनकारी प्रवृत्तियों को खत्म करने के लिए एकल नागरिकता का विकल्प चुना। एकल नागरिकता ने निस्संदेह भारत के लोगों में एकता की भावना पैदा की है।

**14. आपातकालीन प्रावधान :** संविधान निर्माताओं ने यह भी अनुमान लगाया था कि ऐसी स्थितियाँ हो सकती हैं जब सरकार को सामान्य समय की तरह नहीं चलाया जा सकता है। ऐसी स्थितियों से निपटने के लिए, संविधान आपातकालीन प्रावधानों पर विस्तार से बताता है। आपातकाल स्थितियाँ तीन प्रकार का होता है 1. युद्ध, बाहरी आक्रमण या सशस्त्र विद्रोह के कारण आपातकाल [अनुच्छेद 352] 2. राज्यों में संवैधानिक तंत्र की विफलता से उत्पन्न आपातकाल [अनुच्छेद 356 और 365] 3. वित्तीय आपातकाल [अनुच्छेद 360]। इन प्रावधानों को शामिल करने के पीछे तर्कसंगतता देश की संप्रभुता, एकता, अखंडता और सुरक्षा, लोकतांत्रिक राजनीतिक व्यवस्था और संविधान की रक्षा करना है। आपातकाल के दौरान, केंद्र सरकार सर्व-शक्तिशाली हो जाती है और राज्य केंद्र के पूर्ण नियंत्रण में चले जाते हैं। संघीय (सामान्य समय के दौरान) से एकात्मक (आपातकाल के दौरान) राजनीतिक व्यवस्था का इस तरह का परिवर्तन भारतीय संविधान की एक अनूठी विशेषता है।

**15. त्रिस्तरीय सरकार :** मूल रूप से, भारतीय संविधान में दोहरी राजव्यवस्था प्रदान की गई थी और इसमें केंद्र और राज्यों के संगठन और शक्तियों के संबंध में प्रावधान थे। बाद में, 73वें और 74वें संवैधानिक संशोधन अधिनियम (1992) ने सरकार के एक तीसरे स्तर (अर्थात्, स्थानीय सरकार) को जोड़ा है, जो दुनिया के किसी भी अन्य संविधान में नहीं पाया जाता है। 1992 के 73वें संशोधन अधिनियम ने संविधान में एक

नया भाग IX और एक नई अनुसूची 11 जोड़कर पंचायतों (ग्रामीण स्थानीय सरकारों) को संवैधानिक मान्यता दी। इसी प्रकार, 1992 के 74वें संशोधन अधिनियम ने संविधान में एक नया भाग IX-A और एक नई अनुसूची 12 जोड़कर नगर पालिकाओं (शहरी स्थानीय सरकार) को संवैधानिक मान्यता प्रदान की।

16. **सहकारी समितियाँ:** 2011 के 97वें संविधान संशोधन अधिनियम ने सहकारी समितियों को संवैधानिक दर्जा और संरक्षण प्रदान किया। इस संदर्भ में, इसने संविधान में निम्नलिखित तीन परिवर्तन किए: इसने सहकारी समितियों के गठन के अधिकार को मौलिक अधिकार बना दिया (अनुच्छेद 19)। इसमें सहकारी समितियों के प्रचार पर राज्य नीति के एक नए निर्देशक सिद्धांत (अनुच्छेद 43-बी) शामिल थे। इसने संविधान में एक नया भाग IX-B जोड़ा, जिसका शीर्षक है "सहकारी समितियाँ" [अनुच्छेद 243-ZH से 243-ZT]। नए भाग IX-B में यह सुनिश्चित करने के लिए विभिन्न प्रावधान हैं कि देश में सहकारी समितियाँ लोकतांत्रिक, पेशेवर, स्वायत्त और आर्थिक रूप से सुदृढ़ तरीके से कार्य करें। यह बहु-राज्य सहकारी समितियों के संबंध में संसद को और अन्य सहकारी समितियों के संबंध में राज्य विधानसभाओं को उपयुक्त कानून बनाने का अधिकार देता है।

### 1.3 मौलिक अधिकारों की अवधारणा और ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

मौलिक अधिकार वे अधिकार हैं जो सभी लोगों के नैतिक और बौद्धिक विकास के लिए महत्वपूर्ण हैं। ये व्यक्तियों के सर्वांगीण विकास के लिए आवश्यक हैं, इसलिए इन्हें मौलिक अधिकार कहा जाता है। मौलिक अधिकार भारत के संविधान में निहित बुनियादी मानवाधिकार हैं जो सभी नागरिकों के लिए गारंटीकृत हैं। उन्हें नस्ल, धर्म, लिंग आदि के आधार पर बिना किसी भेदभाव के लागू किया जाता है। गौरतलब है कि मौलिक अधिकार कुछ शर्तों के अधीन अदालतों द्वारा लागू किए जा सकते हैं। इन अधिकारों को दो कारणों से मौलिक अधिकार कहा जाता है:

1. वे संविधान में निहित हैं जो उन्हें गारंटी देता है

2. वे न्यायसंगत हैं (अदालतों द्वारा लागू)। उल्लंघन के मामले में, एक व्यक्ति कानून की अदालत से संपर्क कर सकता है।

**ऐतिहासिक पृष्ठभूमि :** अधिकारों की धारणा जो अंततः मौलिक अधिकारों के रूप में जानी गई भारतीय संविधान उन्नीसवीं शताब्दी से विकसित हुआ। ग्रानविले ऑस्टिन का मत है मौलिक अधिकारों की अवधारणा के गठन में निहित था 1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, जिसमें भारतीय समान अधिकार चाहते थे और वे विशेषाधिकार जो अंग्रेजों को भारत और इंग्लैंड में प्राप्त थे। इनमें से कुछ अधिकार भारतीय संविधान विधेयक, 1895 जैसे दस्तावेजों में शामिल थे। यह भारतीयों को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, केवल कारावास जैसे अधिकार प्रदान करने के लिए बिल की मांग की गई सक्षम प्राधिकारी द्वारा, और मुफ्त राज्य शिक्षा। निम्नलिखित अवधि में, मांग करता है ब्रिटिश सरकार को अधिकार देने के लिए कहने के लिए कई तिमाहियों से किए गए थे भारतीयों। इन मांगों को भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा प्रस्तावों में किया गया था 1917 और 1919 के बीच, कई विधेयकों और समिति की रिपोर्टों में एनी बेसेंट द्वारा तैयार किया गया भारत का राष्ट्रमंडल विधेयक, 1925, नेहरू रिपोर्ट 1928, 1945 की सप्रू रिपोर्ट और संविधान सभा की उप-समिति मौलिक अधिकारों पर लोगों के अधिकारों के बारे में प्रावधान थे।

#### ● कॉमनवेल्थ ऑफ इंडिया बिल, 1925:

भारत के राष्ट्रमंडल विधेयक ने भारतीयों के *nivasiyo ke liye* सात मौलिक अधिकारों की मांग की। इन अधिकारों में शामिल हैं: व्यक्तिगत स्वतंत्रता, अंतरात्मा की स्वतंत्रता, राय की स्वतंत्र अभिव्यक्ति, स्वतंत्र सभा और कानून के समक्ष समानता। बिल में प्रारंभिक शिक्षा के अधिकार, सड़कों के उपयोग के समान अधिकार के प्रावधान थे, न्यायालय और जनता के लिए समर्पित व्यवसाय *ki maang ki gai thi*.

#### ● नेहरू रिपोर्ट, 1928 :

कांग्रेस ने अपने तैंतालीसवें वार्षिक सत्र में समिति गठित करने का प्रस्ताव पारित किया "भारत के लिए एक स्वराज संविधान" का मसौदा तैयार करने के उद्देश्य से मद्रास में आयोजित किया गया। अधिकारों की

घोषणा इस प्रारूप संविधान का आधार होना था। करने का कार्यसंविधान का मसौदा एक समिति को सौंपा गया था। यह कमेटी बनी इसके अध्यक्ष मोतीलाल नेहरू के नाम पर नेहरू समिति के रूप में जाना जाता है। नेहरू रिपोर्ट मौलिक अधिकारों को हासिल करने की आवश्यकता को रेखांकित किया गया था जिन्हें अस्वीकार कर दिया गया था उन्हें औपनिवेशिक सरकार द्वारा दरअसल, नेहरू में मौलिक अधिकार रिपोर्ट भारत के राष्ट्रमंडल में उल्लिखित अधिकारों की पुनरावृत्ति थी बिल, जिसके बारे में आप ऊपर पढ़ चुके हैं। इस रिपोर्ट में प्रमुखता से रेखांकित किया गया है अल्पसंख्यक अधिकारों की रक्षा करने की आवश्यकता है। कांग्रेस पार्टी ने 1931 में अपने अधिवेशन में आयोजित किया था कराची ने एक प्रस्ताव पारित किया जिसे कराची संकल्प के रूप में जाना जाने लगा। कराची संकल्प ने जनता के शोषण को समाप्त करने की आवश्यकता पर प्रकाश डाला और आर्थिक स्वतंत्रता को राजनीतिक स्वतंत्रता से जोड़ने के लिए। इसने सुझाव दिया कि काम करने वालों के हितों की रक्षा के लिए उपयुक्त कानून बनाए जाने चाहिए।

- **सप्रू रिपोर्ट, 1945 :**

भावी भारत के लिए संविधान कमेटी में तीस सदस्य थे। इसके अध्यक्ष तेज बहादुर सप्रू के नाम पर सप्रू समिति के रूप में जाना जाता है। वे एक प्रतिष्ठित वकील थे। रिपोर्ट 1945 में प्रकाशित हुई थी। सप्रू समिति ने अधिकारों के बारे में दो सुझाव दिये एक, इसने न्यायसंगत अधिकारों और गैर-न्यायिक अधिकारों के बीच भेद किया। दो, इसने सुझाव दिया कि अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा करनी चाहिए।

- **मौलिक अधिकारों पर उप-समिति :**

संविधान सभा ने विभिन्न प्रकार के संविधान समितियां का गठन किया था। ऐसा ही एक समिति को मौलिक अधिकारों, अल्पसंख्यक और आदिवासी और बहिष्कृत क्षेत्र अधिकारों के बारे में सुझाव देना था। इसकी अध्यक्षता सरदार बल्लभभाई पटेल ने की थी। इस समिति को

उप-समितियों में विभाजित किया गया था। ऐसी ही एक उपसमिति मौलिक अधिकारों पर भी थी जिसकी, की अध्यक्षता जेबी कृपलानी ने की थी। यह समिति महिलाओं सहित समाज के विभिन्न वर्गों का प्रतिनिधित्व के पक्ष में थी राइट सब-कमेटी ने मौलिक अधिकारों को न्यायसंगत अधिकार के रूप में शामिल करना का अहम फैसला लिया अधिकार उप-समिति को भाग III में मौलिक अधिकारों के रूप में शामिल किया गया था

---

## 1.4 मौलिक अधिकारों की विशेषताएं:

---

1. मौलिक अधिकार सामान्य कानूनी अधिकारों से भिन्न होते हैं जिस तरह से उन्हें लागू किया जाता है। यदि किसी कानूनी अधिकार का उल्लंघन होता है, तो पीड़ित व्यक्ति निचली अदालतों को दरकिनार कर सीधे SC से संपर्क नहीं कर सकता है। उसे पहले निचली अदालतों का रुख करना चाहिए।
2. कुछ मौलिक अधिकार सभी नागरिकों के लिए उपलब्ध हैं जबकि शेष सभी व्यक्तियों (नागरिकों और विदेशियों) के लिए हैं।
3. मौलिक अधिकार पूर्ण अधिकार नहीं हैं। उनके पास उचित प्रतिबंध हैं, जिसका अर्थ है कि वे राज्य की सुरक्षा, सार्वजनिक नैतिकता और शालीनता और विदेशी देशों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंधों की शर्तों के अधीन हैं।
4. वे न्यायसंगत हैं, जिसका अर्थ है कि वे अदालतों द्वारा लागू करने योग्य हैं। मौलिक अधिकारों के उल्लंघन के मामले में लोग सीधे SC से संपर्क कर सकते हैं।
5. मौलिक अधिकारों को संसद द्वारा संवैधानिक संशोधन द्वारा संशोधित किया जा सकता है, लेकिन केवल तभी जब संशोधन संविधान की मूल संरचना में परिवर्तन नहीं करता है।
6. राष्ट्रीय आपातकाल के दौरान भारतीय संविधान के मौलिक अधिकारों को निलंबित किया जा सकता है। लेकिन, अनुच्छेद 20 और 21 के तहत

गारंटीकृत अधिकारों को निलंबित नहीं किया जा सकता है।

7. मौलिक अधिकारों के प्रयोग को उस क्षेत्र में प्रतिबंधित किया जा सकता है जिसे मार्शल लॉ या सैन्य शासन के अधीन रखा गया है।

---

## 1.5 मौलिक अधिकारों की व्याख्या

---

मूल संविधान (1950) में सात मौलिक अधिकार थे। लेकिन के बाद 1978 में 44वें संशोधन के पारित होने के बाद अब छह मौलिक अधिकार हैं। इस संशोधन ने सातवें मौलिक अधिकार अर्थात् संपत्ति के अधिकार को समाप्त कर दिया

भारतीय संविधान के छह मौलिक अधिकार हैं,

1. **समानता का अधिकार (अनुच्छेद 14-18):** अनुच्छेद 14 से 18 समानता के अधिकार के विभिन्न पहलुओं से संबंधित हैं। अनुच्छेद 14 बताता है कि राज्य किसी भी व्यक्ति को कानून के समक्ष समानता और समानता से वंचित नहीं करेगा भारत के क्षेत्र के भीतर कानून की सुरक्षा। इस प्रकार, यह पहले समानता प्रदान करता है धर्म, नस्ल के आधार पर भेदभाव किए बिना हर व्यक्ति को कानून जाति, लिंग या जन्म स्थान। अनुच्छेद 15, 16, 17 और 18 सामाजिक-आर्थिक से संबंधित हैं समानता। अनुच्छेद 15 राज्य को किसी भी व्यक्ति के साथ भेदभाव करने से रोकता है धर्म, जाति, जाति, लिंग, जन्म स्थान या इनमें से किसी के आधार पर। हालांकि राज्य महिलाओं के कल्याण के लिए सुरक्षात्मक भेदभाव की विशेष नीतियां बना सकता है, बच्चे, सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग, और अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति। यह भी किसी भी व्यक्ति की दुकानों तक पहुंच पर प्रतिबंध के संदर्भ में भेदभाव को प्रतिबंधित करता है, सार्वजनिक रेस्तरां, होटल और सार्वजनिक मनोरंजन के स्थान, या कुओं, टैंकों का उपयोग, स्नान घाट, सड़कें और सार्वजनिक भोजनालय के स्थान जिनका पूरी तरह से रख-रखाव किया जाता है या आंशिक रूप से राज्य निधि से या जो आम जनता के उपयोग के लिए समर्पित हैं। सार्वजनिक रोजगार में सभी

नागरिकों के लिए अवसर की समानता की गारंटी देता है और किसी नागरिक के संबंध में अपात्रता या भेदभाव को प्रतिबंधित करता है धर्म, नस्ल, जाति, वंश के आधार पर राज्य के अधीन रोजगार या कार्यालय जन्म स्थान, निवास या उनमें से कोई भी। अनुच्छेद 17 अस्पृश्यता को समाप्त करता है और किसी भी रूप में इसके अभ्यास पर रोक लगाता है। उत्पन्न होने वाली किसी भी विकलांगता का प्रवर्तन अस्पृश्यता कानून द्वारा दंडनीय है। अनुच्छेद 18 के अनुसार अन्य कोई उपाधि नहीं सैन्य और शैक्षणिक भेद की तुलना में राज्य द्वारा प्रदान किया जाएगा।

2. **स्वतंत्रता का अधिकार (अनुच्छेद 19-22):** स्वतंत्रता का अधिकार अनुच्छेद 19 से 22 में दिया गया है। स्वतंत्रता का अधिकार नहीं है पूर्ण अधिकार। यह 'उचित प्रतिबंधों' के अधीन है जो इसके द्वारा लगाए जा सकते हैं। कानून। अनुच्छेद 19 निम्नलिखित अधिकारों की गारंटी देता है। भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का मुख्य सरोकार किसके हितों से है भारत की संप्रभुता और अखंडता, राज्य की सुरक्षा, मैत्रीपूर्ण संबंध विदेशी राज्यों के साथ, सार्वजनिक व्यवस्था, शालीनता या नैतिकता या के संबंध में अदालत की अवमानना, मानहानि या किसी अपराध के लिए उकसाना aadi se nahil भारत की सुरक्षा और अखंडता या सार्वजनिक व्यवस्था hetu शांतिपूर्वक और हथियारों के बिना इकट्ठा होना ,संघों और संघों का निर्माण करना भारत के पूरे क्षेत्र में स्वतंत्र रूप से घूमने की स्वतंत्रता , भारत के क्षेत्र के किसी भी हिस्से में रहने और बसने के लिए और कोई पेशा करना, या कोई पेशा, व्यापार या व्यापार करना य उनके अभ्यास की स्वतंत्रता । अनुच्छेद 20, 21 और 22 व्यक्तियों की व्यक्तिगत स्वतंत्रता को सुनिश्चित करते हैं। वास्तव में सभी मौलिक अधिकारों के केंद्र में जीवन की स्वतंत्रता।और व्यक्तिगत अधिकार है 2002 में न्यायपालिका ने रचनात्मक तरीके से इस अधिकार की व्याख्या की। जीवन का अधिकार है अब सम्मान और पूर्ति के जीवन के अधिकार के रूप में देखा जाता है। इसके अलावा, 86वां संशोधन 2002 में संविधान में अनुच्छेद 21 ए जोड़ा गया जो राज्य को गारंटी देता है छह वर्ष से कम आयु के बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य

शिक्षा प्रदान करना चौदह इस तरह से कि राज्य निर्धारित कर सकता है। इससे पहले में मौजूद थे राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों के अनुच्छेद 45। अनुच्छेद 20 मेले का प्रावधान करता है। अनुच्छेद 22 कुछ मामलों में गिरफ्तारी और नजरबंदी के खिलाफ सुरक्षा प्रदान करते हैं।<sup>ss</sup>

3. **शोषण के विरुद्ध अधिकार (अनुच्छेद 23-24):** अनुच्छेद 23(1) में मानव तस्करी और भिखारी और अन्य समान प्रकार के जबरन श्रम निषिद्ध हैं और इस प्रावधान का कोई भी उल्लंघन कानून के अनुसार दंडनीय अपराध होगा। अनुच्छेद 23(2) में राज्य को सार्वजनिक उद्देश्यों के लिए अनिवार्य सेवा लागू करने से नहीं रोकेगा, और ऐसी सेवा लागू करने में राज्य केवल धर्म, नस्ल, जाति या वर्ग या उनमें से किसी के आधार पर कोई भेदभाव नहीं करेगा। शोषण का तात्पर्य बिना भुगतान के बल और/या श्रम द्वारा दूसरों की सेवाओं का दुरुपयोग करना है। भारत में कई हाशिए पर रहने वाले समुदाय थे जिन्हें बिना किसी भुगतान के शारीरिक और कृषि श्रम में संलग्न होने के लिए मजबूर किया गया था। बिना भुगतान के श्रम को बेगार कहा जाता है। अनुच्छेद 23 किसी भी प्रकार के शोषण का निषेध करता है। इसके अलावा, पारिश्रमिक दिए जाने पर भी किसी को उसकी इच्छा के विरुद्ध श्रम में शामिल होने के लिए मजबूर नहीं किया जा सकता है। जबरन श्रम संविधान द्वारा प्रतिबंधित है। यदि न्यूनतम वेतन से कम भुगतान किया जाता है तो इसे जबरन श्रम माना जाता है। बंधुआ मजदूरी तब होती है जब किसी व्यक्ति को ऐसे ऋण/ऋण से सेवाओं की पेशकश करने के लिए मजबूर किया जाता है जिसे चुकाया नहीं जा सकता है। संविधान किसी भी तरह की जबरदस्ती को असंवैधानिक बनाता है। इस प्रकार, भूमिहीन व्यक्तियों को श्रम के लिए मजबूर करना और असहाय महिलाओं को वेश्यावृत्ति के लिए मजबूर करना असंवैधानिक है। यह अनुच्छेद तस्करी को असंवैधानिक भी बनाता है। तस्करी में अवैध और अनैतिक गतिविधियों के लिए पुरुषों और महिलाओं की खरीद और बिक्री शामिल है। भले ही संविधान स्पष्ट रूप से 'गुलामी' पर प्रतिबंध नहीं लगाता है, लेकिन अनुच्छेद 23 में 'जबरन श्रम' और 'यातायात' शब्दों को शामिल करने के कारण व्यापक गुंजाइश



है। अनुच्छेद 23 न केवल राज्य बल्कि निजी नागरिकों से भी नागरिकों की रक्षा करता है।

राज्य इन कृत्यों (जिन्हें अपराध माना जाता है) के अपराधियों के खिलाफ दंडात्मक कार्रवाई करके नागरिकों को इन बुराइयों से बचाने के लिए बाध्य है, और समाज से इन बुराइयों को खत्म करने के लिए सकारात्मक कार्रवाई भी करता है। संविधान के अनुच्छेद 35 के तहत, संसद अनुच्छेद 23 द्वारा निषिद्ध कार्यों को दंडित करने के लिए कानून बनाने के लिए अधिकृत है। खंड 2 का तात्पर्य है कि सार्वजनिक उद्देश्यों के लिए अनिवार्य सेवाएं (जैसे सशस्त्र बलों के लिए भरती) असंवैधानिक नहीं हैं। अनुच्छेद 23 के अनुसरण में संसद द्वारा पारित कानून: महिलाओं और लड़कियों के अनैतिक व्यापार का दमन अधिनियम, 1956 बंधुआ मजदूरी प्रणाली (उन्मूलन) अधिनियम, 1976 भारतीय संविधान ने शोषण के खिलाफ अधिकार की गारंटी दी। अनुच्छेद 23 निषेध करता है मानव तस्करी और भिखारी (अवैतनिक श्रम) और इसी तरह के अन्य रूप जबरन मजदूरी कराना। अनुच्छेद 24 के अनुसार, चौदह वर्ष से कम आयु का कोई भी बच्चा कारखाने, खदान या खतरनाक व्यवसायों में कार्य नहीं करेगा

4. **धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार (अनुच्छेद 25-28):** यह भारतीय राजनीति की धर्मनिरपेक्ष प्रकृति को इंगित करता है। सभी धर्मों को समान सम्मान दिया जाता है। विवेक, पेशे, अभ्यास और धर्म के प्रचार की स्वतंत्रता है। राज्य का कोई आधिकारिक धर्म नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी आस्था का स्वतंत्र रूप से अभ्यास करने, धार्मिक और धर्मार्थ संस्थानों की स्थापना और रखरखाव का अधिकार है। अनुच्छेद 25 सभी नागरिकों को अंतरात्मा की स्वतंत्रता, धर्म को मानने, आचरण करने और प्रचार करने की स्वतंत्रता की गारंटी देता है। उपर्युक्त स्वतंत्रता सार्वजनिक व्यवस्था, स्वास्थ्य और नैतिकता के अधीन हैं। यह अनुच्छेद यह भी प्रावधान करता है कि राज्य कानून बना सकता है यह किसी भी धार्मिक अभ्यास से जुड़ी किसी भी वित्तीय, आर्थिक, राजनीतिक या अन्य धर्मनिरपेक्ष गतिविधि को नियंत्रित और प्रतिबंधित करता है। यह

सामाजिक कल्याण और सुधार या हिंदुओं के सभी वर्गों और वर्गों के लिए एक सार्वजनिक चरित्र के हिंदू धार्मिक संस्थानों को खोलने का प्रावधान करता है। इस प्रावधान के तहत, हिंदुओं को सिख, जैन, या बौद्ध धर्मों को मानने वाले लोगों के रूप में माना जाता है, और हिंदू संस्थानों को भी तदनुसार माना जाएगा। कृपाण धारण करने वाले सिख धर्म के लोगों को सिख धर्म के पेशे में शामिल माना जाएगा। अनुच्छेद 25 सभी व्यक्तियों को समान रूप से अंतरात्मा की स्वतंत्रता और स्वतंत्र रूप से अधिकार का अधिकार देता है धर्म को मानना, आचरण करना और प्रचार करना। लेकिन स्वतंत्रता जनता के अधीन है आदेश, नैतिकता और स्वास्थ्य, और संविधान के भाग III के अन्य प्रावधानों के लिए। किसी भी आर्थिक, वित्तीय, राजनीतिक या अन्य धर्मनिरपेक्ष को विनियमित या प्रतिबंधित करना गतिविधि जो धार्मिक अभ्यास से जुड़ी हो सकती है किसी विशेष धर्म या धार्मिक वर्चस्व का प्रचार या रखरखाव। अनुच्छेद 28 किसी भी शैक्षणिक संस्थान में धार्मिक निर्देशों को पूर्ण रूप से प्रतिबंधित करता है राज्य निधि द्वारा अनुरक्षित, जब तक कि ऐसी कोई संस्था, भले ही प्रशासित हो राज्य द्वारा, के तहत और बंदोबस्ती या ट्रस्ट की स्थापना की गई है जिसके लिए इसकी आवश्यकता है उनमें धार्मिक निर्देश दिए जाएं।

अनुच्छेद 26 धार्मिक मामलों के प्रबंधन की स्वतंत्रता प्रदान करता है प्रत्येक धार्मिक संप्रदाय के पास नैतिकता, स्वास्थ्य और सार्वजनिक व्यवस्था के अधीन निम्नलिखित अधिकार हैं।

- 1) धार्मिक और धर्मार्थ उद्देश्यों के लिए संस्थानों को बनाने और बनाए रखने का अधिकार।
- 2) धर्म के मामले में अपने स्वयं के मामलों का प्रबंधन करने का अधिकार।
- 3) अचल और चल संपत्ति का अधिग्रहण करने का अधिकार।
- 4) कानून के अनुसार ऐसी संपत्ति को प्रशासित करने का अधिकार।
5. **सांस्कृतिक और शैक्षिक अधिकार (अनुच्छेद 29-30):** अनुच्छेद 29 और 30 भारतीय नागरिकों के सांस्कृतिक और शैक्षिक अधिकारों से संबंधित

हैं। इस मौलिक अधिकार का उद्देश्य भारत में अल्पसंख्यक समूहों की संस्कृति को संरक्षित करना है। भारतीय समाज एक समग्र विषम है और इसकी विविधता इसकी ताकत में से एक है। संविधान अल्पसंख्यकों को इन अधिकारों की गारंटी देता है ताकि इस देश की विविधता को संरक्षित रखा जा सके और अपनी संस्कृति की रक्षा, संरक्षण और प्रचार-प्रसार के लिए वंचित लोगों सहित सभी समूहों को अवसर प्रदान किया जा सके। अनुच्छेद 29 – का उद्देश्य अल्पसंख्यक समूहों के हितों की रक्षा करना है। अनुच्छेद 29 (1) भारत में रहने वाले नागरिकों के किसी भी वर्ग को एक विशिष्ट संस्कृति, भाषा या लिपि, अपनी संस्कृति, भाषा और लिपि के संरक्षण का अधिकार प्रदान करता है। अनुच्छेद 29(2) राज्य केवल जाति, धर्म, जाति, भाषा या इनमें से किसी के आधार पर अपने द्वारा चलाए जाने वाले या उससे सहायता प्राप्त करने वाले शिक्षण संस्थानों में प्रवेश से इनकार नहीं करेगा।

अनुच्छेद 30 अल्पसंख्यकों का शैक्षिक संस्थानों की स्थापना और प्रशासन का अधिकार अल्पसंख्यकों को यह अधिकार दिया गया है कि वे अपने स्वयं के शिक्षण संस्थान बनाएं और संचालित करें। अनुच्छेद 30 को "शिक्षा अधिकारों का चार्टर" भी कहा जाता है। अनुच्छेद 30(1): सभी धार्मिक और भाषाई अल्पसंख्यकों को अपनी पसंद के शैक्षणिक संस्थानों की स्थापना और प्रशासन का अधिकार है। अनुच्छेद 30(2): शैक्षिक संस्थानों को सहायता प्रदान करते समय राज्य किसी भी शैक्षणिक संस्थान के साथ इस आधार पर भेदभाव नहीं करेगा कि वह धर्म या भाषा पर आधारित किसी अल्पसंख्यक के प्रबंधन के अधीन है।

6. **संवैधानिक उपचार का अधिकार (अनुच्छेद 32):** संविधान का भाग III राज्य या अन्य संस्थानों/व्यक्तियों द्वारा उनके उल्लंघन के खिलाफ इन अधिकारों के संरक्षण के लिए रिट के कानूनी उपाय प्रदान करता है। यह भारत के नागरिकों को इन अधिकारों के प्रवर्तन के लिए सर्वोच्च न्यायालय या उच्च न्यायालयों में जाने का अधिकार देता है। राज्य को कोई भी कानून बनाने से मना किया जाता है जो मौलिक अधिकारों के साथ संघर्ष कर सकता है।

रिट नागरिकों के मौलिक अधिकारों रिट उल्लंघन से बचाने के लिए संवैधानिक उपाय प्रदान करने के लिए भारत के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा जारी किए गए लिखित आदेश हैं। संविधान सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों को आदेश या रिट जारी करने का अधिकार देता है। रिट के प्रकार हैं:

1. **बन्दी प्रत्यक्षीकरण (Habeas Corpus):** बन्दी प्रत्यक्षीकरण एक रिट है जो किसी व्यक्ति की स्वतंत्रता के मौलिक अधिकार की रक्षा के लिए गैरकानूनी नजरबन्दी के खिलाफ लागू की जाती है। यह रिट सरकारी अधिकारी को अदालत के सामने हिरासत में लिए गए व्यक्ति को सुपुर्द करने और हिरासत में लिए जाने के वैध कारण बताने का आदेश देती है। हालाँकि, यह रिट उस स्थिति में जारी नहीं की जा सकती जब कार्यवाही किसी विधायिका या न्यायालय की अवमानना के लिए हो।
2. **उत्प्रेषण (Certiorari) :** यह रिट एक निचली अदालत को यह निर्देश देते हुए जारी की जाती है कि समीक्षा के लिए एक मामले का स्थानांतरण, आमतौर पर निचली अदालत के फैसले को रद्द करने के लिए किया जाता है। निचली अदालत द्वारा पारित निर्णय को पार्टी द्वारा चुनौती दिए जाने की स्थिति में सर्वोच्च न्यायालय उत्प्रेषण की रिट जारी करता है। यह तब जारी किया जाता है जब उच्च न्यायालय इसे अधिकार क्षेत्र से अधिक या अधिकार क्षेत्र की कमी का मामला पाता है। यह उन तंत्रों में से एक है जिसके द्वारा नागरिकों के मौलिक अधिकारों को बरकरार रखा जाता है।
3. **निषेध (Prohibition):** निषेध एक उच्च न्यायालय द्वारा निचली अदालत को अधिकार क्षेत्र में निष्क्रियता को लागू करने के लिए जारी किया गया रिट है। यह तभी होता है जब उच्च न्यायालय के विवेक का मामला निचली अदालत के अधिकार क्षेत्र से बाहर हो। प्रतिषेध रिट केवल न्यायिक और अर्ध-न्यायिक प्राधिकारियों के विरुद्ध ही जारी की जा सकती है।
4. **परमादेश (Mandamus):** परमादेश की रिट एक अधीनस्थ अदालत, सरकार के एक अधिकारी, या एक निगम या अन्य संस्था को जारी की

जाती है जो कुछ कार्यों या कर्तव्यों के प्रदर्शन की कमान संभालती है। बंदी प्रत्यक्षीकरण के विपरीत, एक निजी व्यक्ति के खिलाफ परमादेश जारी नहीं किया जा सकता है। किसी कार्य को पूरा करने के आदेश के लिए परमादेश का उपयोग किया जा सकता है या अन्य मामलों में, इसे बंद करने के लिए एक गतिविधि की आवश्यकता हो सकती है।

5. **अधिकार पृच्छा (Quo Warranto):** अधिकार-पृच्छा उस व्यक्ति के विरुद्ध जारी किया जाता है जो किसी सार्वजनिक कार्यालय का दावा करता है या हड़प लेता है। इस रिट के माध्यम से, अदालत पूछती है कि 'किस अधिकार से' व्यक्ति अपने दावे का समर्थन करता है। इस रिट के माध्यम से न्यायालय सार्वजनिक पद पर किसी व्यक्ति के दावे की वैधता की जांच करता है। यह रिट किसी व्यक्ति द्वारा सार्वजनिक पद पर अवैध रूप से कब्जा करने से रोकता है।

अनुच्छेद 32 संसद को यह अधिकार भी देता है कि वह इन रिटों को जारी करने के लिए किसी अन्य न्यायालय को प्राधिकृत कर सकती है 1950 से पहले, केवल कलकत्ता, बंबई और मद्रास के उच्च न्यायालयों के पास ही रिट जारी करने की शक्ति थी। अनुच्छेद 226 भारत के सभी उच्च न्यायालयों को रिट जारी करने का अधिकार देता है भारत के रिट अंग्रेजी कानून से उधार लिए गए हैं जहां उन्हें 'विशेषाधिकार रिट' के रूप में जाना जाता है एक **रिट याचिका** अनिवार्य रूप से असाधारण समीक्षा के लिए एक अदालती याचिका है, जिसमें अदालत को निचली अदालत के फैसले में हस्तक्षेप करने के लिए कहा जाता है। भारतीय कानूनी व्यवस्था के तहत, 'विशेषाधिकार रिट' जारी करने का अधिकार सर्वोच्च न्यायालय और सभी भारतीय राज्यों के उच्च न्यायालयों को दिया जाता है। रिट से संबंधित कानून के कुछ हिस्सों को भारत के संविधान में रेखांकित किया गया है।

भारतीय संविधान में मौलिक अधिकारों की सूची है जो केवल नागरिकों के लिए उपलब्ध हैं (और विदेशियों के लिए नहीं):

1. नस्ल, धर्म, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर भेदभाव का

निषेध (अनुच्छेद 15)।

2. सार्वजनिक रोजगार के मामलों में अवसर की समानता (अनुच्छेद 16)।

3. स्वतंत्रता का संरक्षण: (अनुच्छेद 19)

I. भाषण और अभिव्यक्ति

II. संगठन

III. सभा

IV. आंदोलन

V. निवास स्थान

VI. पेशा

4. अल्पसंख्यकों की संस्कृति, भाषा और लिपि का संरक्षण (अनुच्छेद 29)।

5. शैक्षणिक संस्थानों की स्थापना और प्रशासन करने का अल्पसंख्यकों का अधिकार (अनुच्छेद 30)।

---

## 1.6 सार संक्षेप

---

निष्कर्ष के रूप में, यह कहा जा सकता है कि उपरोक्त लेख मौलिक अधिकारों की विशेषताओं के बारे में विस्तृत अध्ययन प्रदान करता है; अधिकार जैसे: एक राष्ट्रीय आपातकाल के दौरान निलंबित, पूर्ण अधिकार नहीं और संक्षेप में मार्शल लॉ या सैन्य शासन के तहत प्रतिबंधित और कई अन्य अधिनियमों पर ऊपर चर्चा की गई है। किसी तरह, बाद में, मौलिक अधिकार एक महत्वपूर्ण हिस्सा ग्रहण करते हैं क्योंकि वे आम तौर पर किसी व्यक्ति की पूर्ण बुद्धिमान, नैतिक और पारलौकिक स्थिति को पूरा करने के लिए मौलिक होते हैं। इसलिए, संविधान में मौलिक अधिकारों पर विचार करने के पीछे का लक्ष्य व्यक्तिगत स्वतंत्रता की रक्षा के लिए कानून का प्रशासन स्थापित करना, एक समतामूलक समाज का निर्माण करना और एक सरकारी सहायता राज्य की स्थापना करना था।

## 1.9 परिभाषिक शब्दावली

---

1. संविधान: किसी देश या संगठन के बुनियादी कानून या नियम
2. मौलिक अधिकार: मौलिक अधिकार भारत के संविधान में निहित बुनियादी मानवाधिकार हैं जो सभी नागरिकों के लिए गारंटीकृत हैं

## 1.10 अभ्यास प्रश्न लघु विवरण

---

### लघु प्रश्न :

1. मौलिक अधिकारों की अवधारणा की व्याख्या करें।

.....

.....

.....

2. मौलिक अधिकारों की मूल विशेषताएं क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

### विस्तृत प्रश्न :

1. भारत के संविधान की विशेषताओं को विस्तार से समझाइए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2. भारत के संविधान में उल्लिखित मौलिक अधिकारों के विभिन्न अनुच्छेदों का विवरण दें।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

---

### 1.11 संदर्भ ग्रंथ सूची

---

1. ऑस्टिन, गैनविले (1999)। भारतीय संविधान: एक राष्ट्र की आधारशिला। नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस। पी। 390. आईएसबीएन 0-19-564959-1।
2. बसु, दुर्गा दास (1993). भारत के संविधान का परिचय (15वां संस्करण)। नई दिल्ली: प्रेंटिस हॉल ऑफ इंडिया। पी। 475. आईएसबीएन 81-203-0839-5।
3. बसु, दुर्गा दास (2003). भारत का लघु संविधान (13वां संस्करण)। नागपुर: वाधवा एंड कंपनी पी। 1972. आईएसबीएन 978-81-8038-206-2।
4. तायल, बी.बी.; जैकब, ए। (2005)। भारतीय इतिहास, विश्व विकास और नागरिक शास्त्र। अविचल पब्लिशिंग कंपनी।



# इकाई-7 राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांत

---

## इकाई की रूप रेखा

- 1.0 इकाई का उद्देश्य
- 1.1 परिचय
- 1.2 राज्य नीति निर्देशक सिद्धांतों का उद्देश्य
- 1.3 राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों की प्रकृति और विशेषताएं
- 1.4 राज्य नीति निर्देशक सिद्धांतों के स्रोत
- 1.5 राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों की व्याख्या
- 1.6 कानून के माध्यम से राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों का कार्यान्वयन
- 1.7 राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों की आलोचना
- 1.8 सार संक्षेप
- 1.9 परिभाषिक शब्दावली
- 1.10 अभ्यास प्रश्न लघु विवरण
- 1.11 संदर्भ ग्रंथ सूची

---

## 1.1 परिचय

भारत के स्वतंत्रता आंदोलन के नेताओं ने कल्पना की कि राजनीतिक स्वतंत्रता के बाद नई व्यवस्था में, लोगों को सामाजिक और आर्थिक क्षेत्रों में उन्नति के पूर्ण अवसर मिलने चाहिए और राज्य को प्रगति सुनिश्चित करने के लिए उपयुक्त प्रावधान करने चाहिए। संविधान के भाग IV में सन्निहित राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांत, देश में एक न्यायपूर्ण समाज की स्थापना के लिए केंद्र और राज्य सरकारों को दिए गए निर्देश हैं। निर्देशक सिद्धांत राज्य को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय की पुष्टि के साथ-साथ आर्थिक असमानता से लड़ने के लिए लोगों के कल्याण को बढ़ावा देने के लिए प्रतिबद्ध करते हैं। संविधान के अनुसार, सरकार को कानून बनाते समय उन्हें ध्यान में रखना चाहिए, भले ही वे प्रकृति में गैर-न्यायिक हों। राज्य नीति के निर्देशक

सिद्धांतों का विचार आयरिश गणराज्य से लिया गया है। आर्थिक न्याय प्रदान करने और कुछ लोगों के हाथों में धन की एकाग्रता से बचने के लिए उन्हें हमारे संविधान में शामिल किया गया था। इसलिए कोई भी सरकार उनकी उपेक्षा नहीं कर सकती। वे वास्तव में भविष्य की सरकारों को उनके द्वारा तैयार किए जाने वाले निर्णयों और नीतियों में उन्हें शामिल करने के निर्देश हैं। निर्देशों का मतलब मूलभूत सिद्धांत होना चाहिए, जिन्हें देश के शासन में भविष्य में की जा सकने वाली सभी कार्यकारी और विधायी कार्रवाइयों का आधार बनाया जाना चाहिए। यदि निर्देशों का पालन नहीं किया जाता है या राज्य द्वारा लागू नहीं किया जाता है, तो न्यायिक कार्यवाही के माध्यम से इसका पालन या कार्यान्वयन सुरक्षित नहीं किया जा सकता है। निर्देशक सिद्धांतों का अर्थ है कि वे राज्य के लिए बाध्यकारी नहीं होंगे; किसी भी मामले में, वे कानून की अदालत में लागू करने योग्य नहीं होंगे। संविधान सभा की यह मंशा थी कि भविष्य में विधायिका और कार्यपालिका दोनों ही अधिनियमित इन सिद्धांतों के प्रति केवल दिखावटी सेवा न करें बल्कि उन्हें इस मामले में की जाने वाली सभी कार्यकारी और विधायी कार्रवाई का आधार बनाया जाए। देश के शासन की। नीति निर्देशक सिद्धांत राज्य को जीवन स्तर बढ़ाने और सार्वजनिक स्वास्थ्य में सुधार करने के लिए प्रतिबद्ध करते हैं। इसे गायों, बछड़ों, अन्य दुधारू और वाहक मवेशियों की नस्लों में सुधार और वध पर रोक लगाकर आधुनिक और वैज्ञानिक तरीके से कृषि और पशुपालन को भी व्यवस्थित करना चाहिए। राज्य को देश के पर्यावरण और वन्य जीवन की रक्षा करनी चाहिए।

निर्देशक सिद्धांत राज्य को यह सुनिश्चित करने के लिए प्रेरित करते हैं कि नागरिकों के पास आजीविका का पर्याप्त साधन है, कि आर्थिक प्रणाली का संचालन और देश के भौतिक संसाधनों का स्वामित्व और नियंत्रण सामान्य भलाई के अधीन है, कि बच्चों सहित श्रमिकों का स्वास्थ्य दुरुपयोग नहीं किया जाता है, और गर्भवती महिलाओं को विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। राज्य के प्राथमिक कर्तव्यों में पोषण के स्तर को ऊपर उठाना और लोगों के जीवन स्तर का सामान्य स्तर है। सिद्धांतों ने आशा व्यक्त की कि संविधान को अपनाने के दस वर्षों के भीतर चौदह वर्ष की आयु तक के बच्चों के लिए अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा होगी। सिद्धांतों के अन्य प्रावधान समान रूप से कृषि, पशुपालन, कुटीर

उद्योग आदि की तकनीकों में सुधार करके भारतीय समाज के नवीकरण को सुरक्षित करने की मांग करते हैं। प्रतिबद्धता का मूल मौलिक अधिकारों और राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों में निहित है।

**प्रस्तावना का प्रतिबिंब:** प्रस्तावना संविधान का एक संक्षिप्त परिचय है और इसमें वे सभी उद्देश्य शामिल हैं जो भारतीय संविधान के निर्माताओं के दिमाग में थे। कुछ विद्वानों के अनुसार, राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांत 'भारतीय संविधान की गिरी' है। राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांत (डीपीएसपी) राज्य के लिए दिशानिर्देश हैं, जिन्हें नए कानूनों और नीतियों को तैयार करते समय विचार करना चाहिए और यह उन सभी उद्देश्यों को निर्धारित करता है जिन्हें संविधान प्राप्त करना चाहता है। प्रस्तावना में उल्लिखित अभिव्यक्ति "न्याय - सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक" अंतिम उद्देश्य है जिसे राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांत के निर्माण के माध्यम से प्राप्त किया जाना है। DPSP को इस अंतिम लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए सूचीबद्ध किया गया है जैसा कि प्रस्तावना में वर्णित है अर्थात् न्याय, स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व को भारतीय संविधान के चार स्तंभों के रूप में भी जाना जाता है। यह कल्याणकारी राज्य के विचार को भी सूचीबद्ध करता है जो औपनिवेशिक शासन के अधीन अनुपस्थित था।

---

## 1.2 निर्देशक सिद्धांतों का उद्देश्य

---

संविधान निर्माताओं का, दूसरों के बीच, एक प्रमुख उद्देश्य था और वह था सामाजिक न्याय के सिद्धांत के आधार पर सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन लाने के लिए आम आदमी की स्थिति में सुधार और सुधार करना। जबकि संविधान निर्माताओं ने सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्रों में विकास की परिकल्पना की थी, वे नहीं चाहते थे कि यह एक ऐसा समाज हो जहां एक नागरिक के पास व्यक्ति की गरिमा नहीं होगी। निर्देश उन पंक्तियों को निर्धारित करते हैं जिन पर भारत के राज्य को इस संविधान के तहत काम करना चाहिए। उनकी सामग्री को कई समूहों में विभाजित किया जा सकता है:

- (1) कुछ आदर्श, विशेष रूप से आर्थिक, जो संविधान के निर्माता चाहते थे कि राज्य को इसके लिए प्रयास करना चाहिए।

- (2) भावी विधायिका और भावी कार्यपालिका को कुछ निर्देश यह दिखाने के लिए कि उन्हें अपनी विधायी और कार्यकारी शक्तियों का प्रयोग किस तरीके से करना चाहिए।
- (3) नागरिकों के कुछ अधिकार 'मौलिक अधिकार' जैसे न्यायालयों द्वारा लागू नहीं होने चाहिए, लेकिन राज्य को फिर भी अपनी विधायी और प्रशासनिक नीति के नियमन द्वारा सुरक्षित करने का लक्ष्य रखना चाहिए।

यदि प्रस्तावना संविधान को समझने या इसके निर्माताओं के दिमाग को खोलने की कुंजी है, तो भाग IV में निहित राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांत इसके मूल आदर्श हैं। यहीं पर संविधान निर्माताओं ने लोगों की आशाओं और आकांक्षाओं को मूर्त रूप देने वाले मानवीय समाजवादी सिद्धांतों को स्थापित करके उन्हें देश के शासन में मौलिक घोषित किया। वे सभी नागरिकों के लिए सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय सुनिश्चित करने के लिए राज्य के अधिकारियों, जो उनके द्वारा स्थापित संविधान के प्राणी हैं, के लिए परम संप्रभु से सकारात्मक निर्देश हैं; विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, आस्था और पूजा की स्वतंत्रता; स्थिति अवसर की समानता; और उन सभी के बीच बंधुत्व को बढ़ावा देना, व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखंडता को सुनिश्चित करना।

बी आर अंबेडकर ने संविधान सभा को बताया कि प्रत्येक सरकार, केंद्र, राज्य और स्थानीय "दैनिक मामलों में और एक निश्चित अवधि के अंत में, जब मतदाताओं और मतदाताओं को आकलन करने का अवसर दिया जाएगा, दोनों में लाभ होगा।" सरकार द्वारा किया गया कार्य। जबकि हमने राजनीतिक लोकतंत्र स्थापित किया है, यह भी इच्छा है कि हम अपने आदर्श आर्थिक लोकतंत्र को स्थापित करें। ऐसे कई तरीके हैं जिनसे लोग मानते हैं कि आर्थिक लोकतंत्र लाया जा सकता है, हमने जानबूझकर उस भाषा में पेश नहीं किया है जिसे हमने निदेशक सिद्धांतों में इस्तेमाल किया है जो निश्चित या कठोर है। आर्थिक लोकतंत्र के आदर्श की प्रतिक्रिया के संबंध में हमने अलग-अलग सोच के लोगों के लिए पर्याप्त जगह छोड़ी है। [9] भारतीय संविधान पहला और सबसे महत्वपूर्ण सामाजिक दस्तावेज है। इसके अधिकांश प्रावधान या तो प्रत्यक्ष रूप

से सामाजिक क्रांति के लक्ष्यों को आगे बढ़ाने के उद्देश्य से हैं या इसकी उपलब्धियों के लिए आवश्यक शर्तों को स्थापित करके इस क्रांति को बढ़ावा देने का प्रयास करते हैं। फिर भी, राष्ट्रीय पुनर्जागरण के उद्देश्य से पूरे संविधान की अनुमति के बावजूद, सामाजिक क्रांति के प्रति प्रतिबद्धता का मूल भाग III और IV में, मौलिक अधिकारों और राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों में निहित है। ये संविधान की अंतरात्मा हैं। [10] निर्देशक सिद्धांतों की जड़ें स्वतंत्रता के संघर्ष में गहरी थीं। और उन्हें संविधान में इस उम्मीद और अपेक्षा के साथ शामिल किया गया है कि एक दिन भारत में सच्ची आज़ादी का पेड़ खिलेगा। इस प्रकार अधिकार और सिद्धांत भारत के भविष्य, वर्तमान को जोड़ते हैं और भारत में सामाजिक क्रांति की खोज को बल देते हैं। [11] निर्देशक सिद्धांतों में, हालांकि, सामाजिक क्रांति का एक स्पष्ट बयान मिलता है। उनका उद्देश्य भारतीय जनता को सकारात्मक अर्थों में मुक्त करना है, समाज और प्रकृति द्वारा सदियों की ज़बरदस्ती से उत्पन्न निष्क्रियता से मुक्त, और वस्तुगत भौतिक स्थितियों से मुक्त करना है जिसने उन्हें अपने सर्वश्रेष्ठ स्वयं को पूरा करने से रोका था। [12] राज्य के इन सकारात्मक दायित्वों को स्थापित करके, संविधान सभा के सदस्यों ने व्यक्तिगत स्वतंत्रता और सार्वजनिक भलाई के बीच संपत्ति के संरक्षण और विशेषाधिकार के बीच एक मध्य मार्ग खोजने के लिए भारतीय सरकारों के भविष्य की जिम्मेदारी बनाई। "सार्वभौम भलाई में योगदान के लिए समान रूप से सभी पुरुषों की शक्तियों" को मुक्त करने के लिए बहुतों को कुछ और लाभ प्रदान करना।

भारत के स्वतंत्रता आंदोलन के नेताओं ने कल्पना की कि राजनीतिक स्वतंत्रता के बाद नई व्यवस्था में, लोगों को सामाजिक और आर्थिक क्षेत्रों में उन्नति के पूर्ण अवसर मिलने चाहिए और राज्य को ऐसी प्रगति सुनिश्चित करने के लिए उपयुक्त प्रावधान करने चाहिए। सर्वदलीय सम्मेलन द्वारा अपनाए गए मौलिक अधिकारों में [14] एक प्रावधान था जो प्रत्येक नागरिक को मुफ्त प्रारंभिक शिक्षा का अधिकार देता था और दूसरा जिसके लिए सभी नागरिकों के काम के लिए स्वास्थ्य और फिटनेस के रखरखाव के लिए उपयुक्त कानूनों के अधिनियमन की आवश्यकता थी, प्रत्येक कार्यकर्ता के लिए एक जीवित मजदूरी मातृत्व की सुरक्षा, बच्चों के कल्याण और वृद्धावस्था, दुर्बलता

और बेरोजगारी में सहायता के लिए प्रावधान। [15] इसी तरह के प्रावधान 1931 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा अपनाए गए मौलिक अधिकारों की घोषणा में भी निहित थे, इसके अलावा, विशेष रूप से घोषित किया गया कि "जनता के शोषण को समाप्त करने के लिए, राजनीतिक स्वतंत्रता में वास्तविक आर्थिक स्वतंत्रता शामिल होनी चाहिए भूख से मर रहे लाखों लोगों की", और यह कि आर्थिक जीवन के संगठन को न्याय के सिद्धांतों का सामना करना चाहिए। [16] आयरलैंड के 1937 के संविधान ने "मौलिक अधिकारों" और "सामाजिक नीति के निर्देशक सिद्धांतों" के बीच स्पष्ट रूप से भेद किया, बाद वाले को स्पष्ट रूप से अदालतों के दायरे से बाहर रखा गया। 1945 में प्रकाशित अपने "इंटरनेशनल बिल ऑफ राइट्स" में लॉटरपैक्ट द्वारा इसी तरह के अंतर को भी मान्यता दी गई थी। भारत में, संविधान में शामिल किए जाने वाले अधिकारों के विभाजन के विचार को न्यायसंगत और गैर-न्यायिक अधिकारों में पहली बार परिकल्पित किया गया था। 1944-1945 में सप्रू समिति की रिपोर्ट।

---

## 1.3 राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों की प्रकृति और विशेषताएं

---

राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों में दो विशेषताएं हैं। सबसे पहले, वे कानून की अदालत में लागू करने योग्य नहीं हैं और इसलिए, यदि राज्य द्वारा किसी निर्देश का पालन या कार्यान्वयन नहीं किया जाता है, तो न्यायिक कार्यवाही के माध्यम से इसकी आज्ञाकारिता या कार्यान्वयन को सुरक्षित नहीं किया जा सकता है। इन सिद्धांतों की कानूनी गैर-प्रवर्तनीयता और गैर-न्यायसंगतता के पीछे कारण यह है कि वे राज्य पर सकारात्मक दायित्व डालते हैं। सकारात्मक कार्रवाई करते हुए, सरकार कई प्रतिबंधों के तहत कार्य करती है, इनमें से सबसे महत्वपूर्ण वित्तीय संसाधन हैं। इसलिए संविधान निर्माताओं ने व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाते हुए इन सिद्धांतों पर जोर देने से परहेज किया। वे इन सिद्धांतों की पूर्ति के लिए अदालती कार्यवाही के बजाय एक जागृत जनमत में अधिक विश्वास करते थे। [18] इस विशेषता को व्यवहार में अदालती निर्णयों द्वारा कम कर दिया गया है, जिन्होंने मौलिक अधिकारों के समर्थन में कुछ निर्देशक सिद्धांतों को लागू किया है। दूसरे, वे राज्य के शासन

में मौलिक हैं और कानून बनाने में इन सिद्धांतों को लागू करना राज्य का कर्तव्य होगा। अभिव्यक्ति 'कानून' को एक सामान्य अर्थ में समझा जाना चाहिए और इसमें निर्णय लेने सहित शक्ति के सभी नियामक अभ्यास शामिल होने चाहिए। [19] राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों का उद्देश्य सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों का निर्माण करना है जिसके तहत नागरिक एक अच्छा जीवन जी सकें। उनका उद्देश्य कल्याणकारी राज्य के माध्यम से सामाजिक और आर्थिक लोकतंत्र स्थापित करना भी है। वे सरकार पर एक जाँच के रूप में कार्य करते हैं, सरकार के प्रदर्शन को मापने के लिए लोगों के हाथों में एक मानदंड के रूप में सिद्धांतबद्ध होते हैं और चुनाव के दौरान किए गए वादों को पूरा नहीं करने पर इसे सत्ता से बाहर कर देते हैं। निर्देशक सिद्धांतों का अर्थ है कि वे किसी भी मामले में राज्य के लिए बाध्यकारी नहीं होंगे; वे कानून की अदालत में लागू करने योग्य नहीं होंगे।

चूंकि निर्देशक सिद्धांत न्यायालय द्वारा प्रवर्तनीय नहीं हैं, यह वकालत की गई है कि वे कानून नहीं हैं और इसलिए राज्य द्वारा उनका पालन न करने का कोई कानूनी परिणाम नहीं होता है। [21] राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत एक समतावादी समाज के लिए काम करने का निर्देश देते हैं, जहां धन का संकेन्द्रण नहीं है, जहां प्रचुर मात्रा में है, जहां सभी के लिए समान अवसर है, शिक्षा के लिए, काम करने के लिए, आजीविका के लिए और जहां सामाजिक है न्याय। [22] निर्देशक सिद्धांत प्रस्तावना के विस्तार में इस बात पर जोर देते हैं कि भारतीय राजनीति का लक्ष्य अहस्तक्षेप, निष्पक्ष नहीं है, बल्कि एक कल्याणकारी राज्य है, जहां राज्य का अपने नागरिकों के लिए सामाजिक और आर्थिक न्याय और सम्मान सुनिश्चित करने का एक सकारात्मक कर्तव्य है। व्यक्ति का। यह भविष्य की सभी सरकारों पर उनकी पार्टी पंथों के बावजूद "निर्देश के साधन" के रूप में काम करेगा। [23] संविधान के भाग IV का उद्देश्य गरीबी, अज्ञानता, बीमारी और अवसर की असमानता को समाप्त करना है। [24] हालांकि भाग IV के प्रावधान अदालतों द्वारा लागू करने योग्य नहीं हैं, फिर भी इसमें निर्धारित सिद्धांत देश के शासन में मौलिक हैं। कानून बनाने में इन सिद्धांतों को लागू करना राज्य का कर्तव्य होगा। [25] जब भी राज्य द्वारा राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों में निर्धारित प्रावधानों के अनुरूप कार्रवाई की

जाती है, जैसा कि संविधान के भाग IV में परिकल्पित किया गया है, उसे उचित कार्रवाई माना जाता है। हालांकि, इसका मतलब यह नहीं है कि कोई भी कार्रवाई जो भाग IV के प्रावधान के अनुरूप नहीं है, वह अधिकारातीत होगी। इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता कि भाग IV में निहित सिद्धांत एक आवश्यक वस्तु के मूल्य निर्धारण के संबंध में एक प्रश्न का निर्धारण करने के लिए प्रासंगिक विचार करेंगे। राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत एक नागरिक के मौलिक अधिकारों की व्याख्या के लिए मार्गदर्शन प्रदान करते हैं जो वैधानिक अधिकार भी हैं।

केवल इसलिए कि राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत कानून की अदालत में लागू करने योग्य नहीं हैं, इसका मतलब यह नहीं है कि वे राज्य पर बाध्यता या कर्तव्यों का निर्माण नहीं कर सकते हैं। महत्वपूर्ण परीक्षण जिसे लागू किया जाना है, क्या निर्देशक सिद्धांत राज्य पर कोई दायित्व या कर्तव्य लागू करते हैं; यदि वे ऐसा करते हैं, तो राज्य इस तरह के दायित्वों या कर्तव्यों को पूरा करने के लिए संवैधानिक जनादेश से बाध्य होगा, भले ही किसी एक में कोई समान अधिकार नहीं बनाया गया हो जिसे कानून की अदालत में लागू किया जा सके। राज्य कला में जनादेश को पूरा करने के लिए एक संवैधानिक जनादेश के तहत है।

---

## 1.4 राज्य नीति निर्देशक सिद्धांतों के स्रोत

---

राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों की अवधारणा आयरिश संविधान से उधार ली गई थी। भारत के संविधान के निर्माता आयरिश राष्ट्रवादी आंदोलन से प्रभावित थे। इसलिए, भारतीय संविधान के निर्देशक सिद्धांत राज्य नीति के निदेशक सिद्धांतों से काफी प्रभावित हुए हैं। इस तरह की नीतियों का विचार "मानव घोषित क्रांतिकारी फ्रांस के अधिकारों की घोषणा और अमेरिकी उपनिवेशों द्वारा स्वतंत्रता की घोषणा के लिए खोजा जा सकता है।" भारतीय संविधान भी संयुक्त राष्ट्र के मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा से प्रभावित था। हालांकि हमारे संविधान के निर्माताओं ने संविधान में आयर के संविधान से राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों के रूप में गैर-न्यायिक प्रावधानों को शामिल करने की प्रेरणा प्राप्त की, प्रावधानों के पाठ के साथ-साथ उनके कार्य में, कुछ



## 1.5 राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों की व्याख्या

- **अनुच्छेद 36:** अनुच्छेद 36 में राज्य की परिभाषा है। जब तक संदर्भ की आवश्यकता न हो, "राज्य" की परिभाषा वही है जो भाग III में दी गई है जिसमें मौलिक अधिकार शामिल हैं। अनुच्छेद 12 में दी गई परिभाषा इस भाग में भी लागू होगी जो कहती है कि राज्य में शामिल हैं: भारत सरकार, भारत की संसद, प्रत्येक राज्य की सरकार, प्रत्येक राज्य का विधानमंडल, सभी प्राधिकरण चाहे स्थानीय हों या कोई अन्य जो भारतीय क्षेत्र का हिस्सा हों या सरकार के नियंत्रण में हों।
- **अनुच्छेद 37:** अनुच्छेद 37 में DPSP की दो महत्वपूर्ण विशेषताओं का उल्लेख है, और वे हैं: यह किसी भी न्यायालय में प्रवर्तनीय नहीं है। और वे देश के शासन के लिए बहुत ही बुनियादी और आवश्यक हैं। इस भाग में उल्लिखित प्रावधान किसी भी अदालत में लागू नहीं होंगे और इस भाग में निर्धारित सिद्धांत देश के शासन के लिए मौलिक हैं। राज्य को इसके अनुसार कानून बनाना चाहिए क्योंकि राज्य का अंतिम लक्ष्य अपने नागरिकों का कल्याण करना है।
- **अनुच्छेद 38:** अनुच्छेद 38 सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक न्याय की बात करता है। यह निर्देश देता है कि राज्य को एक सामाजिक व्यवस्था को सुरक्षित करना चाहिए जो अपने सभी नागरिकों को सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक न्याय प्रदान करे। अनुच्छेद 38 (2) कहता है कि राज्य आय, स्थिति, सुविधाओं, अवसरों आदि के आधार पर लोगों द्वारा सामना की जाने वाली असमानताओं को कम करेगा।
- **अनुच्छेद 39:** अनुच्छेद 39 में नीति के उन सभी सिद्धांतों का उल्लेख है जिनका राज्य द्वारा पालन किया जाना चाहिए। राज्य निम्नलिखित उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए अपनी नीतियां बनाएगा-सभी पुरुषों, महिलाओं और नागरिकों को आजीविका के पर्याप्त साधन का अधिकार होना चाहिए समुदाय के अंतर्गत किसी भी भौतिक संसाधनों पर लोगों के स्वामित्व और नियंत्रण को वितरित किया जाना चाहिए क्योंकि यह

जनता की भलाई के लिए है; आर्थिक प्रणाली का कामकाज ऐसा होना चाहिए कि धन और उत्पादन के साधनों के संकेन्द्रण का परिणाम सभी के लिए सामान्य नुकसान न हो या जो नागरिकों के लिए हानिकारक हो; कोई लैंगिक भेदभाव नहीं होगा, पुरुषों और महिलाओं दोनों को समान काम के लिए समान वेतन मिलना चाहिए। किसी भी कार्यकर्ता, पुरुषों और महिलाओं के स्वास्थ्य और शक्ति, और बच्चों की कम उम्र का दुरुपयोग नहीं किया जाना चाहिए और नागरिकों को किसी भी व्यवसाय या पेशे में प्रवेश करने और शामिल होने के लिए मजबूर नहीं किया जाना चाहिए, जो उनकी उम्र या शक्ति के लिए उपयुक्त नहीं है, न कि यहां तक कि किसी वितीय आवश्यकता या आर्थिक पिछड़ेपन से भी बाहर बच्चों को पर्याप्त अवसर और सुविधाएं दी जानी चाहिए ताकि वे स्वस्थ तरीके से विकसित हों और ऐसी परिस्थितियों में जहां उनकी स्वतंत्रता और गरिमा, इस तथ्य सहित कि उनका बचपन और युवावस्था किसी भी प्रकार के शोषण के खिलाफ और किसी भी प्रकार के नैतिक और भौतिक रूप से सुरक्षित रहे।

**अनुच्छेद 39ए** मुफ्त कानूनी सहायता की बात करता है। यह कहता है कि राज्य समान अवसर के आधार पर न्याय प्रशासन के उद्देश्य से न्याय को बढ़ावा देगा, और किसी भी उपयुक्त कानून या योजनाओं के माध्यम से मुफ्त कानूनी सहायता प्रदान करेगा, जिसे राज्य उचित समझे, या किसी अन्य तरीके से, ताकि वह कर सके सुनिश्चित करें कि आर्थिक पिछड़ेपन या किसी अन्य प्रकार की अक्षमताओं के कारण कोई भी नागरिक न्याय हासिल करने के अवसरों से वंचित न रहे।

- **अनुच्छेद 40 :** अनुच्छेद पंचायतों के संगठन से संबंधित है। इसमें कहा गया है कि राज्य पंचायत प्रणाली को संगठित करेगा और उन्हें ऐसी शक्तियाँ प्रदान करेगा जो स्वशासन प्रणाली की इकाइयों के रूप में कार्य करने के लिए आवश्यक होंगी। संविधान के 73वें और 74वें संशोधन जो क्रमशः पंचायती राज और नगर निगमों से संबंधित हैं, बाद में भाग IV में वर्णित सिद्धांत के लिए संवैधानिक रूप से समर्थित ढांचे के रूप में समाप्त हो गए।

- **अनुच्छेद 41 :**अनुच्छेद 41में कहा गया है कि राज्य काम के अधिकार आदि को सुरक्षित करने के लिए कुछ प्रभावी प्रावधान करेगा और बेरोजगारी, वृद्धावस्था, अक्षमता या अपनी आर्थिक क्षमता और विकास में कार्य करने वाले अन्य मामलों में यह सार्वजनिक सहायता प्रदान करेगा। यह लेख कई सामाजिक क्षेत्र की योजनाओं जैसे सामाजिक सहायता कार्यक्रम, खाद्य सुरक्षा का अधिकार, वृद्धावस्था पेंशन योजना, मनरेगा, आदि के लिए एक सिद्धांत के रूप में कार्यरत है।
- **अनुच्छेद 42 :**अनुच्छेद 42 न्यायपूर्ण और मानवीय कार्य और मातृत्व राहत की बात करता है। इसमें कहा गया है कि राज्य कुछ प्रावधानों का निर्माण करेगा ताकि नागरिकों को काम करने के लिए आसान, न्यायपूर्ण और मानवीय परिस्थितियाँ मिलें। यह महिलाओं के लिए मातृत्व राहत भी प्रदान करेगा।
- **अनुच्छेद 43 :**अनुच्छेद 43 उचित मजदूरी और जीवन के सभ्य स्तर के बारे में बात करता है। इसमें कहा गया है कि राज्य उचित कानून या आर्थिक संगठन द्वारा कृषि, औद्योगिक या अन्य में कार्यरत सभी श्रमिकों को काम, एक जीवित मजदूरी, काम की शर्तें, जीवन का एक सभ्य स्तर सुनिश्चित करने और अवकाश और सामाजिक- सांस्कृतिक अवसर और देश के ग्रामीण और दूरस्थ क्षेत्रों में व्यक्तिगत या सहकारी आधार पर कुटीर उद्योगों को बढ़ावा देना। अनुच्छेद 43 उचित मजदूरी और जीवन के सभ्य स्तर के बारे में बात करता है। इसमें कहा गया है कि राज्य उचित कानून या आर्थिक संगठन द्वारा, कृषि, औद्योगिक या अन्य में कार्यरत सभी श्रमिकों को काम, एक जीवित मजदूरी, काम की स्थिति, जीवन का एक सभ्य स्तर और अवकाश और सामाजिक आनंद का आनंद लेने का प्रयास कर सकता है। सांस्कृतिक अवसर और देश के ग्रामीण और दूरस्थ क्षेत्रों में व्यक्तिगत या सहकारी आधार पर कुटीर उद्योगों को बढ़ावा देना। अनुच्छेद 43बी सहकारी समितियों के प्रचार से संबंधित है। यह 2011 में 97वें संशोधन अधिनियम द्वारा डाला गया था। इसमें कहा गया है कि राज्य सहकारी समितियों के प्रबंधन को बढ़ावा देने का प्रयास करेगा ताकि उन लोगों की मदद की जा सके जो

इसमें लगे हुए हैं।

- **अनुच्छेद 44:** अनुच्छेद 44 समान नागरिक संहिता की बात करता है। चीजों को सरल बनाने और कानूनों में अस्पष्टता को कम करने के लिए नागरिकों के लिए भारत के पूरे क्षेत्र में एक समान नागरिक संहिता को सुरक्षित करने का प्रावधान होना चाहिए, जो इसे वास्तव में जितना जटिल बनाता है, उससे कहीं अधिक जटिल है।
- **अनुच्छेद 45:** अनुच्छेद 45 में देश में बच्चों के लिए मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा का प्रावधान है। राज्य संविधान में इस प्रावधान के शुरू होने की तारीख से 10 साल की अवधि के भीतर 14 वर्ष की आयु तक बच्चों के लिए मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने के लिए कानून बनाएगा। यह प्रावधान भारत के संविधान में 86वें संशोधन, 2002 के आधार पर शामिल किया गया था।
- **अनुच्छेद 46:** अनुच्छेद 46 अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, कमजोर वर्गों के शोषण से सुरक्षा से संबंधित है। राज्य समाज के कमजोर वर्गों यानी अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के शैक्षिक और आर्थिक हितों सहित विशेष देखभाल के साथ बढ़ावा देगा और उन्हें सभी प्रकार के शोषण से बचाने के लिए प्रावधान करेगा जिसमें सामाजिक अन्याय भी शामिल है।
- **अनुच्छेद 47:** अनुच्छेद 47 पोषण, जीवन स्तर और सार्वजनिक स्वास्थ्य के बारे में बात करता है। इसमें कहा गया है कि राज्य अपने लोगों के पोषण स्तर और जीवन स्तर को बढ़ाने के मामले को देखेगा और यह राज्य का कर्तव्य है कि वह सार्वजनिक स्वास्थ्य के सुधार पर नजर रखे। राज्य नशीले पेयों और औषधियों के उपभोग को प्रतिबंधित करने का भी प्रयास करेगा, जो स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हैं, औषधीय उद्देश्यों को छोड़कर। कई सामाजिक विकास कार्यक्रम हैं जैसे राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन, मध्याह्न भोजन योजना आदि, जो समाज के हाशिए पर रहने वाले वर्गों यानी महिलाओं, बच्चों, कमजोर वर्गों आदि को लक्षित करते हैं, जो इस डीपीएसपी से प्रेरित हैं।

- **अनुच्छेद 48 :**अनुच्छेद 48 वैज्ञानिक कृषि और पशुपालन की बात करता है। इसमें कहा गया है कि राज्य आधुनिक तरीकों और वैज्ञानिक तकनीकों का उपयोग करके कृषि और पशुपालन को व्यवस्थित करने का प्रयास करेगा जो लोगों को और अधिक उन्नत बनाता है और आसानी से अपनी आजीविका अर्जित करने में मदद करता है और राज्य गाय और अन्य मवेशियों मौजूदा नस्लों के संरक्षण और सुधार और वध को प्रतिबंधित करने के लिए कुछ प्रगतिशील कदम उठाएगा। । राज्य वर्तमान समय में प्रचलित आधुनिक एवं वैज्ञानिक तकनीक का उपयोग करते हुए कृषि एवं पशुपालन को संगठित करने का प्रयास करेगा तथा कृषि के विकास के लिए देश में विद्यमान नस्लों के संरक्षण एवं सुधार तथा देश में गायों एवं अन्य मवेशियों के वध पर रोक लगाने के लिए भी कदम उठायेगा। संबंधित अभ्यास।
- **अनुच्छेद 48ए: अनुच्छेद 48A** पर्यावरण और वन्यजीव संरक्षण के बारे में बात करता है। राज्य पर्यावरण और परिवेश की रक्षा और सुधार करने का प्रयास करेगा। और पर्यावरण को टिकाऊ बनाने के लिए देश के वनों और वन्यजीवों की रक्षा करना।
- **अनुच्छेद 49 :**अनुच्छेद 49 राष्ट्रीय महत्व के स्मारकों और स्थानों और वस्तुओं के संरक्षण के बारे में बात करता है। राज्य का यह कर्तव्य होगा कि वह प्रत्येक स्मारक या स्थान या ऐतिहासिक या कलात्मक हित की किसी भी वस्तु का किसी भी प्रकार के विरूपण, विनाश आदि से रक्षा करे।
- **अनुच्छेद 50:**अनुच्छेद 50 न्यायपालिका को कार्यपालिका से अलग करने की बात करता है।राज्य की सार्वजनिक सेवाओं में सरकार की न्यायपालिका और कार्यकारी निकाय के बीच एक रेखा होनी चाहिए क्योंकि इससे यह आसान हो जाता है कि दोनों एक दूसरे के काम में हस्तक्षेप न करें और स्वतंत्र रूप से कार्य करें।
- **अनुच्छेद 51:**अनुच्छेद 51 अंतरराष्ट्रीय शांति और सुरक्षा को बढ़ावा देने की बात करता है। राज्य प्रयास करेगा -अंतर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा को

बढ़ावा देना;राष्ट्रों के बीच मैत्रीपूर्ण और सम्मानजनक संबंध बनाए रखना;राष्ट्रों के बीच सद्भाव बनाए रखने के लिए एक व्यक्ति के साथ दूसरे व्यक्ति के व्यवहार में अंतरराष्ट्रीय कानून और संधि के दायित्वों के लिए सम्मान को बढ़ावा देना ;मध्यस्थता के तरीके से अंतरराष्ट्रीय विवादों के निपटारे को प्रोत्साहित करना।

---

## 1.6 कानून के माध्यम से राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों का कार्यान्वयन

---

1950 के बाद से कुछ अधिनियम और नीतियां हैं जिन्हें इन निर्देशक सिद्धांतों को प्रभावी बनाने के लिए लागू किया गया था। वे इस प्रकार हैं:s

1. न्यूनतम मजदूरी अधिनियम (1948)
2. बाल श्रम निषेध और विनियमन अधिनियम (1986)
3. मातृत्व लाभ अधिनियम (1961)
4. समान पारिश्रमिक अधिनियम (1976)
5. देश में कुटीर उद्योगों के विकास के लिए हथकरघा बोर्ड, हस्तशिल्प बोर्ड, कयर बोर्ड, रेशम बोर्ड आदि की स्थापना की गई है।
6. एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम (1978)
7. जवाहर रोजगार योजना (1989)
8. स्वर्णजयंती ग्राम स्वरोजगार योजना (1999)
9. संपूर्ण ग्राम रोजगार योजना (2001)
10. महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी कार्यक्रम (2006)
11. राष्ट्रीय वन नीति (1988)
12. अनुच्छेद 21-ए को 86वें संशोधन द्वारा जोड़ा गया था, जिसमें 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों के लिए मुफ्त शिक्षा अनिवार्य कर दी गई थी।
13. अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के हितों की रक्षा करने वाला अत्याचार निवारण अधिनियम।
14. कई भूमि सुधार अधिनियम।

## 1.7 राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों की आलोचना

---

कुछ आलोचकों का मानना है कि इन सिद्धांतों का कोई महत्व नहीं है क्योंकि इनके उल्लंघन को अदालतों में चुनौती नहीं दी जा सकती है। निर्देशक सिद्धांत निर्देशों की एक मात्र घोषणा है जिसे राज्य द्वारा अपनी इच्छा से पालन और सुरक्षित किया जाना है। लेकिन संविधान न तो उन्हें न्यायसंगत बनाता है और न ही यह किसी सीमा का उल्लेख करता है कि इसे किस हद तक सुरक्षित किया जा सकता है। ये न तो लगातार स्पष्ट हैं और न ही उचित रूप से वर्गीकृत हैं। ये निर्देशों का एक संग्रह प्रतीत होता है जो केवल नैतिकता पर आधारित हैं और एक राज्य अपने काम करने के लिए केवल नैतिकता पर भरोसा नहीं कर सकता। कई निर्देशों में स्पष्टता का अभाव है और उन्हें विभिन्न स्थानों पर दोहराया गया है।

---

सभी देशों के बीच अंतरराष्ट्रीय शांति और मैत्रीपूर्ण संबंधों को बढ़ावा देने का निर्देश सिर्फ एक घोषणा है लेकिन असली मुद्दा इसका सुरक्षित हिस्सा है जिसके लिए कुछ भी नहीं दिया गया है। भाग IV में कुछ निर्देश शामिल हैं जो वास्तविक अवलोकन में पूर्ण नहीं हैं। आदर्श निषेध लागू करना है लेकिन यह आदर्श वास्तव में और प्रभावी रूप से महसूस नहीं किया जा सकता है। शराबबंदी लागू करने वाले राज्यों को बाद में इसे खत्म करना पड़ा। अधिकांश निर्देशक सिद्धांत पुराने और विदेशी दर्शन पर आधारित हैं जो अब अपनी प्रासंगिकता खो चुके हैं। कई आलोचकों का मानना है कि प्रस्तावना में इन सभी लक्ष्यों को भी शामिल किया जाना चाहिए जो DPSP के तहत दिए गए हैं और भाग IV में उनके विवरण ने चीजों को पहले की तुलना में अधिक जटिल और जटिल बना दिया है। निर्देशक सिद्धांत केवल राज्य द्वारा वैध शक्ति के उपयोग के बारे में एक धारणा बनाते हैं और मकसद वादा करके समर्थन हासिल करना है न कि निष्क्रियता के माध्यम से।

---

## 1.8 सार संक्षेप

---

अंत में यह कहा जा सकता है कि संविधान राज्य नीति के कुछ निर्देशक सिद्धांतों को निर्धारित करता है, और कानून बनाने में इन सिद्धांतों को लागू

करना राज्य का कर्तव्य है। ये निर्धारित करते हैं कि राज्य लोगों के कल्याण को बढ़ावा देने के लिए यथासंभव प्रभावी ढंग से एक सामाजिक व्यवस्था को सुरक्षित और संरक्षित करने का प्रयास करेगा, जिसमें न्याय-सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक-राष्ट्रीय जीवन के सभी संस्थानों में गठित होगा। राज्य अपनी नीति को इस तरह से निर्देशित करेगा कि सभी पुरुषों और महिलाओं के लिए आजीविका के पर्याप्त साधन, समान काम के लिए समान वेतन और अपनी आर्थिक क्षमता और विकास की सीमाओं के भीतर अधिकार सुरक्षित करने के अधिकार को सुरक्षित करने के लिए प्रभावी प्रावधान किया जा सके। काम, शिक्षा और बेरोजगारी, बुढ़ापा, बीमारी और अक्षमता या अयोग्य अभाव के अन्य मामलों की स्थिति में सार्वजनिक सहायता के लिए। राज्य श्रमिकों को एक जीवित मजदूरी, काम की मानवीय स्थिति, जीवन का एक सभ्य स्तर और उद्योगों के प्रबंधन में श्रमिकों की पूर्ण भागीदारी सुनिश्चित करने का भी प्रयास करेगा। आर्थिक क्षेत्र में, राज्य को अपनी नीति को इस तरह से निर्देशित करना है कि समुदाय के भौतिक संसाधनों के स्वामित्व और नियंत्रण के वितरण को सुरक्षित किया जा सके और यह सुनिश्चित किया जा सके कि आर्थिक प्रणाली के संचालन के परिणामस्वरूप धन की एकाग्रता न हो। और उत्पादन के साधन आम नुकसान के लिए।

---

## 1.9 परिभाषिक शब्दावली

---

1. राज्य : एक राज्य लोगों के एक निकाय का एक राजनीतिक विभाजन है जो सीमाओं द्वारा परिभाषित क्षेत्र पर कब्जा कर लेता है। राज्य अपने क्षेत्र में संप्रभु है (जिसे क्षेत्राधिकार भी कहा जाता है) और इसके अंदर रहने वाले लोगों पर नियमों की व्यवस्था लागू करने का अधिकार है।
2. नीति : एक सरकार द्वारा सहमत या चुनी गई कार्य योजना ।

---

## 1.10 अभ्यास प्रश्न : लघु एवं विस्तृत

---

**लघु प्रश्न:**

1. संक्षिप्त कल्याणकारी राज्य की संक्षिप्त परिभाषा दीजिये ।



.....

.....

.....

.....

2. राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों की विशेषताओं की व्याख्या कीजिए।

.....

.....

.....

.....

**विस्तृत प्रश्न:**

---

1. राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों के विभिन्न अनुच्छेदों का वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

---

2. भारत में कानून के माध्यम से राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों का कार्यान्वयन पर एक निबंध लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

---

सन्दर्भ :

1. बसु, दुर्गा दास (1988), शॉर्टर कंस्टीट्यूशन ऑफ इंडिया, नई दिल्ली: प्रेंटिस हॉल ऑफ इंडिया
2. बसु, दुर्गा दास (1993), भारत के संविधान का परिचय, नई दिल्ली: प्रेंटिस हॉल ऑफ इंडिया
3. लास्की, केपीएससी होम (2019), डायरेक्टिव प्रिंसिपल ऑफ स्टेट पॉलिसी की नोट्स, दिल्ली: केपीएससी होम
4. मेनका गांधी बनाम भारत संघ; एआईआर 1978 एस.सी. 597, (1978)।
5. पायली, एम.वी. (1999), भारत का संविधान, नई दिल्ली: एस. चांद एंड कंपनी, आईएसबीएन 81-219-1907-एक्स
6. सिन्हा, सविता; दास, सुप्ता; रश्मी, नीरजा (2005), सामाजिक विज्ञान - कक्षा IX के लिए भाग II पाठ्यपुस्तक, नई दिल्ली: राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, भारत, ISBN 81-7450-351-X
7. सिंह, जे.पी.; दुबे, संजय; रश्मि, नीरजा; श्रीनिवासन, एम. वी. (2005), सामाजिक विज्ञान - कक्षा X के लिए भाग II पाठ्यपुस्तक, नई दिल्ली: राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, भारत, ISBN 81-7450-373-0
8. तायल, बी.बी.; जैकब, ए. (2005), इंडियन हिस्ट्री, वर्ल्ड डेवलपमेंट्स एंड सिविल्स, जिला सिरमौर, हिमाचल प्रदेश: अविचल पब्लिशिंग कंपनी, आईएसबीएन 81-7739-096-1
9. ओ'फ्लाहर्टी, डब्ल्यू.डी.; जे.डी.एम., डेरेंट (1981), द कॉन्सेप्ट ऑफ इयूटी इन एशिया; 1981 का मानव और जन अधिकार पर अफ्रीकी चार्टर
10. मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा और नागरिक और राजनीतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदा का अनुच्छेद 29।

# इकाई-8- सामाजिक न्याय सरोकार और समाज कल्याण

---

## इकाई की रूपरेखा

- 1.0 इकाई का उद्देश्य
- 1.1 परिचय
- 1.2 सामाजिक न्याय के मुख्य सिद्धांत
- 1.3 भारत में सामाजिक न्याय की स्थापना हेतु समाज कल्याण योजनाएँ
- 1.7 सार संक्षेप
- 1.8 परिभाषिक शब्दावली
- 1.9 अभ्यास प्रश्न लघु विवरण
- 1.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

---

## 1.0 इकाई का उद्देश्य

---

इस इकाई का मूल उद्देश्य छात्रों को सामाजिक कल्याण के लिए सामाजिक न्याय के महत्व के ज्ञान से परिचित कराना है। इस इकाई का अध्ययन करने के बाद छात्र यह जान पाएंगे कि सामाजिक न्याय सभी को अच्छे जीवन के लिए आवश्यक चीजें मिलें, छात्र विकलांग लोगों की सुरक्षा के तरीकों का अभ्यास करने में सक्षम हों, सुनिश्चित करता है। छात्र यह जान पाएंगे कि सामाजिक न्याय सुनिश्चित करता है कि सभी को पर्याप्त स्वास्थ्य सेवा मिले। छात्र यह समझने में सक्षम होंगे कि यह लोगों को धर्म-आधारित भेदभाव, यौन-आधारित भेदभाव और नस्लवाद से बचाता है। यह छात्रों के बीच समानता को बढ़ावा देने के लिए दृष्टिकोण विकसित करने में मदद करेगा। लिंग, आर्थिक समानता और शैक्षिक अवसरों में सुधार के लिए सामाजिक न्याय तथा सामाजिक कल्याण की अवधारण का ज्ञान विद्यार्थियों को मानव समाज से जुड़े विभिन्न पक्षों का विश्लेषण करने की योग्यता प्रदान करेगा।

## 1.1 परिचय

सामाजिक न्याय समाज संसाधनों, अवसरों और विशेषाधिकारों के उचित और न्यायसंगत विभाजन को संदर्भित करता है। मूल रूप से एक धार्मिक अवधारणा हैं।, इसे आर्थिक लाभ तक पहुंच प्रदान करने वाले सामाजिक संस्थानों के न्यायसंगत संगठन के रूप में अधिक शिथिल रूप से अवधारणाबद्ध किया गया है। इसे कभी-कभी "वितरणात्मक न्याय" कहा जाता है। यह निष्पक्षता पर जोर देता है कि समाज अपने सामाजिक संसाधनों को कैसे विभाजित करता है। जॉन रॉल्स की ए थ्योरी ऑफ जस्टिस (1971) सामाजिक न्याय की सबसे प्रसिद्ध थ्योरी में से एक है। लैंगिक असमानता, जातिवाद और LGBTQ+ भेदभाव सामाजिक न्याय समर्थन के लगातार विषय हैं। क्रिटिकल रैस थ्योरी जैसे सामाजिक न्याय के कुछ अनुप्रयोग अमेरिकी संस्कृति युद्धों में फंस गए हैं।

"सामाजिक न्याय" 1840 के दशक की शुरुआत में लुइगी तापरेली द्वारा प्राकृतिक कानून पर सैद्धांतिक ग्रंथ में होने वाले पहले उल्लेखनीय उपयोग के साथ देखा जा सकता है। तपारेली एक इतालवी जेसुइट पुजारी थे, जिन्होंने 19वीं शताब्दी के इतालवी राष्ट्रवादी आंदोलन, रिसोर्गेमेंटो के उदय के दौरान लिखा था, और इटली के एकीकरण के आसपास बहस की थी। तपारेली का सामाजिक न्याय का संस्करण केवल सामाजिक मामलों के लिए न्याय का एक अनुप्रयोग था और यह माना जाता था कि लोगों को प्राकृतिक धर्मशास्त्र और धर्म के आधार पर नैतिकता की अवधारणा के आधार पर सही काम करना चाहिए, और इसके अधिकांश इतिहास के लिए सामाजिक न्याय एक धार्मिक अवधारणा रही है। हालांकि, सामाजिक न्याय की सभी धारणाओं ने धर्म पर जोर नहीं दिया। औद्योगिक क्रांति के सामाजिक प्रभाव के साथ सामाजिक न्याय पर एक समाज के भीतर लोगों के लिए सामान्य भलाई के लिए काम करने के लिए एक नैतिक दायित्व के रूप में सभी का ध्यान केन्द्रित हुआ।

सामाजिक न्याय के सबसे प्रभावशाली अन्वेषणों में से एक 20वीं सदी के अमेरिकी दार्शनिक जॉन रॉल्स का है। ए थ्योरी ऑफ जस्टिस (1971) , जिसेमें उन्होंने सामाजिक न्याय के सिद्धांत के रूप में लेबल किया, रॉल्स ने

"निष्पक्षता के रूप में न्याय" के अपने दृष्टिकोण को रेखांकित किया। रॉल्स के लिए, इसका मतलब यह था कि लोगों को एक समाज के भीतर सामाजिक वस्तुओं के उचित आवंटन के साथ-साथ समाज के भीतर अनुमति दी जा सकने वाली असमानता के स्तरों के नियमों पर विचार करना चाहिए। रॉल्स ने प्रसिद्ध रूप से "अज्ञानता के घुंघट" की अवधारणा का उपयोग किया, इस बारे में अज्ञानता का ढोंग कि किसी दिए गए समाज में कोई कहां समाप्त होगा, जिसे रॉल्स ने सोचा था कि समाज को व्यवस्थित करने के लिए इस्तेमाल किया जाना चाहिए, साथ ही साथ "अंतर का सिद्धांत", जो धारण करता है कि सामाजिक और आर्थिक असमानताएँ स्वीकार्य हो सकती हैं यदि वे पूरे समाज को लाभ पहुँचाती हैं। निष्पक्षता का मूल तत्व महत्वपूर्ण है, विशेष रूप से सामाजिक संसाधनों तक पहुंच में, जिसे कभी-कभी "सामाजिक सामान" कहा जाता है। हालांकि यह सारगर्भित लग सकता है, सामाजिक वस्तुओं का वितरण कैसे किया जाता है, यह अत्यधिक प्रभावशाली है। महत्वपूर्ण रूप से, परिणामों के "सामाजिक निर्धारकों" को एक प्रणाली के न्यायपूर्ण होने या न होने के लिए केंद्रीय माना जाता है।

सार्वजनिक स्वास्थ्य में, उदाहरण के लिए, जन्म का स्थान किसी व्यक्ति के पास स्वास्थ्य देखभाल के विकल्पों को बदल सकता है और इसलिए, वह व्यक्ति कितने समय तक जीवित रहता है। इसे ध्यान में रखते हुए, स्वास्थ्य देखभाल में सामाजिक न्याय की वकालत करने वाले इस संभावना को बढ़ाने पर ध्यान केंद्रित कर सकते हैं कि ऐतिहासिक या आर्थिक कारणों से संसाधनों की अपर्याप्तता के बावजूद लोग स्वस्थ रहेंगे।

---

## 1.2 सामाजिक न्याय के मुख्य सिद्धांत

---

सामाजिक न्याय की कोई एक परिभाषा नहीं है, अधिकांश दृष्टिकोण समावेशन और निष्पक्षता के व्यापक लक्ष्यों को साझा करते हैं। उन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए, वे एक न्यायपूर्ण समाज के लिए नैतिक सिद्धांतों का एक सेट स्थापित करते हैं। इन सिद्धांतों में शामिल हो सकते हैं:

1. **पहुँच** : सामाजिक वस्तुओं तक समान पहुंच सामाजिक न्याय के सबसे बुनियादी सिद्धांतों में से एक है। यह मानता है कि समाज के संसाधन

सभी के लिए समान रूप से उपलब्ध होने चाहिए। उदाहरण के लिए, कई सामाजिक न्याय सिद्धांतकारों का मानना है कि शिक्षा, स्वास्थ्य देखभाल और रोजगार के अवसरों तक लोगों की समान पहुंच होनी चाहिए। लोक सेवक यह सुनिश्चित करके इस सिद्धांत का पालन कर सकते हैं दुर्भाग्य से, समाज के कई क्षेत्रों में, सामाजिक आर्थिक स्थिति, शिक्षा, रोजगार और पर्यावरण जैसे कारकों के आधार पर समुदायों की पहुंच के विभिन्न स्तर हैं। उदाहरण के लिए, शिक्षा, रोजगार के बेहतर अवसरों, उच्च वेतन वाली नौकरियों और आर्थिक उन्नति से जुड़ी है। इसके बाद, जब गुणवत्तापूर्ण, समान शिक्षा उपलब्ध नहीं होती है, तो यह कमी बेरोजगारी, कम वेतन वाले व्यवसायों और गरीबी के चक्र को बनाती है, जो आने वाली पीढ़ियों के लिए पहुंच को सीमित करती है। सेवाओं में विस्तार द्वारा , हम स्वास्थ्य, शिक्षा और समुदाय को प्रभावित करने वाले संसाधनों तक कम सेवा वाले समुदायों की पहुंच का विस्तार करते हैं।

2. **हिस्सेदारी:** यह सिद्धांत समानता है कि किसी भी पिछले अन्याय या प्रणालीगत भेदभाव के बावजूद लोगों को सफल होने के समान अवसर मिलने चाहिए। इसका मतलब यह हो सकता है कि संसाधनों को इस तरह से वितरित किया जाता है जो वंचित समुदायों या लोगों की विशिष्ट आवश्यकताओं को संबोधित करता है।
3. **विविधता :**विविधता यह सिद्धांत समानता पर आधारित है कि सरकार और व्यापारिक नेताओं को उन समुदायों का व्यापक रूप से प्रतिनिधि होना चाहिए जिनकी वे सेवा करते हैं। इसका मतलब यह है कि सत्ता के पदों पर न केवल किसी विशेष वर्ग बल्कि सभी समुदायों को सार्वजनिक संस्थानों में समान रूप से प्रतिनिधित्व किया जाना चाहिए। नीतिगत स्तर पर, यह सिद्धांत भेदभाव या कई भाषाओं में संसाधन प्रदान करने पर रोक लगा सकता है।लोक प्रशासक उन नीतियों को तैयार करने के लिए बेहतर ढंग से सुसज्जित होंगे जो सभी की जरूरतों को पूरा करती हैं जब वे व्यक्तियों और समूहों के बीच मौजूद अंतरों को स्वीकार करते हैं। प्रभावी होने के लिए, नीति-निर्माताओं को अवरोध पैदा करने वाले सभी

कारकों को पहचानना और स्वीकार करना चाहिए, फिर उन्हें दूर करने के तरीकों पर काम करना चाहिए। विविधता को समझकर और सांस्कृतिक भिन्नताओं को अपनाकर हम अवसरों और पहुंच का विस्तार करते हैं। हम प्रशासकों के बीच विविधता बढ़ाकर और कई भाषाओं में लिखित संसाधनों की आवश्यकता के द्वारा स्वास्थ्य सेवा तक पहुंच में सुधार कर सकते हैं। हम उन नीतियों को लागू करके रोजगार भेदभाव को कम कर सकते हैं जो जाति, लिंग, लिंग पहचान, धर्म, वैवाहिक स्थिति, यौन अभिविन्यास, आयु, शारीरिक क्षमता और अन्य मानवीय लक्षणों के आधार पर इसे रोकते हैं।

4. **भागीदारी** : भागीदारी का सिद्धांत कहता है कि महत्वपूर्ण निर्णय लेने में समुदाय में हर किसी की आवाज होनी चाहिए। कई समाजों में, सार्वजनिक नीतियां शक्तिशाली लोगों के एक छोटे समूह द्वारा निर्धारित की जाती हैं, बिना उन समुदायों से परामर्श किए जिनका वे प्रतिनिधित्व करते हैं। इसका समुदाय के एक बड़े हिस्से को बाहर करने का अनपेक्षित प्रभाव हो सकता है। सामाजिक न्याय की आवश्यकता है कि व्यक्तियों के पास उन नीतियों को बनाने में भाग लेने का अवसर और मंच हो जो उनकी भलाई को प्रभावित करती हैं। नीतियां अक्सर शक्तिशाली सरकारी पदों पर बैठे लोगों के चुनिंदा समूह द्वारा बनाई जाती हैं। सार्वजनिक प्रशासक इसे सावधानी से विचार करके रोक सकते हैं कि निर्णय लेने की प्रक्रिया का हिस्सा कौन होगा, जानबूझकर उन समूहों के लिए अधिवक्ताओं को आमंत्रित किया जाता है जो पर्याप्त रूप से प्रतिनिधित्व नहीं करते हैं, और उन्हें दीर्घकालिक और स्थायी पदों के लिए आवेदन करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं।

5. **मानव अधिकार** : सामाजिक न्याय का अंतिम सिद्धांत, और यकीनन सबसे मौलिक, मानव अधिकार है। राजनीतिक अधिकारों के अलावा, जैसे कि स्वतंत्रता, इसके लिए पुलिस के दुरुपयोग से मुक्ति और किसी के प्रजनन अधिकारों और शारीरिक स्वायत्तता के लिए सम्मान की भी आवश्यकता होती है।, सामाजिक आर्थिक स्थिति की परवाह किए बिना मानवाधिकार सभी व्यक्तियों के लिए अंतर्निहित हैं। मानवाधिकार और

सामाजिक न्याय अनिवार्य रूप से आपस में जुड़े हुए हैं, और एक के बिना दूसरे का होना असंभव है। इस देश में, ये अधिकार उन कानूनों में प्रकट होते हैं जो भाषण की स्वतंत्रता, मतदान के अधिकार, आपराधिक न्याय सुरक्षा और अन्य बुनियादी अधिकार प्रदान करते हैं।

---

### 1.3 भारत में सामाजिक न्याय की स्थापना हेतु समाज कल्याण योजनाएँ

---

भारत में समाज कल्याण योजना के माध्यम से सामाजिक समता एवं न्याय की स्थापना का उत्तरदायित्व सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार को प्रदान किया गया गति है। जो सामाजिक न्याय और अधिकारिता विभाग के माध्यम से कार्य करता है वर्ष 1985-86 में, पूर्ववर्ती कल्याण मंत्रालय को महिला एवं बाल विकास विभाग और कल्याण विभाग में विभाजित किया गया था। इसके साथ ही, अनुसूचित जाति विकास प्रभाग, जनजातीय विकास प्रभाग और अल्पसंख्यक और पिछड़ा वर्ग कल्याण प्रभाग को गृह मंत्रालय से और वक्फ प्रभाग को कानून मंत्रालय से तत्कालीन कल्याण मंत्रालय बनाने के लिए ले जाया गया।

इसके बाद, मई, 1998 में मंत्रालय का नाम बदलकर सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय कर दिया गया। इसके अलावा, अक्टूबर, 1999 में, जनजातीय विकास प्रभाग एक अलग जनजातीय मामलों का मंत्रालय बनाने के लिए चला गया। जनवरी, 2007 में वक्फ इकाई के साथ अल्पसंख्यक प्रभाग को मंत्रालय से बाहर कर दिया गया और एक अलग मंत्रालय के रूप में गठित किया गया और बाल विकास प्रभाग महिला एवं बाल विकास मंत्रालय के पास चला गया। हालांकि संविधान की सातवीं अनुसूची में राज्य सूची में "विकलांगता" का विषय शामिल है, भारत सरकार हमेशा विकलांगता क्षेत्र में सक्रिय रही है। यह न केवल सात राष्ट्रीय संस्थान (एनआई) चला रहा है जो विभिन्न प्रकार की विकलांगताओं और सात समग्र क्षेत्रीय केंद्रों (सीआरसी) से निपटते हैं, जो पीडब्ल्यूडी को पुनर्वास सेवाएं प्रदान करते हैं और पुनर्वास पेशेवरों के लिए पाठ्यक्रम चलाते हैं, बल्कि समान सेवाओं के लिए बड़ी संख्या में गैर सरकारी संगठनों को धन भी देते हैं और एक राष्ट्रीय विकलांग वित्त एवं विकास निगम



(NHFDC) भी है जो PwDs को स्वरोजगार के लिए रियायती दरों पर ऋण प्रदान करता है। इसके अलावा, केंद्र सरकार (i) एशियाई और प्रशांत क्षेत्र में विकलांग लोगों की पूर्ण भागीदारी और समानता पर उद्घोषणा - दिसंबर, 1992 में बीजिंग में अपनाई गई, और (ii) अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र कन्वेंशन की एक पार्टी है। विकलांग व्यक्ति (यूएनसीआरपीडी), जो मई, 2008 में प्रभाव में आया।

इस विषय ने विभिन्न राज्य सरकारों में अलग-अलग मात्रा में ध्यान आकर्षित किया है। केन्द्रीय स्तर पर भी एसजे एंड ई एम/ओ की कई जिम्मेदारियों में से एक विकलांगता होने और केवल एक ब्यूरो द्वारा देखे जाने के कारण अपर्याप्त ध्यान दिया गया है, क्योंकि इसका अधिकांश समय और ऊर्जा केवल मंत्रालय की अपनी योजनाओं को लागू करने में खर्च की जाती है, उनके व्यय और भौतिक लक्ष्यों को पूरा करना, और PwD के सशक्तिकरण के लिए राष्ट्रीय पुरस्कार जैसी वार्षिक समयबद्ध गतिविधियों का आयोजन करना। उपरोक्त पृष्ठभूमि में, 11वीं पंचवर्षीय योजना में यह कहा गया था कि "सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय के 'विकलांगता प्रभाग' को एक अलग विभाग में परिवर्तित करके मजबूत किया जाएगा, ताकि यह अन्य सभी के साथ प्रभावी रूप से संपर्क कर सके। संबंधित मंत्रालय/विभाग और विकलांगों के प्रति अपने उत्तरदायित्वों को पूरा करें।" "विकलांगता" विषय की विशिष्ट प्रकृति को देखते हुए, यूएनसीआरपीडी के आलोक में किए जाने वाले व्यापक कार्य, और मौजूदा कार्यान्वयन संरचना की अपर्याप्तता, अब समय आ गया है कि एम/एम में मौजूदा विकलांगता ब्यूरो को अपग्रेड किया जाए। ओ एसजे एंड ई। सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय के अंतर्गत निःशक्तता मामलों का एक अलग विभाग बनाने का निर्णय सरकार द्वारा सैद्धांतिक रूप से 3 जनवरी, 2012 को लिया गया था। राष्ट्रपति द्वारा 12 मार्च, 2012 को संसद के दोनों सदनों के समक्ष भी इसकी घोषणा की गई थी। दिनांक 12.5.2012 की अधिसूचना द्वारा सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय के अंतर्गत अब दो विभाग सृजित किए गए हैं, जिनके नाम हैं:-

- (i) सामाजिक न्याय और अधिकारिता विभाग (सामाजिक न्याय और अधिकारिता विभाग)

(ii) निःशक्तता कार्य विभाग (निशाक्त कार्य विभाग)

❖ **एनजीओ योजना**

1. अनुसूचित जातियों के लिए कार्यरत स्वैच्छिक संगठनों को अनुदान सहायता योजना
2. नशीली दवाओं की मांग में कमी के लिए राष्ट्रीय कार्य योजना
3. अटल वयो अभ्युदय योजना (अव्यय)
4. मद्यपान और पदार्थ (दवा) दुरुपयोग की रोकथाम के क्षेत्र में उत्कृष्ट सेवाओं के लिए राष्ट्रीय पुरस्कारों की योजना
5. ड्रग डिमांड रिडक्शन के लिए राष्ट्रीय कार्य योजना का कार्यान्वयन ढांचा

❖ **शैक्षिक योजनाएं**

1. ओबीसी छात्रों के लिए राष्ट्रीय फैलोशिप (एनएफ-ओबीसी)
2. ओबीसी बालक एवं बालिकाओं के लिए छात्रावासों का निर्माण
3. ओबीसी और ईबीसी के लिए विदेशी अध्ययन के लिए शैक्षिक ऋण पर ब्याज सब्सिडी की डॉ. अम्बेडकर योजना
4. NBCFDC द्वारा प्रदत्त शैक्षिक ऋण
5. अनुसूचित जाति और अन्य के लिए प्री-मैट्रिक छात्रवृत्ति योजना
6. अनुसूचित जाति के छात्रों के लिए पोस्ट-मैट्रिक छात्रवृत्ति
7. अनुसूचित जाति के छात्रों की योग्यता का उन्नयन
8. अनुसूचित जाति के छात्रों के लिए शीर्ष श्रेणी की शिक्षा के लिए केंद्रीय क्षेत्र छात्रवृत्ति
9. राष्ट्रीय विदेशी छात्रवृत्ति
10. अनुसूचित जाति के छात्रों के लिए राष्ट्रीय फैलोशिप
11. एससी और ओबीसी छात्रों के लिए निःशुल्क कोचिंग योजना
12. बाबू जगजीवन राम छात्रवास योजना (BJRCY)

13. ओबीसी छात्रों के लिए प्री-मैट्रिक छात्रवृत्ति
14. यंग अचीवर्स स्कीम (श्रेयस) (ओबीसी और अन्य) के लिए उच्च शिक्षा के लिए छात्रवृत्ति - 2021-22 से 2025-26।
15. ओबीसी और अन्य लोगों के लिए वाइब्रेंट इंडिया के लिए पीएम यंग अचीवर्स स्कॉलरशिप अवार्ड योजना (पीएम-यासवी)
16. पीएम केयर चिल्ड्रन के लिए स्कॉलरशिप
17. ओबीसी छात्रों के लिए श्रेयस के संबंध में उम्मीदवारों और संस्थानों के लिए प्रोफार्मा

#### ❖ **आर्थिक विकास के लिए योजनाएं**

1. एनबीसीएफडीसी की उद्यमी योजनाएं
2. अनुसूचित जाति (एससी) के लिए क्रेडिट वृद्धि गारंटी योजना
3. राष्ट्रीय सफाई कर्मचारी वित्त और विकास निगम (NSKFDC)
4. राष्ट्रीय अनुसूचित जाति वित्त और विकास निगम (NSFDC)
5. अनुसूचित जाति विकास निगमों (एससीडीसी) को सहायता की योजना
6. मैला ढोने वालों के पुनर्वास के लिए स्वरोजगार योजना (SRMS)
7. प्रधानमंत्री दक्ष और कुशल संपन्न हितग्राही (पीएम-दक्ष) योजना
8. सामाजिक अधिकारिता के लिए योजनाएं

#### ❖ **सामाजिक अधिकारिता को बढ़ावा देने के लिए एनबीसीएफडीसी द्वारा शुरू की गई योजनाएं**

1. नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955 और अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 के कार्यान्वयन के लिए केंद्र प्रायोजित योजना
2. प्रधानमंत्री आदर्श ग्राम योजना (पीएमएजीवाई)
3. आजीविका और उद्यम के लिए उपेक्षित व्यक्तियों के लिए समर्थन

(SMILE)

4. प्रधानमंत्री अनुसूचित जाति अभ्युदय योजना (PM-AJAY) किया।

❖ **अन्य योजनाएं :**

1. **आयुष्मान भारत योजना:** आयुष्मान भारत योजना में सरकार कार्ड रखने वाले लोगों को चिकित्सा सुविधा देती है। और तो और इसमें लोग 5 लाख की दवा जब भी जरूरत हो ले लेते हैं। यह योजना (2018) में शुरू की गई है
2. **प्रधानमंत्री ग्रामीण आवास योजना :** प्रधानमंत्री ग्रामीण आवास योजना गरीब लोगों को उनके घरों के निर्माण के लिए राशि देती है। इसे (1985) में लॉन्च किया गया और (25/6/2015) को पुनर्गठित किया गया
3. **प्रधानमंत्री अन्नदाता आय संरक्षण योजना :** प्रधानमंत्री अन्नदाता आय संरक्षण योजना मूल्य समर्थन योजना (पीएसएस), मूल्य कमी भुगतान योजना (पीडीपीएस) की सुविधा देती है। यह योजना (2018) में शुरू की गई है
4. **निरामय स्वास्थ्य बीमा योजना:** निरामया स्वास्थ्य योजना के तहत, केरल सरकार सेरेब्रल पाल्सी, मानसिक मंदता और बहु-विकलांगता से संबंधित बीमारी से पीड़ित रोगियों को स्वास्थ्य बीमा प्रदान करती है। इस योजना का उद्देश्य विकलांग रोगियों के स्वास्थ्य की स्थिति और जीवन की गुणवत्ता में सुधार करना है।
5. **वयोमीथ्रम परियोजना:** केरल सामाजिक सुरक्षा मिशन वृद्ध लोगों को चिकित्सा सुविधा प्रदान करने के उद्देश्य से केरल में निम्नलिखित परियोजना शुरू करता है। इस योजना का लाभ लेने के लिए आयु मानदंड 65 वर्ष है।

---

## 1.4 सार संक्षेप

---

अंत में यह कहा जा सकता है कि समाज कल्याण हमेशा उन लोगों की मदद करने की कोशिश करता है जो गरीबी से नीचे हैं और उनकी आय नगण्य है

जो अपने परिवार का जीवन यापन करने में समस्या का सामना करते हैं। इसके अलावा, समाज में, सभी विकास करना चाहते हैं लेकिन कोई भी उन लोगों के बारे में नहीं सोचता जो गरीबी से नीचे हैं। समाज कल्याण हमेशा हमारे समाज में जरूरतमंद लोगों तक पहुंचने और उनकी मदद करने की कोशिश करता है। जरूरतमंद लोगों की मदद के लिए यह कई कार्यक्रम बनाता है जो हमारे समाज में हुए जरूरतमंद लोगों और परिवारों के बारे में सोचते हैं। इसके अलावा, कई कार्यक्रम जरूरतमंद लोगों की आवश्यकता को पूरा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं

---

## 1.5 परिभाषिक शब्दावली

---

1. **सामाजिक न्याय** : सामाजिक न्याय समाज में संसाधनों, अवसरों और विशेषाधिकारों के उचित और न्यायसंगत विभाजन को संदर्भित करता है।
2. **समाज कल्याण** : वंचित समूहों की सहायता के लिए संगठित सार्वजनिक या निजी सामाजिक सेवाएं।

---

## 1.6 अभ्यास प्रश्न लघु एवं विस्तृत

---

लघु प्रश्न:

1. समाज कल्याण के संदर्भ में सामाजिक न्याय की अवधारण की व्याख्या किजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2. स्वास्थ्य एवं सुरक्षा के संदर्भ में सामाजिक न्याय की व्याख्या किजिये।

.....

.....

.....

.....

## विस्तृत प्रश्न:

1. सामाजिक न्याय के मुख्यसिद्धांतों का वर्णन किजिये।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2. भारत में सामाजिक न्याय की स्थापना हेतु समाज कल्याण योजनाओं का विवरण दीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

---

### 1.7 संदर्भ ग्रंथ सूची

---

1. कुमार, विवेक. "बाबासाहेब अम्बेडकर के सामाजिक न्याय और न्यायपूर्ण समाज के विचार," में डायलॉग अक्टूबर-दिसंबर, 2007, वॉल्यूम 9, नंबर 2।
2. सामाजिक न्याय के आधार 135मिलर, डेविड। सामाजिक न्याय के सिद्धांत। कैम्ब्रिज, मैसाचुसेट्स: हार्वर्ड विश्वविद्यालय प्रेस, 1999।

3. रॉल्स, जॉन। न्याय का सिद्धांत। संशोधित संस्करण। कैम्ब्रिज, मैसाचुसेट्स: हार्वर्डयूनिवर्सिटी प्रेस, 1999 (1971)।
4. रोड्रिग्स, वेलेरियन। "लेंस के रूप में न्याय: सेन और अम्बेडकर के माध्यम से रॉल्स से पूछताछ,"मानव विकास के भारतीय जर्नल । वॉल्यूम। 5, नंबर 1, 2011, पीपी। 153-174।
5. अम्बेडकर, बी आर, "बॉम्बे प्रेसीडेंसी में कानूनी शिक्षा के सुधार पर विचार,"डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर राइटिंग एंड स्पीचेज़, खंड 17 (2), 2014 में।
6. भारत की संविधान सभा बहस (कार्यवाही), वॉल्यूम। 11:576.हिल, एम. (2003): अंडरस्टैंडिंग सोशल पॉलिसी 7वां संस्करण।ऑक्सफोर्ड: ब्लैकवेल पब्लिशर्स।
7. विलियम्स, एफ. (1989): सोशल पॉलिसी: ए क्रिटिकल इंट्रोडक्शन।कैम्ब्रिज: पोलिटी प्रेस।
8. मोरनी, आर.एम. एंड क्रिसिक, जे. (1998): सोशल पॉलिसी
9. सामाजिक कार्य: कल्याणकारी राज्य पर महत्वपूर्ण निबंध।
10. ड्रेक, आर.एफ. (2001): द प्रिंसिपल्स ऑफ सोशल पॉलिसी। नयायॉर्क: पालग्रेव।
11. [www.socialjustice.nic.in](http://www.socialjustice.nic.in)
12. [www.mohfw.nic.in](http://www.mohfw.nic.in)
13. [www.education.nic.ins](http://www.education.nic.ins)
14. फेगिन, जो आर। "सोशल जस्टिस एंड सोशियोलॉजी: एजेंडा फॉर द ट्वेंटी-फर्स्ट सेंचुरी," मेंअमेरिकन सोशियोलॉजिकल रिव्यू, 2001, वॉल्यूम। 66 (फरवरी:1-20)।
15. कटारिया, कांता। अम्बेडकर की विचारधारा की प्रासंगिकता। जयपुर: रावत प्रकाशन, 2015।
16. कुमार, विवेक, "बाबासाहेब अम्बेडकर के सामाजिक न्याय और

न्यायपूर्ण समाज के विचार," डायलॉग अक्टूबर-दिसंबर, 2007, वॉल्यूम 9, नंबर 2।

17. मिलर, डेविड। सामाजिक न्याय के सिद्धांत। कैम्ब्रिज, मैसाचुसेट्स: हार्वर्ड विश्वविद्यालयप्रेस, 1999।
18. पॉवेल, मार्टिन, निक जॉन्स और एलिसन ग्रीन। "सामाजिक नीति में सामाजिक न्याय," सामाजिकनीति वार्षिक सम्मेलन, लिंकन, 2011।  
<http://www.social-policy.org.uk/lincoln2011/>
19. रॉल्स, जॉन। ए थ्योरी ऑफ़ जस्टिस, संशोधित संस्करण। कैम्ब्रिज, मैसाचुसेट्स: हार्वर्डयूनिवर्सिटी प्रेस, 1999 (1971)।
20. रोड्रिग्स, वेलेरियन। "लेंस के रूप में न्याय: सेन और अम्बेडकर के माध्यम से रॉल्स से पूछताछ,"
21. मानव विकास के भारतीय जर्नल में, वॉल्यूम। 5, नंबर 1, 2011, पीपी। 153-174।सेन, अमर्त्य. न्याय का विचार। लंदन: पेंगुइन, 2009s





उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त  
विश्वविद्यालय, प्रयागराज

# MSW-109

## समाज कल्याण प्रशासन

### खण्ड -3

#### सामाजिक विधान

---

- इकाई-9 मानव अधिकार और कल्याण का अधिकार
- इकाई -11 सामाजिक विधान एवं मलिन बस्तियां
- इकाई -12 पर्यावरण संरक्षण
- इकाई -13 उपभोक्ता संरक्षण
- इकाई -14 असंगठित श्रमिक

---

---

## संरक्षण एवं मार्गदर्शक

---

कुलपति

—प्रो० सीमा सिंह, माननीय कुलपति, उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

---

## विशेषज्ञ समिति

---

1. प्रो. सन्तोषा कुमार

निदेशक, समाज विज्ञान विद्याशाखा,

उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज —अध्यक्ष

2. प्रो. अनूप भारतीय,

समाज कार्य विभाग लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ —सदस्य

3. डॉ. सन्दीप गिरी,

समाज कार्य विभाग. महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी —सदस्य

4. डॉ. रोहित मिश्रा,

समाज कार्य विभाग विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ —सदस्य

5. डॉ. रूपेश सिंह,

डॉ. शकुन्तला मिश्रा विकलांग विश्वविद्यालय, लखनऊ —सदस्य

6. डॉ. अलका वर्मा,

असिस्टेंट प्रोफेसर, समाज कार्य, उ.प्र.रा.ट. मुक्त —सचिव

विश्वविद्यालय, प्रयागराज

---

## परिभाषक

---

प्रो० विवेक सिंह,

समाज कार्य विभाग, प्रो० राजेन्द्र सिंह (रज्जू भय्या) विश्वविद्यालय, प्रयागराज

---

## सम्पादक

---

प्रो० विवेक सिंह,

समाज कार्य विभाग, प्रो० राजेन्द्र सिंह (रज्जू भय्या) विश्वविद्यालय, प्रयागराज

---

## समन्वयक

डॉ. अलका वर्मा, असिस्टेंट प्रोफेसर, समाज कार्य, उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

---

## लेखक —

---

खण्ड 1 श्री मनीष सिंह,

असिस्टेंट प्रोफेसर, समाज कार्य

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

खण्ड 2 डॉ० गीतांजलि श्रीवास्तव,

असिस्टेंट प्रोफेसर,

प्रो० राजेन्द्र सिंह (रज्जू भय्या) विश्वविद्यालय, प्रयागराज

खण्ड 3 डॉ० कविता गौतम

असिस्टेंट प्रोफेसर समाज कार्य

प्रो० राजेन्द्र सिंह (रज्जू भय्या) विश्वविद्यालय, प्रयागराज

---

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

**ISBN No. - 978-81-19530-81-6**

---

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस सामग्री के किसी भी अंश को उपर राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में मिनियोग्राफी (वक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

**नोट :** पाठ्य सामग्री में मुद्रित सामग्री के विचारों एवं आकड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय, उत्तरदायी नहीं हैं।

प्रस्तुत पाठ्य सामग्री में विषय से सम्बन्धित सभी तथ्य एवं विचार मौलिक रूप से लेखक के द्वारा स्वयं उपलब्ध कराई गई है। विश्वविद्यालय, इस सामग्री के सम्बन्ध में किसी भी प्रकार से उत्तरदायी नहीं है।

## खंड परिचय

प्रस्तुत खंड सामाजिक विधान से सम्बंधित है। इस खंड को पांच इकाइयों में विभाजित किया गया है। प्रथम इकाई में सामाजिक विधान के अर्थ, उद्देश्य, महत्व, आवश्यकता विभिन्न पहलुओं पर चर्चा की गई है। इस इकाई में सामाजिक विधानों को सामाजिक परिवर्तन के एक साधन के रूप में वर्णित किया गया है। दूसरी इकाई में मलिन बस्तियों की उत्पत्ति, अर्थ, परिभाषा एवं कारणों को जानेंगे। इस अध्याय में मलिन बस्तियों की समस्याओं के साथ साथ उनके विकास के लिए सरकार द्वारा बनाये गए अधिनियम एवं योजनाओं के बारे में भी जानकारी दी गई है। इस खंड की तीसरी इकाई में पर्यावरण संरक्षण के अर्थ, अवधारणा के बारे में वर्णन किया गया है। इस इकाई में विद्यार्थी पर्यावरण संरक्षण एवं प्रबंधन के साथ-साथ सम्बंधित नीतियों एवं संवैधानिक प्रावधानों के बारे में भी जानेंगे। चौथी इकाई में विद्यार्थी उपभोक्ता के अर्थ, उसके दायित्व एवं उसके अधिकारों के बारे में जानेंगे। उपभोक्ता संरक्षण क्या है? उसके महत्व एवं उपभोक्ता संरक्षण के लिए कानूनी प्रावधानों की भी चर्चा इस अध्याय में की गई है। पांचवीं इकाई में विद्यार्थी असंगठित क्षेत्र एवं असंगठित श्रमिकों के बारे में जानेंगे एवं भारत सरकार द्वारा असंगठित श्रमिकों के स्थिति में सुधार लाने एवं उनके कल्याण के लिए बने गई योजनाओं को भी पढ़ेंगे।



# इकाई-9 मानव अधिकार और कल्याण का अधिकार

---

## इकाई की रूपरेखा

- 1.0 इकाई का उद्देश्य
- 1.1 परिचय
- 1.2 मानवाधिकारों की विशिष्टता
- 1.3 मानव अधिकारों का सार्वजनिक घोषणापत्र
- 1.4 मानव अधिकारों का सार्वजनिक घोषणापत्र घोषणा की व्याख्या
- 1.5 संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकारों को लागू करने के लिए संस्थागत ढांचा
- 1.6 कल्याण का अधिकार
- 1.7 सार संक्षेप
- 1.8 परिभाषिक शब्दावली
- 1.9 अभ्यास प्रश्न लघु विवरण
- 1.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

---

## 1.0 इकाई का उद्देश्य

---

मानव अधिकारों का अध्ययन करने का सबसे पहला उद्देश्य छात्रों को दुनिया भर में किसी भी प्रकार के भेदभाव और अन्याय से मानव जाति की रक्षा करने के ज्ञान से परिचित कराना है। इस इकाई का दूसरा उद्देश्य मानव अधिकारों के लिए व्यक्तिगत स्वाभिमान का विकास करना है। इस इकाई का अध्ययन करने के बाद छात्र जीवन के हर क्षेत्र में मानवीय गरिमा को महत्व देने में सक्षम होंगे। वे मानवाधिकारों के संरक्षण और संवर्धन की दिशा में उन्मुख गतिविधियों को शुरू करने में सक्षम होंगे।

---

## 1.1 परिचय

---

मानवाधिकार वे मानक हैं जो सभी मनुष्यों की गरिमा की रक्षा करते हैं। मानव अधिकार यह निर्धारित करते हैं कि कैसे अलग-अलग मनुष्य समाज में और एक-दूसरे के साथ रहते हैं, साथ ही साथ राज्य के साथ उनके संबंध और

उनके प्रति राज्य के दायित्व भी मानव अधिकार कानून सरकारों को कुछ कार्य करने के लिए बाध्य करता है, और उन्हें अन्य कार्य करने से रोकता है। व्यक्तियों की भी जिम्मेदारियां होती हैं: अपने मानवाधिकारों का उपयोग करने में, उन्हें दूसरों के अधिकारों का सम्मान करना चाहिए। किसी भी सरकार, समूह या व्यक्तिगत व्यक्ति को ऐसा कुछ भी करने का अधिकार नहीं है जो दूसरे के अधिकारों का उल्लंघन करता हो।

## 1.2 मानवाधिकारों की विशिष्टता

1. **सार्वभौमिकता और अविच्छेद्यता** :मानवाधिकार सार्वभौमिक और अविच्छेद्य हैं। दुनिया में हर जगह सभी लोग उनके हकदार हैं। कोई स्वेच्छा से इनका त्याग नहीं कर सकता। न ही दूसरे उन्हें उससे या उससे दूर ले जा सकते हैं।
2. **अभाज्यता** : मानवाधिकार अविभाज्य हैं। चाहे नागरिक, राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक या सांस्कृतिक प्रकृति के हों, वे सभी प्रत्येक मानव व्यक्ति की गरिमा में निहित हैं। नतीजतन, उन सभी को अधिकारों के रूप में समान दर्जा प्राप्त है। 'छोटा' अधिकार जैसी कोई चीज नहीं होती। मानवाधिकारों का कोई पदानुक्रम नहीं है।
3. **अंतर-निर्भरता और अंतर-संबंधितता**: एक अधिकार की प्राप्ति अक्सर पूरी तरह या आंशिक रूप से दूसरों की प्राप्ति पर निर्भर करती है। उदाहरण के लिए, स्वास्थ्य के अधिकार की प्राप्ति शिक्षा के अधिकार या सूचना के अधिकार की प्राप्ति पर निर्भर हो सकती है।
4. **समानता और गैर-भेदभाव**: सभी व्यक्ति मनुष्य के रूप में समान हैं और प्रत्येक मानव व्यक्ति की अंतर्निहित गरिमा के आधार पर। सभी मानव जाति, रंग, लिंग, जातीयता, आयु, भाषा, धर्म, राजनीतिक या अन्य राय, राष्ट्रीय या सामाजिक मूल, विकलांगता, संपत्ति, जन्म या अन्य स्थिति जैसे किसी भी प्रकार के भेदभाव के बिना अपने मानवाधिकारों के हकदार हैं। मानवाधिकार संधि निकायों द्वारा समझाया गया।
5. **भागीदारी और समावेश**: प्रत्येक व्यक्ति और सभी लोग नागरिक, राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विकास में सक्रिय, स्वतंत्र और सार्थक भागीदारी, योगदान और आनंद लेने के हकदार हैं,

जिसके माध्यम से मानवाधिकारों और मौलिक स्वतंत्रता को महसूस किया जा सकता है।

6. **जवाबदेही और कानून का शासन:** राज्यों और अन्य कर्तव्य-धारकों को मानवाधिकार उपकरणों में निहित कानूनी मानदंडों और मानकों का पालन करना चाहिए। जहां वे ऐसा करने में विफल रहते हैं, पीड़ित अधिकार-धारक कानून द्वारा प्रदान किए गए नियमों और प्रक्रियाओं के अनुसार सक्षम अदालत या अन्य न्यायनिर्णायक के समक्ष उचित निवारण के लिए कार्यवाही करने के हकदार हैं।

---

## 1-3 मानव अधिकारों का सार्वजनिक घोषणापत्र

---

मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा मानव अधिकारों के इतिहास में एक मील का पत्थर दस्तावेज है। दुनिया के सभी क्षेत्रों के विभिन्न कानूनी और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि वाले प्रतिनिधियों द्वारा तैयार की गई, घोषणा को संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा 10 दिसंबर 1948 को पेरिस में घोषित किया गया था (सामान्य सभा संकल्प 217 ए) सभी लोगों और सभी के लिए उपलब्धियों के एक सामान्य मानक के रूप में राष्ट्र का। यह पहली बार, मौलिक मानवाधिकारों को सार्वभौमिक रूप से संरक्षित करने के लिए निर्धारित करता है और इसका 500 से अधिक भाषाओं में अनुवाद किया गया है। यूडीएचआर को व्यापक रूप से प्रेरित होने के रूप में मान्यता प्राप्त है, और सत्तर से अधिक मानवाधिकार संधियों को अपनाने का मार्ग प्रशस्त किया है, जो आज वैश्विक और क्षेत्रीय स्तरों पर स्थायी आधार पर लागू होते हैं (सभी उनके संदर्भों में इसका संदर्भ देते हैं)।

---

## प्रस्तावना

---

जबकि मानव परिवार के सभी सदस्यों की अंतर्निहित गरिमा और समान और अविच्छेद्य अधिकारों की मान्यता दुनिया में स्वतंत्रता, न्याय और शांति की नींव है, जबकि मानवाधिकारों की अवहेलना और अवमानना का परिणाम बर्बर कृत्यों में हुआ है, जिसने मानव जाति की अंतरात्मा को आहत किया है, और एक ऐसी दुनिया का आगमन जिसमें मनुष्य भाषण और विश्वास की स्वतंत्रता और भय और अभाव से स्वतंत्रता का आनंद उठाएगा, को सर्वोच्च आकांक्षा के रूप में घोषित किया गया है। आम लोगों की, जबकि यह आवश्यक है कि अत्याचार और उत्पीड़न के खिलाफ विद्रोह करने के लिए, अंतिम उपाय के

रूप में, मनुष्य को सहारा लेने के लिए मजबूर नहीं किया जाना चाहिए, कि कानून के शासन द्वारा मानवाधिकारों की रक्षा की जानी चाहिए, जबकि राष्ट्रों के बीच मैत्रीपूर्ण संबंधों के विकास को बढ़ावा देना आवश्यक है, जबकि संयुक्त राष्ट्र के लोगों ने चार्टर में मौलिक मानव अधिकारों, मानव व्यक्ति की गरिमा और मूल्य और पुरुषों और महिलाओं के समान अधिकारों में अपने विश्वास की पुष्टि की है और सामाजिक प्रगति और जीवन के बेहतर मानकों को बढ़ावा देने के लिए दृढ़ संकल्प किया है। बड़ी स्वतंत्रता, जबकि सदस्य देशों ने संयुक्त राष्ट्र के सहयोग से, मानव अधिकारों और मौलिक स्वतंत्रता के लिए सार्वभौमिक सम्मान और पालन को बढ़ावा देने के लिए स्वयं को वचन दिया है, जबकि इस प्रतिज्ञा की पूर्ण प्राप्ति के लिए इन अधिकारों और स्वतंत्रताओं की एक आम समझ सबसे महत्वपूर्ण है,

मानव अधिकारों की इस सार्वभौम घोषणा को सभी लोगों और सभी राष्ट्रों के लिए उपलब्धि के एक सामान्य मानक के रूप में घोषित करता है, अंत तक कि प्रत्येक व्यक्ति और समाज का प्रत्येक अंग, इस घोषणा को लगातार ध्यान में रखते हुए, इनके लिए सम्मान को बढ़ावा देने के लिए शिक्षण और शिक्षा द्वारा प्रयास करेगा अधिकारों और स्वतंत्रताओं और राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय प्रगतिशील उपायों द्वारा, उनकी सार्वभौमिक और प्रभावी मान्यता और पालन को सुरक्षित करने के लिए, दोनों ही सदस्य राज्यों के लोगों के बीच और उनके अधिकार क्षेत्र के क्षेत्रों के लोगों के बीच।

---

## **1.4 मानव अधिकारों का सार्वजनिक घोषणापत्र घोषणा की व्याख्या**

---

**अनुच्छेद 1:** सभी मनुष्य गरिमा और अधिकारों में स्वतंत्र और समान पैदा होते हैं। वे तर्क और विवेक से संपन्न हैं और उन्हें भाईचारे की भावना से एक दूसरे के प्रति कार्य करना चाहिए।

**अनुच्छेद 2:** हर कोई इस घोषणा में निर्धारित सभी अधिकारों और स्वतंत्रताओं का हकदार है, बिना किसी प्रकार के भेद के, जैसे जाति, रंग, लिंग, भाषा, धर्म, राजनीतिक या अन्य राय, राष्ट्रीय या सामाजिक मूल, संपत्ति, जन्म या अन्य स्थिति। इसके अलावा, किसी व्यक्ति के देश या क्षेत्र की राजनीतिक, अधिकार क्षेत्र या अंतरराष्ट्रीय स्थिति के आधार पर कोई भेद नहीं किया जाएगा, चाहे वह स्वतंत्र हो, विश्वास हो, गैर-स्वशासी हो या संप्रभुता की किसी



अन्य सीमा के तहत हो।

**अनुच्छेद 3 :** प्रत्येक व्यक्ति को जीवन, स्वतंत्रता और व्यक्ति की सुरक्षा का अधिकार है।

**अनुच्छेद 4 :** किसी को गुलामी या गुलामी में नहीं रखा जाएगा; गुलामी और दास व्यापार उनके सभी रूपों में निषिद्ध होगा।

**अनुच्छेद 5 :** किसी को भी यातना या क्रूर, अमानवीय या अपमानजनक व्यवहार या दंड के अधीन नहीं किया जाएगा।

**अनुच्छेद 6:** हर किसी को हर जगह कानून के सामने एक व्यक्ति के रूप में मान्यता का अधिकार है।

**अनुच्छेद 7 :** सभी कानून के समक्ष समान हैं और बिना किसी भेदभाव के कानून के समान संरक्षण के हकदार हैं। सभी इस घोषणा के उल्लंघन में किसी भी भेदभाव के खिलाफ और इस तरह के भेदभाव के लिए किसी भी उत्तेजना के खिलाफ समान सुरक्षा के हकदार हैं।

**अनुच्छेद 8 :** संविधान या कानून द्वारा उसे दिए गए मौलिक अधिकारों का उल्लंघन करने वाले कृत्यों के लिए सक्षम राष्ट्रीय न्यायाधिकरणों द्वारा एक प्रभावी उपाय का अधिकार है।

**अनुच्छेद 9:** को भी मनमानी गिरफ्तारी, नजरबंदी या निर्वासन के अधीन नहीं किया जाएगा।

**अनुच्छेद 10 :** हर कोई अपने अधिकारों और दायित्वों के निर्धारण में और उसके खिलाफ किसी भी आपराधिक आरोप के निर्धारण में एक स्वतंत्र और निष्पक्ष न्यायाधिकरण द्वारा निष्पक्ष और सार्वजनिक सुनवाई के लिए पूर्ण समानता का हकदार है।

**अनुच्छेद 11 :** दंडात्मक अपराध के लिए आरोपित प्रत्येक व्यक्ति को तब तक निर्दोष माने जाने का अधिकार है, जब तक कि वह सार्वजनिक परीक्षण में कानून के अनुसार दोषी साबित न हो जाए, जिसमें उसके पास अपने बचाव के लिए आवश्यक सभी गारंटियां हों।

किसी भी कार्य या चूक के कारण किसी भी दंडात्मक अपराध के लिए किसी को भी दोषी नहीं ठहराया जाएगा, जो कि किए जाने के समय राष्ट्रीय या

अंतर्राष्ट्रीय कानून के तहत एक दंडात्मक अपराध नहीं था। न ही दंडात्मक अपराध किए जाने के समय लागू होने वाले दंड से अधिक भारी जुर्माना लगाया जाएगा।

**अनुच्छेद 12 :** किसी की निजता, परिवार, घर या पत्राचार में मनमाना हस्तक्षेप नहीं किया जाएगा और न ही उसके सम्मान और प्रतिष्ठा पर कोई हमला किया जाएगा। इस तरह के हस्तक्षेप या हमलों के खिलाफ हर किसी को कानून की सुरक्षा का अधिकार है।

**अनुच्छेद 13 :** सभी को प्रत्येक राज्य की सीमाओं के भीतर आने-जाने और रहने की स्वतंत्रता का अधिकार है। प्रत्येक व्यक्ति को अपने सहित किसी भी देश को छोड़ने और अपने देश लौटने का अधिकार है।

**अनुच्छेद 14 :** हर किसी को दूसरे देशों में उत्पीड़न से बचने के लिए शरण लेने और आनंद लेने का अधिकार है। यह अधिकार वास्तव में गैर-राजनीतिक अपराधों या संयुक्त राष्ट्र के उद्देश्यों और सिद्धांतों के विपरीत कृत्यों से उत्पन्न होने वाले मुकदमों के मामले में लागू नहीं किया जा सकता है।

**अनुच्छेद 15:** सभी को एक राष्ट्रीयता का अधिकार है। किसी को भी मनमाने ढंग से उसकी राष्ट्रीयता से वंचित नहीं किया जाएगा और न ही उसे अपनी राष्ट्रीयता बदलने के अधिकार से वंचित किया जाएगा।

**अनुच्छेद 16:** पूरी उम्र के पुरुषों और महिलाओं को बिना किसी जाति, राष्ट्रीयता या धर्म की सीमा के शादी करने और परिवार स्थापित करने का अधिकार है। वे विवाह के दौरान, विवाह के दौरान और उसके विघटन पर समान अधिकारों के हकदार हैं। इच्छुक पति-पत्नी की स्वतंत्र और पूर्ण सहमति से ही विवाह किया जाएगा। परिवार समाज की प्राकृतिक और मौलिक समूह इकाई है और समाज और राज्य द्वारा सुरक्षा का हकदार है।

**अनुच्छेद 17:** प्रत्येक व्यक्ति को अकेले तथा दूसरों के साथ मिलकर संपत्ति रखने का अधिकार है। किसी को भी मनमाने ढंग से उसकी संपत्ति से वंचित नहीं किया जाएगा।

**अनुच्छेद 18 :** सभी को विचार, विवेक और धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार है; इस अधिकार में अपने धर्म या विश्वास को बदलने की स्वतंत्रता, और स्वतंत्रता, या तो अकेले या दूसरों के साथ समुदाय में और सार्वजनिक या

निजी तौर पर, शिक्षण, अभ्यास, पूजा और पालन में अपने धर्म या विश्वास को प्रकट करने की स्वतंत्रता शामिल है।

**अनुच्छेद 19 :** प्रत्येक व्यक्ति को विचार और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार है; इस अधिकार में हस्तक्षेप के बिना राय रखने और किसी भी मीडिया के माध्यम से और सीमाओं की परवाह किए बिना सूचना और विचारों को प्राप्त करने, प्राप्त करने और प्रदान करने की स्वतंत्रता शामिल है।

**अनुच्छेद 20 :** सभी को शांतिपूर्ण सभा और संघ की स्वतंत्रता का अधिकार है। किसी को भी संघ में शामिल होने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता है।

**अनुच्छेद 21 :** प्रत्येक व्यक्ति को सीधे या स्वतंत्र रूप से चुने गए प्रतिनिधियों के माध्यम से अपने देश की सरकार में भाग लेने का अधिकार है। प्रत्येक व्यक्ति को अपने देश में सार्वजनिक सेवा तक समान पहुंच का अधिकार है। लोगों की इच्छा सरकार के अधिकार का आधार होगी; यह आवधिक और वास्तविक चुनावों में व्यक्त किया जाएगा जो सार्वभौमिक और समान मताधिकार द्वारा होंगे और गुप्त मतदान या समान स्वतंत्र मतदान प्रक्रियाओं द्वारा आयोजित किए जाएंगे।

**अनुच्छेद 22:** प्रत्येक व्यक्ति, समाज के एक सदस्य के रूप में, सामाजिक सुरक्षा का अधिकार रखता है और राष्ट्रीय प्रयास और अंतर्राष्ट्रीय सहयोग के माध्यम से और प्रत्येक राज्य के संगठन और संसाधनों के अनुसार आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों के लिए अपरिहार्य है। उनकी गरिमा और उनके व्यक्तित्व का मुक्त विकास।

**अनुच्छेद 23 :** प्रत्येक व्यक्ति को काम करने का अधिकार है, रोजगार के स्वतंत्र विकल्प का, काम की उचित और अनुकूल परिस्थितियों का और बेरोजगारी से सुरक्षा का अधिकार है। बिना किसी भेदभाव के सभी को समान कार्य के लिए समान वेतन का अधिकार है। काम करने वाले प्रत्येक व्यक्ति को अपने और अपने परिवार के लिए मानवीय गरिमा के योग्य अस्तित्व सुनिश्चित करने के लिए उचित और अनुकूल पारिश्रमिक का अधिकार है, और सामाजिक सुरक्षा के अन्य साधनों द्वारा, यदि आवश्यक हो, पूरक है। प्रत्येक व्यक्ति को अपने हितों की रक्षा के लिए ट्रेड यूनियन बनाने और उसमें शामिल होने का अधिकार है।

**अनुच्छेद 24 :** प्रत्येक व्यक्ति को काम के घंटे की उचित सीमा और वेतन के साथ आवधिक छुट्टियों सहित आराम और अवकाश का अधिकार है।

**अनुच्छेद 25 :** प्रत्येक व्यक्ति को अपने और अपने परिवार के स्वास्थ्य और भलाई के लिए पर्याप्त जीवन स्तर का अधिकार है, जिसमें भोजन, कपड़ा, आवास और चिकित्सा देखभाल और आवश्यक सामाजिक सेवाएं शामिल हैं, और बेरोजगारी, बीमारी की स्थिति में सुरक्षा का अधिकार, विकलांगता, विधवापन, बुढ़ापा या उसके नियंत्रण से बाहर परिस्थितियों में आजीविका की अन्य कमी। मातृत्व और बचपन विशेष देखभाल और सहायता के हकदार हैं। सभी बच्चे, चाहे वे विवाह में पैदा हुए हों या बाहर, समान सामाजिक सुरक्षा का आनंद लेंगे।

**अनुच्छेद 26:** शिक्षा पर सभी का अधिकार है। शिक्षा मुफ्त होगी, कम से कम प्रारंभिक और मौलिक चरणों में। प्रारंभिक शिक्षा आवश्यक होगी। तकनीकी और व्यावसायिक शिक्षा आम तौर पर उपलब्ध कराई जाएगी और योग्यता के आधार पर उच्च शिक्षा सभी के लिए समान रूप से सुलभ होगी। शिक्षा को मानव व्यक्तित्व के पूर्ण विकास और मानवाधिकारों और मौलिक स्वतंत्रता के प्रति सम्मान को मजबूत करने के लिए निर्देशित किया जाना चाहिए। यह सभी राष्ट्रों, नस्लीय या धार्मिक समूहों के बीच समझ, सहिष्णुता और मित्रता को बढ़ावा देगा और शांति बनाए रखने के लिए संयुक्त राष्ट्र की गतिविधियों को आगे बढ़ाएगा। माता-पिता को अपने बच्चों को दी जाने वाली शिक्षा का प्रकार चुनने का पूर्व अधिकार है।

**अनुच्छेद 27 :** प्रत्येक व्यक्ति को स्वतंत्र रूप से समुदाय के सांस्कृतिक जीवन में भाग लेने, कला का आनंद लेने और वैज्ञानिक प्रगति और उसके लाभों में हिस्सा लेने का अधिकार है। प्रत्येक व्यक्ति को किसी भी वैज्ञानिक, साहित्यिक या कलात्मक उत्पादन से उत्पन्न नैतिक और भौतिक हितों की सुरक्षा का अधिकार है, जिसके वे लेखक हैं।

**अनुच्छेद 28:** हर कोई एक सामाजिक और अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था का हकदार है जिसमें इस घोषणा में निर्धारित अधिकारों और स्वतंत्रताओं को पूरी तरह से महसूस किया जा सकता है।

**अनुच्छेद 29 :** प्रत्येक व्यक्ति का उस समुदाय के प्रति कर्तव्य होता है जिसमें उसके व्यक्तित्व का स्वतंत्र एवं पूर्ण विकास संभव हो। अपने अधिकारों

और स्वतंत्रताओं के प्रयोग में, प्रत्येक व्यक्ति केवल उन सीमाओं के अधीन होगा जो केवल दूसरों के अधिकारों और स्वतंत्रता के लिए उचित मान्यता और सम्मान हासिल करने और नैतिकता, सार्वजनिक व्यवस्था की उचित आवश्यकताओं को पूरा करने के उद्देश्य से कानून द्वारा निर्धारित की जाती हैं। और एक लोकतांत्रिक समाज में सामान्य कल्याण। इन अधिकारों और स्वतंत्रताओं का किसी भी मामले में संयुक्त राष्ट्र के उद्देश्यों और सिद्धांतों के विपरीत प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

**अनुच्छेद 30 :** इस घोषणा में कुछ भी किसी भी राज्य, समूह या व्यक्ति के लिए किसी भी गतिविधि में संलग्न होने या किसी भी अधिकार और स्वतंत्रता के विनाश के उद्देश्य से किसी भी कार्य को करने के लिए किसी भी अधिकार को लागू करने के रूप में व्याख्या नहीं की जा सकती है।

---

## 1.5 संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकारों को लागू करने के लिए संस्थागत ढांचा

---

अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार कानून संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकारों के काम और इसके द्वारा समर्थित तंत्रों की नींव प्रदान करता है। यह कानूनी ढांचा मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा (यूडीएचआर) को अपनाने के साथ पैदा हुआ था, जो कि मौलिक मानवाधिकारों को निर्धारित करने वाला इतिहास का पहला दस्तावेज है। दो अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदाओं के साथ मिलकर अब यह मानव अधिकारों का अंतर्राष्ट्रीय विधेयक बनाता है। चूंकि 1948 में यूडीएचआर को अपनाया गया था, इसने कानूनी रूप से बाध्यकारी अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार संधियों, घोषणाओं और अन्य उपकरणों की एक श्रृंखला को प्रेरित किया है, जो आज संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार की गतिविधियों को रेखांकित और निर्देशित कर रहे हैं।

संयुक्त राष्ट्र प्रणाली के भीतर दो प्रकार के मानवाधिकार निगरानी तंत्र हैं: संधि-आधारित निकाय और चार्टर-आधारित निकाय। दस मानवाधिकार संधि निकाय, स्वतंत्र विशेषज्ञों की समितियों से बने हैं, जो मुख्य अंतरराष्ट्रीय मानवाधिकार संधियों के कार्यान्वयन की निगरानी करते हैं। चार्टर-आधारित निकायों में मानवाधिकार परिषद, विशेष प्रक्रियाएँ, सार्वभौमिक आवधिक समीक्षा और स्वतंत्र जाँच शामिल हैं। संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार सभी विभिन्न तंत्रों को विशेषज्ञता और सहायता प्रदान करता है। दस मानवाधिकार संधि

निकाय निम्नलिखित हैं:

1. नस्लीय भेदभाव के उन्मूलन पर समिति
2. आर्थिक सांस्कृतिक और सामाजिक अधिकारों पर समिति
3. मानवाधिकार समिति
4. महिलाओं के खिलाफ भेदभाव के उन्मूलन पर समिति
5. अत्याचार के खिलाफ समिति
6. प्रवासी श्रमिकों पर समिति
7. बाल अधिकारों पर समिति
8. यातना और अन्य क्रूर, अमानवीय या अपमानजनक उपचार या सजा की रोकथाम पर उपसमिति
9. अक्षमता वाले व्यक्तियों के अधिकारों पर समिति
10. जबरन गुमशुदगी पर समिति

---

## 1. 6 कल्याण का अधिकार

---

सामान्यता मानवाधिकारों में कल्याण का अधिकार अंतरनिहित होता है। अर्थात् व्यक्ति के कल्याण को मानवाधिकारों से अलग नहीं किया जा सकता। कल्याण के भाव से विहीन किसी भी अधिकार को मानवाधिकारों के श्रेणी में सम्मिलित नहीं किया जा सकता है। अतः कल्याण का अधिकार विश्व के सभी के सभी व्यक्तियों का अंतरनिहित मानवाधिकार है। कल्याण में स्वास्थ्य सेवा, शिक्षा, बुनियादी ढांचा, व्यावसायिक प्रशिक्षण और सार्वजनिक आवास जैसी मुफ्त या रियायती सामाजिक सेवाओं के माध्यम से बुनियादी स्तर की भलाई प्रदान करने के प्रयास भी शामिल हो सकते हैं। एक कल्याणकारी राज्य में, राज्य स्वास्थ्य, शिक्षा, समाज के बुनियादी ढांचे और कल्याण, वर्णित सामाजिक सेवाओं की एक श्रृंखला प्रदान करते हैं। कल्याण, या आम तौर पर सामाजिक कल्याण, एक प्रकार की सरकारी सहायता है, जिसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि समाज के सदस्य भोजन और आश्रय जैसी बुनियादी मानवीय जरूरतों को पूरा कर सकें।

राष्ट्र के "मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा" (1948) में प्रलेखित किया गया है: "समाज के सदस्य के रूप में प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक कल्याण का अधिकार है और वह इसका हकदार है प्राप्ति, राष्ट्रीय प्रयास और अंतर्राष्ट्रीय सहयोग के माध्यम से और प्रत्येक राज्य के संगठन और संसाधनों के अनुसार, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों की उसकी गरिमा और उसके व्यक्तित्व के मुक्त विकास के लिए अनिवार्य है "(अनुच्छेद 22)। सामाजिक कल्याण के लिए मानव अधिकारों पर आधारित दृष्टिकोण अपेक्षित परिणामों के आकलन के आधार के रूप में मानकों को लागू कर रहा है और परिणामों की दिशा में कार्रवाई के लिए शर्तों और ढांचे के रूप में सिद्धांतों को अपना रहा है। यह विधि पारंपरिक से इस मायने में भिन्न है कि यह न केवल परिणामों पर केंद्रित है बल्कि उन परिणामों को प्राप्त करने के लिए चुनी गई प्रक्रियाओं पर भी ध्यान केंद्रित करती है। इसके अलावा, इसका मूल्यांकन एक सामाजिक कल्याण प्रणाली संरचना के अनुसार किया जाता है।

संयुक्त राष्ट्र ने मानव अधिकारों से संबंधित कुछ सिद्धांत प्रस्तुत किए हैं और उन्हें लोगों के सामाजिक कल्याण के अधिकार को सुनिश्चित करने में लागू किया है। ये इस प्रकार हैं: 1- सामाजिक कल्याण सुनिश्चित करने में व्यापकता और सार्वभौमिकता का सिद्धांत; 2- सामाजिक कल्याण सुनिश्चित करने और मानव अधिकारों के बीच कोई श्रेणीबद्ध पक्षपात का सिद्धांत; 3- सामाजिक कल्याण सुनिश्चित करने में अन्योन्याश्रितता और सहसंबंध का सिद्धांत; 4- समानता का सिद्धांत और सामाजिक कल्याण सुनिश्चित करने में कोई भेदभाव नहीं; 5- सामाजिक कल्याण सुनिश्चित करने में भागीदारी और एकीकरण का सिद्धांत; 6- सामाजिक कल्याण सुनिश्चित करने में जिम्मेदारी का सिद्धांत और कानून का शासन।

कुछ इतिहासकार संहिताबद्ध दान देने की प्रणाली को कल्याण की श्रेणी में सममिलित करते हैं जैसे सातवीं शताब्दी (634 CE) रशीदून खलीफ़ा उमर की ज़कात नीति, सार्वभौमिक सरकारी कल्याण के शुरुआती उदाहरणों के रूप में देखी जा सकती है। पहला कल्याणकारी राज्य इंपीरियल जर्मनी (1871-1918) था, जहाँ बिस्मार्क सरकार ने 1889 में सामाजिक सुरक्षा की शुरुआत की। 20वीं शताब्दी की शुरुआत में, यूनाइटेड किंगडम ने 1913 के आसपास सामाजिक सुरक्षा की शुरुआत की, और एटली सरकार (1945-51) के दौरान राष्ट्रीय बीमा अधिनियम 1946 के साथ कल्याणकारी राज्य को अपनाया।

पश्चिमी यूरोप, ऑस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड के देशों में, सामाजिक कल्याण मुख्य रूप से सरकार द्वारा राष्ट्रीय कर राजस्व से और कुछ हद तक गैर-सरकारी संगठनों (एनजीओ), और दान (सामाजिक और धार्मिक) द्वारा प्रदान किया जाता है। मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा के अनुच्छेद 22 और 25 में सामाजिक सुरक्षा और पर्याप्त जीवन स्तर का अधिकार दिया गया है

कल्याण के अधिकार व्यक्ति के बहुआयामी कल्याण से संबंधित अधिकार हैं। इस प्रकार, "कल्याण" का अर्थ है (i) किसी व्यक्ति की खुशी या भलाई, (ii) खुशी या व्यक्तिगत कल्याण का स्रोत (iii) जरूरतमंद सदस्यों की बुनियादी भलाई के लिए संगठित प्रावधान समुदाय का। अधिकांशतः कल्याण के अधिकार की नैतिक या कानूनी दावों के रूप में व्याख्या की जाती है हैं। कुछ मानव अधिकार हो सकते हैं, वे अधिकार जो एक मनुष्य के रूप में प्राप्त होते हैं; अन्य नागरिक अधिकार हो सकते हैं, कुछ कानूनी रूप से संगठित समाज के सदस्य के रूप में अधिकार। अधिकांश स्वतंत्रतावादी अधिकारों को नकारात्मक अधिकारों तक सीमित करते हैं, लेकिन कल्याणकारी अधिकार सकारात्मक अधिकार प्रतीत होते हैं प्राथमिक कल्याण अधिकार कल्याण लाभों के अधिकार हैं। द्वितीयक कल्याण अधिकार संबंधित अधिकार हैं, लेकिन कुछ कल्याणकारी लाभों से नहीं, उदाहरण के लिए, किसी के कल्याण लाभ को समाप्त करने से पहले निष्पक्ष सुनवाई का अधिकार।

---

## 1.7 सार संक्षेप

---

अंत में यह कहा जा सकता है कि मानवाधिकारों को बढ़ावा देने का मूल उद्देश्य एक बहुस्तरीय और लचीली सामाजिक कल्याण प्रणाली विकसित करना है जो लोगों को उनके जीवन में जोखिमों को रोकने, कम करने और उन पर काबू पाने में सहायता करने में सक्षम हो। संयुक्त राष्ट्र द्वारा बनाई गई प्रणाली में शामिल हैं सामाजिक बीमा प्रणाली (सेवानिवृत्ति पेंशन, स्वास्थ्य बीमा, बेरोजगारी भत्ता, अल्पकालिक सामाजिक बीमा), सामाजिक सहायता प्रणाली (भूख उन्मूलन और गरीबी उन्मूलन के लिए सब्सिडी, वंचित समूहों के लिए सामाजिक सहायता), सामान्य सामाजिक सहायता प्रणाली (पारिवारिक भत्ता, सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवा, वृद्धावस्था पेंशन), निजी सामाजिक सहायता प्रणाली आदि।

सामाजिक कल्याण नीति जीवन के न्यूनतम मानकों के आधार पर



स्थापित की जाती है, यह गारंटी देते हुए कि इस स्तर से नीचे रहने वाले सभी लोगों को सामाजिक कल्याण नीतियों और कार्यक्रमों से लाभ पाने का अधिकार है। मानव विकास में सामाजिक कल्याण की भूमिका को रेखांकित करने और आर्थिक विकास और सतत विकास को बढ़ावा देने के लिए सामाजिक कल्याण में निवेश एक सफल बाजार अर्थव्यवस्था के आवश्यक घटकों में से एक है। अंतः मानवाधिकारों का परम उद्देश्य मानव विकास, सतत विकास और समृद्धि साझा करने पर ध्यान केंद्रित करते हुए, राष्ट्रीय विकास रणनीतियों के अनुरूप दीर्घकालिक दृष्टि के साथ एक सामाजिक कल्याण प्रणाली का निर्माण करना है।

---

## 1.8 परिभाषिक शब्दावली

---

1. **समाज कल्याण:** समाज कल्याण वह प्रक्रिया है जिसके अंतरगत में जरूरतमंद व्यक्तियों को प्रदान की जाने वाली सहायता और सेवाएं संमिलित होती है
2. **सार्वभौमिक :** विश्व में या किसी समूह में प्रत्येक व्यक्ति से संबंधित, द्वारा किया गया या प्रभावित करने वाला

---

## 1.9 अभ्यास प्रश्न लघु एवम विस्तृत

---

**लघु प्रश्न:**

1. मानवाधिकार तथा समाज कल्याण में अंतरसंबंध स्थापित करिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2. मानवाधिकारों की विशेषताओं की संक्षेप में व्याख्या कीजिए।

.....

.....

.....

.....

## विस्तृत प्रश्न:

1. मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा के विभिन्न अनुच्छेदों का विस्तार से वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2. संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकारों को लागू करने के लिए संस्थागत ढांचे की संरचना और कार्य की व्याख्या करें।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

## 1.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. फ्रेंच, मर्लिन (2007)। फ्रॉम ईव टू डॉन, ए हिस्ट्री ऑफ वीमेन इन द वर्ल्ड, वॉल्यूम 1: ओरिजिन्स फ्रॉम प्रीहिस्ट्री टू द फर्स्ट मिलेनियम बी।
  1. फेमिनिस्ट प्रेस, सिटी यूनिवर्सिटी ऑफ न्यूयॉर्क। पी। 100. आईएसबीएन 978-1558615656।
2. "प्राचीन मिस्र | सभ्यता, भूगोल और इतिहास"। एनसाइक्लोपीडिया

ब्रिटानिका। 2019-07-09 को पुनःप्राप्त।

3. "मिस्र का कानून"। एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका। 2019-07-09 को पुनःप्राप्त। "अंतर्निहित गरिमा और समानता का पहला वैश्विक वक्तव्य"। संयुक्त राष्ट्र। 2010-09-13 को पुनःप्राप्त।
4. लॉरेन, पॉल गॉर्डन (2003)। "दार्शनिक दृष्टि: मानव प्रकृति, प्राकृतिक कानून और प्राकृतिक अधिकार"। अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकारों का विकास: दर्शन देखे गए। फिलाडेल्फिया: पेन्सिल्वेनिया विश्वविद्यालय प्रेस। आईएसबीएन 081221854X।
5. रॉबर्टसन, आर्थर हेनरी; मेरिल्स, जेजी (1996)। दुनिया में मानवाधिकार: मानव अधिकारों के अंतर्राष्ट्रीय संरक्षण के अध्ययन के लिए एक परिचय। मैनेचेस्टर: मैनेचेस्टर यूनिवर्सिटी प्रेस। आईएसबीएन 978-0719049231।
6. कुहर्ट, अमेली (फरवरी 1983)। "साइरस सिलेंडर और एकेमेनिड इंपीरियल पॉलिसी"। पुराने नियम के अध्ययन के लिए जर्नल। 8 (25): 83-97। डीओई:10.1177/030908928300802507. आईएसएसएन 0309-0892। एस2सीआईडी 170508879.
7. वैन डेर स्पेक, रॉबर्टस जे। (2014)। हेंकेलमैन, राउटर एफएम; जोन्स, चार्ल्स ई.; कोजुह, माइकल; वुड्स, सी. (संस्करण). "साइरस द ग्रेट, एक्साइल्स एंड फॉरेन गॉड्स। अ कंपेरिजन ऑफ असीरियन एंड फारसी पॉलिसीज ऑन सब्जेक्ट नेशंस"। निष्कर्षण और नियंत्रण: मैथ्यू डब्ल्यू. स्टॉपर के सम्मान में अध्ययन (68): 233-264। एचडीएल: 1871/50835। आईएसबीएन 978-1614910015। आईएसएसएन 0081-7554।
8. कुहर्ट (1983), पीपी. 83-97
9. विसेहोफर (1999), पीपी. 55-68
10. डेनियल, पी. 39



# इकाई-10 सामाजिक विधान- अर्थ, परिभाषा, उद्देश्य, क्षेत्र एवं सामाजिक परिवर्तन के साधन के रूप में सामाजिक परिवर्तन

---

## इकाई की रूपरेखा

- 1.0 इकाई का उद्देश्य
- 1.1 प्रस्तावना
- 1.2 सामाजिक विधान की परिभाषा
- 1.3 सामाजिक विधान के उद्देश्य
- 1.4 सामाजिक विधान की आवश्यकता
- 1.5 सामाजिक विधान का क्षेत्र
- 1.6 सामाजिक परिवर्तन का अर्थ एवं परिभाषा
- 1.7 प्राचीन समय में सामाजिक कानून
- 1.8 सामाजिक परिवर्तन के साधन के रूप में सामाजिक कानून
- 1.9 सारांश
- 1.10 शब्दावली
- 1.11 सन्दर्भ सूची
- 1.12 बोध प्रश्न

---

## 1.0 इकाई का उद्देश्य-

---

प्रस्तुत इकाई में सामाजिक विधान के अर्थ, परिभाषा, सामाजिक विधान की आवश्यकता महत्व को बताया गया है। जिससे विधार्थियों में सामाजिक विधान को समझने में सहायता मिलेगी की सामाजिक विधानों की सामाजिक विकास और समाज में समरूपता एवं समानता, एकता स्थापित करने में क्या भूमिका है

इस इकाई में सामाजिक विधानों में विभिन्न क्षेत्रों की भी चर्चा की

गई है।

सामाजिक विधान सामाजिक परिवर्तन में एहम भूमिका निभाते हैं। सामाजिक विधान के द्वारा ही सामाजिक कुरीतियों, एवं कुप्रथाओं का अंत किया गया। शोषण को समाप्त करके समाज में सभी को सामान अधिकार की श्रेणी में रखा गया। सामाजिक विधान ने सभी को सामान अधिकार प्रदान किये गए और सभी व्यक्तियों को सम्मान जनक जीवन जीने, कार्य करने एवं सामान कार्य के लिए सामान वेतन प्राप्त करने, लैंगिक असमानताओं को दूर किया है । सामाजिक विधान सामाजिक न्याय को स्थापित करने में सहायता करते हैं ।

---

## 1.1 प्रस्तावना-

---

सामाजिक विधान सरकार के द्वारा बनाये गए एवं लागू किये गए उन कानूनों और नीतियों को संदर्भित करता है जिसका उद्देश्य सामाजिक समस्याओं को दूर करने और समाज कल्याण एवं समाज सुधार करना है। शब्द "सामाजिक कानून" में शिक्षा, स्वास्थ्य देखभाल, सामाजिक सुरक्षा, श्रम अधिकार, आवास और पर्यावरण संरक्षण सहित कई तरह के मुद्दे शामिल हैं।

सामाजिक विधान का मुख्य उद्देश्य सामाजिक न्याय सुनिश्चित करना और समाज के सभी सदस्यों, विशेष रूप से कमजोर लोगों की भलाई को बढ़ावा देना है। सामाजिक विधान समान अवसर प्रदान करके और सभी व्यक्तियों के अधिकारों की रक्षा करके, उनकी सामाजिक आर्थिक स्थिति या पृष्ठभूमि की परवाह किए बिना एक निष्पक्ष और न्यायपूर्ण समाज बनाने का प्रयास करता है।

सामाजिक कानून इस सिद्धांत पर आधारित है कि सामान्य जन की भलाई को बढ़ावा देना एवं यह सुनिश्चित करना कि सभी नागरिकों को जीवन की बुनियादी ज़रूरतें जैसे भोजन, आवास और स्वास्थ्य सेवा उपलब्ध हो, यह सरकार की ज़िम्मेदारी है। सामाजिक विधान यह मानता है कि कई सामाजिक समस्याओं को केवल व्यक्तिगत या स्वैच्छिक प्रयासों से हल नहीं किया जा सकता है, और इन मुद्दों को प्रभावी ढंग से हल करने के लिए सरकार का हस्तक्षेप आवश्यक है।

कानून समाज में रहने वाले व्यक्तियों और समूहों के व्यवहार को नियंत्रित करने, मार्गदर्शन करने और नियंत्रित करने का एक साधन है। पूर्ण स्वतंत्रता में छोड़े गए व्यक्ति और समूह दूसरों की कीमत पर अपने स्वार्थ की खोज में एक-दूसरे से टकरा सकते हैं। वे अराजकता की ओर ले जाने वाले समाज को गंभीर नुकसान पहुंचाते हैं।

सामाजिक विधान का सम्बन्ध व्यक्ति एवं समूह के कल्याण की वृद्धि तथा सामाजिक क्रिया-कलापों के प्रभावपूर्ण एवं निर्बाध रूप से संचालन से है। इन विधानों का निर्माण इस प्रकार किया जाता है कि प्रत्येक व्यक्ति के जीवन के उद्देश्यों की पूर्ति हेतु अपेक्षित साधन एवं उपयुक्त अवसर प्राप्त हो सकें तथा सामाजिक व्यवस्था के सुचारु रूप से चलने के लिए अपेक्षित विभिन्न प्रकार्य उचित रूप से संपादित किये जा सकें।

सामाजिक कानून के उदाहरणों में सामाजिक सुरक्षा अधिनियम शामिल है, जो बुजुर्गों और विकलांग व्यक्तियों को सेवानिवृत्ति लाभ और अन्य प्रकार की सहायता प्रदान करता है, और नागरिक अधिकार अधिनियम, जो जाति, लिंग, धर्म या राष्ट्रीय मूल के आधार पर भेदभाव को प्रतिबंधित करता है। अन्य उदाहरणों में न्यूनतम मजदूरी कानून, पर्यावरणीय नियम और कानून शामिल हैं जो श्रमिकों को शोषण और दुर्व्यवहार से बचाते हैं। सामाजिक विधान की परिभाषा को समझने से पहले सामाजिक न्याय को भी समझ लेना आवश्यक है।

**सामाजिक न्याय** - एक ऐसे न्याय[उरना समाज की स्थापना जिसमें सामाजिक आर्थिक विषमतायें न के बराबर हों, एक समावेशी समाज हो और संसाधनों का वितरण इस प्रकार से हो की सभी की सर्वमान्य स्वीकृति हो और समाज के सभी नागरिकों में सामाजिक समानता स्थापित हो सके। सामाजिक न्याय व्यक्ति की गरिमा और सामाजिक प्रतिष्ठा को अधिक महत्व देता है।

---

## 1.2 सामाजिक विधान की परिभाषा

---

योजना आयोग के अनुसार “प्रचलित कानूनों तथा वर्तमान आवश्यकताओं के बीच दूरी को कम करने वाले विधान को सामाजिक विधान कहा जा सकता है।”

गंगाडे तथा बत्रा के मत में “सामाजिक विधान की परिभाषा उन कानूनों के रूप में की जा सकती है जिन्हें सकारात्मक मानव संसाधन को बनाये रखने तथा सुदृढ़ बनाने एवं समूहों अथवा व्यक्तियों के नकारात्मक एवं सामाजिक रूप से हानिकारक व्यवहार के घटित होने को कम करने हेतु बनाया जाता है।”

डॉ. सक्सेना ने साधारण शब्दों में सामाजिक विधान को परिभाषित करते हुए कहा है कि वह विधान जिसका उद्देश्य समाज को परिवर्तित एवं पुनर्गठित करना होता है, सामाजिक विधान कहलाता है।

अन्य परिभाषा - सामाजिक विधान सामाजिक एवं आर्थिक न्याय सम्बन्धी विचारों को लागू किये जाने योग्य कानूनों में रूपांतरित करने की लोगों की इच्छा की वैधानिक अभिव्यक्ति का प्रतिनिधित्व करता है।

---

### 1.3 सामाजिक विधान के उद्देश्य

---

सामाजिक विधान हमारे संविधान से प्रेरणा लेता है और इसके निम्नलिखित विशिष्ट उद्देश्य हैं:

- i. लिंग, धर्म, जाति, वर्ग आदि के आधार पर भेदभाव को हटाना और सभी के लिए समानता को बढ़ावा देना।
- ii. महिलाओं, बच्चों, बुजुर्गों, विधवाओं, निराश्रित और पिछड़े वर्गों जैसे कमजोर वर्गों के अधिकारों की रक्षा करना।
- iii. अस्पृश्यता, दहेज, बाल विवाह, कन्या भ्रूण हत्या आदि जैसी पारंपरिक कुरीतियों और सामाजिक बुराइयों का उन्मूलन।
- iv. सामाजिक सुरक्षा का प्रावधान।

---

### 1.4 सामाजिक विधान की आवश्यकता

---

सामाजिक कानून की आवश्यकता है क्योंकि कई सामाजिक समस्याओं को अकेले स्वैच्छिक कार्यों से पर्याप्त रूप से संबोधित नहीं किया जा सकता है। सरकारों को आम भलाई को बढ़ावा देने और सामाजिक न्याय सुनिश्चित करने वाले कानून और नियम बनाकर इन



समस्याओं को दूर करने में सक्रिय भूमिका निभानी चाहिए। सामाजिक कानून की आवश्यकता के कुछ मुख्य कारण यहां दिए गए हैं:

1. **सामाजिक न्याय को बढ़ावा देना:** सामाजिक कानून समान अवसर प्रदान करके और सभी व्यक्तियों, विशेष रूप से कमजोर या हाशिए पर रहने वाले लोगों के अधिकारों की रक्षा करके एक निष्पक्ष और न्यायपूर्ण समाज बनाने में मदद करता है।
2. **समाज के कल्याण की रक्षा के लिए:** सामाजिक कानून गरीबी, बेरोजगारी, बेघरता और अपराध जैसी सामाजिक समस्याओं को दूर करके समाज के कल्याण की रक्षा करने में मदद करता है।
3. **असमानता को कम करना:** सामाजिक कानून का उद्देश्य यह सुनिश्चित करके असमानता को कम करना है कि सभी नागरिकों को भोजन, आश्रय और स्वास्थ्य जैसी बुनियादी आवश्यकताओं तक पहुंच प्राप्त हो।
4. **आर्थिक विकास को बढ़ावा देना:** सामाजिक कानून एक स्थिर और स्वस्थ कार्यबल बनाकर, गरीबी और बेरोजगारी को कम करके, और नवाचार और उद्यमिता को बढ़ावा देकर आर्थिक विकास को बढ़ावा दे सकता है।
5. **पर्यावरण की रक्षा के लिए:** सामाजिक कानून प्रदूषण को नियंत्रित करने, संरक्षण को बढ़ावा देने और सतत विकास सुनिश्चित करके पर्यावरण की रक्षा करने में मदद करता है।
6. **सामाजिक सेवाएं प्रदान करने के लिए:** सामाजिक कानून उन नागरिकों को स्वास्थ्य सेवा, शिक्षा और सामाजिक सुरक्षा जैसी सामाजिक सेवाएं प्रदान करता है जो अन्यथा उन तक पहुंच बनाने में सक्षम नहीं हो सकते हैं।

संक्षेप में, सामाजिक कानून सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने, समाज के कल्याण की रक्षा करने, असमानता को कम करने, आर्थिक विकास को बढ़ावा देने, पर्यावरण की रक्षा करने और

जरूरतमंद लोगों को सामाजिक सेवाएं प्रदान करने के लिए आवश्यक है।

---

## बोध प्रश्न - 1

---

### टिप्पणी

- (i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का उपयोग कीजिये।
- (ii) इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

1. सामाजिक विधान का अर्थ एवं परिभाषा बताइए।

---

---

---

---

2. सामाजिक विधान की आवश्यकता को स्पष्ट कीजिये।

---

---

---

---

---

---

## 1.5 सामाजिक विधान का क्षेत्र

---

सामाजिक कानून का दायरा बहुत बड़ा है और इसमें कई तरह के मुद्दे शामिल हैं जो समाज के कल्याण को प्रभावित करते हैं। यहाँ कुछ मुख्य क्षेत्र हैं जहाँ सामाजिक कानून लागू होते हैं:

- 1. **शिक्षा:** सामाजिक कानून शिक्षा प्रणाली को नियंत्रित करता है और यह सुनिश्चित करता है कि सभी नागरिकों की सामाजिक आर्थिक स्थिति की परवाह किए बिना गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक पहुंच हो। यह यह भी सुनिश्चित करता है कि शिक्षा सभी के लिए सस्ती और सुलभ हो।

2. **स्वास्थ्य देखभाल:** सामाजिक कानून स्वास्थ्य देखभाल प्रणालियों को नियंत्रित करता है और यह सुनिश्चित करता है कि सभी नागरिकों की सस्ती स्वास्थ्य देखभाल तक पहुंच हो। यह कमजोर और सीमांत समूहों को स्वास्थ्य सेवाएं भी प्रदान करता है।
3. **सामाजिक सुरक्षा:** सामाजिक कानून नागरिकों को पेंशन, विकलांगता लाभ और बेरोजगारी लाभ सहित सामाजिक सुरक्षा सेवाएं प्रदान करता है। ये सेवाएं उन लोगों के लिए एक सुरक्षा जाल प्रदान करती हैं जो स्वयं का भरण-पोषण करने में असमर्थ हैं।
4. **श्रम अधिकार:** सामाजिक कानून कार्यस्थल को नियंत्रित करता है और यह सुनिश्चित करता है कि श्रमिकों को शोषण और दुरु्यवहार से बचाया जाए। यह कर्मचारियों को न्यूनतम वेतन, ओवरटाइम वेतन और अवकाश जैसे लाभ भी प्रदान करता है।
5. **आवास:** सामाजिक कानून आवास प्रणालियों को नियंत्रित करता है और यह सुनिश्चित करता है कि सभी नागरिकों की सुरक्षित, किफायती और पर्याप्त आवास तक पहुंच हो। यह कमजोर और सीमांत समूहों को आवास सेवाएं भी प्रदान करता है।
6. **पर्यावरण संरक्षण:** सामाजिक कानून प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग को नियंत्रित करता है और यह सुनिश्चित करता है कि पर्यावरण प्रदूषण और गिरावट से सुरक्षित है।
7. **नागरिक अधिकार:** सामाजिक कानून यह सुनिश्चित करता है कि सभी नागरिकों के साथ समान व्यवहार किया जाए और किया जाए।

---

## 1.6 सामाजिक परिवर्तन का अर्थ एवं परिभाषा

---

परिवर्तन प्रकृति का नियम है और मानव भी इसी प्रकृति का अंश है और परिवर्तनशील है। मानव का जीवन एवं उसकी परिस्थितियां कभी कभी एक जैसी नहीं हो सकती हैं। समाज की इस परिवर्तन प्रकृति को स्वीकार करते हुए मैकाइवर कहते हैं कि “समाज परिवर्तनशील एवं गत्यात्मक है” । एक ग्रीक विद्वान हेरेक्लिटस ने भी कहा था कि सभी

वस्तुए परिवर्तन के बहाव में है। जैसे स्थिर या ठहरे हुए पानी में कीड़े पड जाते है और वो खराब हो जाता है उसी तरह कोई भी समाज स्थिर नहीं रह सकता। समाज के मूल्यों, मानवीय विचारों, आदर्शों एवं भावनाओं में भी परिवर्तन आता रहता है। समाज में परिवर्तन तीव्रता से नहीं होता है अपितु धीरे - धीरे मंद गति से होता है।

**गिलिन और गिलिन के अनुसार-** “सामाजिक परिवर्तन को हम जीवन की स्वीकृत विधियों में होने वाले परिवर्तन के रूप में परिभाषित कर सकते हैं”

**मैकाइवर और पेज के शब्दों में-** समाजशास्त्र के रूप में हमारा प्रत्यक्ष सम्बन्ध केवल सामाजिक संबंधों से होता है। इस दृष्टि से केवल हम सामाजिक संबंधों में होने वाले परिवर्तन को ही सामाजिक परिवर्तन कहेंगे।“

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर यह कहा जा सकता है की जब सामाजिक ढांचे अथवा समाज में स्थापित संस्थाओं के बीच कार्य करने वाले तरीकों में किसी भी प्रकार का परिवर्तन होता है तो उसे सामाजिक परिवर्तन करते हैं

---

## 1.7 प्राचीन समय में सामाजिक कानून

---

कानून को ऐसे मानकों और नियमों के रूप में तैयार किया जाता है जो समाज में लोगों के शांतिपूर्ण जीवन में सहायक हो, जबकि सामाजिक परिवर्तन को समाज में होने वाले एक ऐसे परिवर्तन के रूप में व्यक्त कर सकते हैं जिसका प्रभाव समाज में अच्छा या बुरा हो सकता है। दशकों से कानून और सामाजिक सिद्धांतकारों ने कानूनी संस्थाओं के विकास के संदर्भ में सामाजिक विधान और सामाजिक परिवर्तन के बीच संबंधों को समझाने के प्रयास किया है। उन्होंने सामाजिक विधानों को समाज में एक स्वतंत्र और निर्भर और परिवर्तनशील (कारण और प्रभाव) दोनों के रूप में देखा और कानून की अन्योन्याश्रितता पर बल दिया अन्य सामाजिक प्रणालियाँ। आम तौर पर वे यह सवाल उठाते हैं कि क्या हर कानून जो बनाया गया है उसका केवल अच्छा प्रभाव ही आया है और क्या कानून के लिए देश की सुरक्षा एक बड़ी चिंता रही है। दूसरे शब्दों में जिस कानून को सामाजिक परिवर्तन का साधन माना जाता है, उसने समाज का विकास किया है या नहीं?

प्राचीन समय में सामाजिक अनुरूपता को प्राप्त करने के दो सामाजिक तंत्र थे - धर्म और चक्र अथवा रीति रिवाज । मनुस्मृति के अनुसार धर्म वह है जिसका विद्वानों द्वारा पालन किया जाता है जो सदाचारी होते हैं और जो हमेशा घृणा या जुनून से रहित होते हैं और जो अपने दिल से स्वीकृत होते हैं । प्राचीन भारतीय यह मानते हैं कि धर्म के चार स्रोत हैं वेद स्मृति सदाचार और स्वयं को संतुष्ट करने वाला क्या है- स्वस्य च प्रियम आत्मनः

मनु ने यह भी कहा है की “अनंत रीत रिवाज पारलौकिक कानून है” । भारत में रीत रिवाज या समूह की जीवन शैली एक बहुत ही महत्वपूर्ण बाध्यकारी शक्ति है। रिवाज से कोई भी विचलन समूह के क्रोध को भड़काता है । जज भी अपना निर्णय सुनाते समय समाज के रीति रिवाज का ध्यान रखते हैं। भारत में विभिन्न न्यायालय द्वारा वैध रीति रिवाज को निर्धारित किया गया है और हिंदू विवाह अधिनियम 1955 में शामिल किया गया है ।

अतः यह कहा जा सकता है कि कानून या धर्म में विभिन्न तत्त्व शामिल होते हैं जो सामाजिक व्यवहार को निरंतरता प्रदान करते हैं,, व्यवहार जो किसी को अंतरात्मा को संतुष्ट करता है, वह एक अन्य तत्त्व है जो सामाजिक रीति रिवाजों में परिवर्तन ला सकता है ।

प्राचीन भारत में रीति रिवाजों को दिया जाने वाला महत्व इस बात का स्पष्ट संकेत है कि प्रत्येक समूह अपने तरीकों को स्वयं विकसित कर सकता है या वह पुराने तरीकों को बनाये रख सकता है । यह भारतीय समाज में सहिष्णुता के मूल्य की अभिव्यक्ति है । ये वे तत्त्व हैं जिन्होंने भारत में बहुलतावादी समाज को बढ़ावा दिया है । सहिष्णुता के दृष्टिकोण के कारण अलग अलग समूह अपने अपने जीवन जीने के तरीकों के साथ अन्य समूहों के जीवन जीने के अन्य तरीकों के साथ सद्भाव से रहते आये हैं ।

---

## 1.8 सामाजिक परिवर्तन के साधन के रूप में सामाजिक कानून

---

सामाजिक कानून सामाजिक परिवर्तन का साधन है । सामाजिक परिवर्तन के रूप में यदि हम कानून की कार्यात्मकता के बारे में बात करें तो इसके दो विचार हैं - सबसे पहला कानून का अनिवार्य कार्य

मौजूदा नियमों को और मजबूत बनाना और मौजूदा नियमों से विचलन का मूल्यांकन और सजा के लिए एक संलग्न प्रक्रिया संहिता प्रदान करना ।

दूसरा - कानून अधिक गत्यात्मक हो सकता है । इसका न केवल सामाजिक नियंत्रण का कार्य है बल्कि इसे व्यवहार मान्यताओं एवं सामाजिक मूल्यों को प्रभावित करके सामाजिक परिवर्तन लाना है । अक्सर गत्यात्मक समाजों में सामाजिक मानदंड कानूनी संहिताओं से आगे होते हैं । ऐसे समाजों में कानूनी संहिता को प्रचलित सामान्य मूल्यों के अनुरूप लाना आवश्यक है ।

कानून के सामान्य कार्य समूह की अपेक्षाओं की पूर्ति करने के लिए उपसमूहों और समाज से सम्बंधित व्यक्ति को प्रभावित करता है, यद्यपि कानून का सीधा सा अर्थ सामाजिक नियंत्रण होता है यदि सभी व्यक्ति समाज के कानून का पालन करें तो यह माना जा सकता है कि एकजुट एवं एकता बढ़ेगी ।

सामाजिक परिवर्तन के एक साधन के रूप में कानून में दो परस्पर संबंधित क्रियाएं शामिल हैं । नए अधिनियमों के माध्यम से नए सामाजिक मूल्यों को प्रकट करने वाले व्यवहार के नए प्रतिमान का संस्थानीयकरण होगा । जब इस नए प्रतिमान को इस कानूनी कोड में शामिल किया जाता है तब इस नए प्रतिमान से उत्पन्न किसी भी विचलन के लिए कानून के अनुरूप दंडित किया जा सकता है । कानून एक सक्रिय सामाजिक शक्ति है जिसमें सहसंबद्ध सांस्कृतिक प्रक्रिया शामिल है ।

समाजशास्त्रियों की विचारधारा के अनुसार कानून मात्र परिवर्तनों का अनुसरण करता है वह परिवर्तन का मुख्य कारण नहीं है न ही वह स्वयं परिवर्तन कर सकता है, इसलिए यह इसके मूल्यों और बुनियादी परिवर्तनों का साधन नहीं हो सकता ।

वहीं दूसरी ओर अन्य विद्वानों का मत है कि सामाजिक कानून सामाजिक परिवर्तनों में एक अहम भूमिका निभाता है अर्थात् जब तक समाज में कानून पूर्ण रूप से लागू न हो जाए और लोगों के द्वारा इनका पालन न होने लगे तबतक सामाजिक परिवर्तन संभव नहीं है । यहां तक

की समाज के कमजोर व उपेक्षित वर्ग की सहायता हेतु समाज कार्यकर्ता, सामाजिक कानून के समर्थन से ही कार्य पूर्ण करता है यहाँ कानून एक सशक्त साधन के रूप में कार्य करता है अपितु परिवर्तन के साधन में कानून की सीमाएं होती हैं।

यहाँ पर ये भी देखना आवश्यक होगा कि आखिर क्या वजह थी की हमने अपने सामाजिक मूल्यों एवं कुछ परम्पराओं में परिवर्तन किया गया । प्राचीन समय में राज्य द्वारा कभी भी कोई फरमान या कानून जारी नहीं किया जाता था । राजा को कानून की घोषणा करने की शक्ति नहीं थी राजा का कर्तव्य धर्मशास्त्र के अनुसार न्याय का प्रशासन करना था । धर्म को राजा के ऊपर और राजाओं के राजा के रूप में देखा गया । समस्या उस अभिकरण के रूप में उत्पन्न होती है जो सामाजिक मानदंडों में बदलाव के अनुसार कानून में बदलाव लाती है । कानून पर सामाजिक और सांस्कृतिक मूल्यों का शक्तिशाली प्रभाव, इसे स्मृतिकारों द्वारा स्वीकार किया गया जो जो कानून बनाने वाले होने का दवा नहीं करते थे लेकिन दैवीय प्राधिकरण द्वारा निर्धारित धारणाओं के प्रतिपादक और परम्परा के संकलनकर्ता थे और वे उन्हें पीढ़ी-दर - पीढ़ी सौंपे जाते थे ।

इस प्रकार स्मृतिकारों एवं टिप्पणीकारों ने कानून में संशोधन किया ताकि इस समाज की बदलती परिस्थितियों और परिवर्तित सामाजिक मूल्यों के अनुरूप बनाया जा सके । हालांकि अंग्रेजों के आगमन से हिंदू कानून स्थिर हो गया क्योंकि ब्रिटिश अदालतें “धर्मशास्त्र” को ही अंतिम प्राधिकरण के रूप में देखती थी । बावजूद इसके राजा राममोहन राय एवं ईश्वरचंद्र विद्यासागर जैसे प्रबुद्ध लोग चाहते थे कि ब्रिटिश सरकार इसमें हस्तक्षेप करे और नए सामाजिक मूल्यों और सामाजिक दृष्टिकोण के अनुरूप कानून में बदलाव लाए ।

उसके बाद भारत में सामाजिक व्यवस्था और कानून की समानता को पहली बार अंग्रेजों ने सुनिश्चित की थी और सामाजिक मामलों में कानून को सर्वोच्च शक्ति प्रदान की । भारत में ऐसा पहले कभी नहीं हुआ था । उस समय में जहां एक तरफ महिलाओं, बच्चों और अनुसूचित जाति और अन्य वर्गों के जीवन में परिवर्तन एवं जीवन स्थिति में सुधार लाने के लिए कुछ मुख्य कानून बनाए थे तो वहीं दूसरी तरफ सामाजिक संस्थाओं में कुछ सुधार किए गए और उनके लिए कानून बनाये गए ।

इन कानूनों ने बहुत सी प्राचीन परंपराओं व प्रथाओं को बदलने में सहायता की परन्तु कई जगहों पर सामाजिक कानून पिछड़ा सा महसूस हुआ। अनेक कुप्रथाएं समाज में प्रचलित थीं, जैसे सती प्रथा और बाल विवाह आदि जिन्हें कानून की सहायता से समाप्त करना आवश्यक था। कानून ने महिलाओं के जीवन में परिवर्तन लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। हमारे संविधान में मौलिक अधिकारों के अनुच्छेद 14 में लैंगिक समानता सुनिश्चित की गई है जिसमें कानून ने पुरुष और महिलाओं को समान अधिकार प्रदान किए हैं। अनुच्छेद 15 में लिंग के आधार पर किसी भी तरह के भेदभाव को पूर्ण रूप से रोका गया। हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 के अंतर्गत आज एक स्त्री को भी पूर्ण संपत्ति प्राप्त करके अपने पास रखने व स्थानांतरित करने का पूरा अधिकार है। हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 में यह भी कहा गया यदि कोई हिंदू पुरुष की अपनी संपत्ति का बंटवारा करने से पहले मृत्यु हो जाती है तो उसकी पत्नी, उसके पुत्र और उसकी पुत्री आदि को उसकी संपत्ति पर समान अधिकार होगा।

यदि हम बात करें दहेज निषेध अधिनियम, 1961 की, तो इस अधिनियम के अनुसार विवाह के बाद तीन माह के अंदर दहेज में मिली सारी संपत्ति को महिला को सौंप दिया जाता है। दहेज में मिली संपत्ति पर पहला अधिकार उस विवाहित महिला का होता है। अगर किसी कारणवश उसकी मृत्यु हो जाती है तभी वह किसी और को मिलता है। इसी प्रकार हिंदू विवाह अधिनियम में भी कई सुधार किए गए हैं जिससे महिलाओं पर थोपी जाने वाली परंपराओं की समाप्ति की जाए। हिंदू विवाह अधिनियम में यह प्रावधान है की एक पति या एक पत्नी के जीवित रहते या उससे तलाक लिए बिना हिन्दू महिला या पुरुष दूसरा विवाह नहीं कर सकते और अब एक महिला भी अपने पति को कानूनी रूप से तलाक दे सकने का पूरा अधिकार रखती है हिंदू विवाह अधिनियम के अनुसार गुजारा भत्ता का अधिकार जहां केवल महिलाओं को दिया गया है वही आपराधिक दंड संहिता (खंड 125) दोनों पर लागू की गई है। वहीं रोजगार के मामले में भी महिला व पुरुष दोनों को समान कार्य हेतु समान वेतन पाने का अधिकार प्राप्त है। बाल विवाह निरोध अधिनियम, 1929 के अनुसार बाल विवाह पर भी प्रतिबंध लगा दिया गया है हिन्दू दत्तक और देखभाल अधिनियम, 1956 के अनुसार



पुत्री को भी गोद लिया व दिया जा सकता है। जातिप्रथा जैसी कुरीतियों को समाप्त करने में कानून ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। संविधान और संवैधानिक कानून के अंतर्गत किसी भी जाति में पैदा होना किसी को उसके पसंदीदा व्यवसाय से रोक नहीं सकता है। संविधान में अस्पृश्यता निषेध अधिकारों की सुरक्षा करके समाज को गतिशील मार्ग प्रदान किया है। इसी प्रकार सामाजिक विधानों ने स्वतंत्रता, समानता एवं सम्मान और पीड़ितों की सहायता हेतु कई सारे परिवर्तन और सुधार किए हैं जिससे उन्हें जीवन को गरिमापूर्ण जीवन जीना का अवसर प्राप्त हो सका। जहाँ एक तरफ हमारी पुरानी परंपराएं व प्रथाएं परिवर्तनों को बाधित करने का कार्य करती रहीं वहीं दूसरी तरफ कानून परंपराओं और कुप्रथाओं को परिवर्तित करने हेतु एक उत्तम साधन है।

---

## 1.9 सारांश

---

सामाजिक विधानों को बनाने का उद्देश्य समाज में एकरूपता स्थापित करना। समाज के सभी व्यक्तियों को गरिमापूर्ण जीवन जीने के अवसर प्रदान करना एवं सामाजिक न्याय सुनिश्चित करना और समाज के सभी सदस्यों, विशेष रूप से कमजोर लोगों की भलाई को बढ़ावा देना है। सामाजिक विधान यह मानता है कि कई सामाजिक समस्याओं को केवल व्यक्तिगत या स्वैच्छिक प्रयासों से हल नहीं किया जा सकता है, और इन मुद्दों को प्रभावी ढंग से हल करने के लिए सरकार का हस्तक्षेप आवश्यक है।

---

## 1.10 शब्दावली

---

**सामाजिक विधान** - सामाजिक विधान सरकार के द्वारा बनाये गए एवं लागू किये गए उन कानूनों और नीतियों को संदर्भित करता है जिसका उद्देश्य सामाजिक समस्याओं को दूर करने और समाज कल्याण एवं समाज सुधार करना है। शब्द "सामाजिक कानून" में शिक्षा, स्वास्थ्य देखभाल, सामाजिक सुरक्षा, श्रम अधिकार, आवास और पर्यावरण संरक्षण सहित कई तरह के मुद्दे शामिल हैं।

**समाज न्याय** - एक ऐसे न्याय[उरना समाज की स्थापना जिसमें सामाजिक आर्थिक विषमतायें न के बराबर हों, एक समावेशी समाज हो और संसाधनों का वितरण इस प्रकार से हो की सभी की सर्वमान्य

स्वीकृति हो और समाज के सभी नागरिकों में सामाजिक समानता स्थापित हो सके।

**सामाजिक परिवर्तन** - जब सामाजिक ढांचे अथवा समाज में स्थापित संस्थाओं के बीच कार्य करने वाले तरीकों में किसी भी प्रकार का परिवर्तन होता है तो उसे सामाजिक परिवर्तन करते हैं।

---

## 1.11 सन्दर्भ सूची

---

1. Gangrade, K.D. ( 1978), Social Legislation in India, Concept Publishing Company, New Delhi.
2. The Planning Social Legislation : It's Role in Social Commission Welfare, (1956) Government of India, Delhi.
3. <https://www.encyclopedia.com/history/dictionaries-thesauruses-pictures-and-press-releases/social-legislation#:~:text=Laws%20that%20seek%20to%20promote,the%20disabled%2C%20and%20the%20elderly.>
4. <https://www.socialworkin.com/2020/08/social-legislation.html>

**बोध प्रश्न - 2**

**टिप्पणी**

- (i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का उपयोग कीजिये।
- (ii) इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

1. सामाजिक परिवर्तन का अर्थ एवं परिभाषा का उल्लेख कीजिये।

---

---

---

---

---

## 2. सामाजिक विधान के क्षेत्रों को स्पष्ट कीजिये।

---

---

---

---

---

---

### 1.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

---

#### बोध प्रश्न - 1

1. सामाजिक विधान सरकार के द्वारा बनाये गए एवं लागू किये गए उन कानूनों और नीतियों को संदर्भित करता है जिसका उद्देश्य सामाजिक समस्याओं को दूर करने और समाज कल्याण एवं समाज सुधार करना है। शब्द "सामाजिक कानून" में शिक्षा, स्वास्थ्य देखभाल, सामाजिक सुरक्षा, श्रम अधिकार, आवास और पर्यावरण संरक्षण सहित कई तरह के मुद्दे शामिल हैं। सामाजिक विधान का मुख्य उद्देश्य सामाजिक न्याय सुनिश्चित करना और समाज के सभी सदस्यों, विशेष रूप से कमजोर लोगों की भलाई को बढ़ावा देना है। गंग्राडे तथा बत्रा के मत में "सामाजिक विधान की परिभाषा उन कानूनों के रूप में की जा सकती है जिन्हें सकारात्मक मानव संसाधन को बनाये रखने तथा सुदृढ़ बनाने एवं समूहों अथवा व्यक्तियों के नकारात्मक एवं सामाजिक रूप से हानिकारक व्यवहार के घटित होने को कम करने हेतु बनाया जाता है।"
2. सामाजिक कानून की आवश्यकता है क्योंकि कई सामाजिक समस्याओं को अकेले स्वैच्छिक कार्यों से पर्याप्त रूप से संबोधित नहीं किया जा सकता है। सरकारों को आम भलाई को बढ़ावा देने और सामाजिक न्याय सुनिश्चित करने वाले कानून और नियम बनाकर इन समस्याओं को दूर करने में सक्रिय भूमिका निभानी

चाहिए। सामाजिक कानून की आवश्यकता के कुछ मुख्य कारण यहां दिए गए हैं:

1. सामाजिक न्याय को बढ़ावा देना
2. समाज के कल्याण की रक्षा के लिए
3. असमानता को कम करना
4. आर्थिक विकास को बढ़ावा देना
5. पर्यावरण की रक्षा के लिए
6. सामाजिक सेवाएं प्रदान करने के लिए

## **बोध प्रश्न - 2**

1. परिवर्तन प्रकृति का नियम है और मानव भी इसी प्रकृति का अंश है और परिवर्तनशील है। मानव का जीवन एवं उसकी परिस्थितियां कभी कभी एक जैसी नहीं हो सकती हैं। समाज की इस परिवर्तन प्रकृति को स्वीकार करते हुए मैकाइवर कहते हैं कि “समाज परिवर्तनशील एवं गत्यात्मक है” । एक ग्रीक विद्वान हेरेक्लिटस ने भी कहा था कि सभी वस्तुएं परिवर्तन के बहाव में हैं। जैसे स्थिर या ठहरे हुए पानी में कीड़े पड़ जाते हैं और वो खराब हो जाता है उसी तरह कोई भी समाज स्थिर नहीं रह सकता। समाज के मूल्यों, मानवीय विचारों, आदर्शों एवं भावनाओं में भी परिवर्तन आता रहता है। समाज में परिवर्तन तीव्रता से नहीं होता है अपितु धीरे - धीरे मंद गति से होता है।

गिलिन और गिलिन के अनुसार- “सामाजिक परिवर्तन को हम जीवन की स्वीकृत विधियों में होने वाले परिवर्तन के रूप में परिभाषित कर सकते हैं”

## **2. सामाजिक विधान का क्षेत्र-**

सामाजिक विधान कई क्षेत्रों में सभी को सामानता का अधिकार देने के उद्देश्य से एवं सामाजिक न्याय को स्थापित करने के उद्देश्य से लागू किये गए हैं जिनमें- सभी के लिए स्वास्थ्य, सभी के लिए शिक्षा, समानता, सभी के आवास आवास, पर्यावरण संरक्षण,

रोजगार, गरीबी, लैंगिक हिंसा, सामाजिक सुरक्षा श्रमिकों के कल्याण, बाल कल्याण, महिला कल्याण, युवा कल्याण, वृद्ध कल्याण एवं मान की अन्य मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए सामाजिक विधान प्रभावी रूप से कार्य कर रहे हैं।



## इकाई की रूपरेखा

- 1.0 इकाई का उद्देश्य
- 1.1 मलिन बस्तियों की उत्पत्ति
- 1.2 मलिन बस्ती का अर्थ एवं परिभाषा
- 1.3 मलिन बस्ती के कारण
- 1.4 झुग्गीवासियों की समस्याएं
- 1.5 भारत में मलिन बस्तियों के प्रकार
- 1.6 भारत में मलिन बस्तियों की वर्तमान स्थिति
- 1.7 मलिन बस्तियों के विकास के लिए सरकार द्वारा उठाये गए कदम
- 1.8 मलिन बस्तियों के विकास के लिए कानूनी ढांचा
- 1.9 सारांश
- 1.10 शब्दावली
- 1.11 सन्दर्भ सूची
- 1.12 बोध प्रश्न

---

## 1.0 इकाई का उद्देश्य

---

वर्तमान युग औद्योगीकरण एवं तकनीकी का युग है। औद्योगीकरण का प्रभाव सबसे अधिक नगरों पर पड़ता है। नगरों की जनसंख्या में वृद्धि होती है। औद्योगीकरण एवं नगरीकरण के कारण जनसंख्या का एकीकरण एक विशेष क्षेत्र में बढ़ने लगता है। पिछले दो दशकों ने गांवों से शहरों की ओर पलायन बढ़ा है। जैसे-जैसे नगरीकरण और औद्योगीकरण की प्रक्रिया तीव्र गति से हुआ, वैसे-वैसे मलिन बस्तियों का विकास भी तीव्र गति से हुआ। वर्तमान भारतीय समय में मलिन बस्तियों की समस्याएं ज्वलंत मुद्दा हैं। प्रस्तुत इकाई में विद्यार्थी मलिन बस्तियों की उत्पत्ति, अर्थ, परिभाषा एवं कारणों को जानेंगे। इस अध्याय में मलिन बस्तियों की समस्याओं के साथ-साथ उनके विकास के

लिए साकार द्वारा बनाये गए अधिनियमि एवं योजनाओ के बारे में भी जानकारी दी गई है।

---

## 1.1 मलिन बस्तियों की उत्पत्ति-

---

औद्योगिक क्रांति के कारण तीव्र गति से हुए शहरीकरण के परिणामस्वरूप मलिन बस्तियों का जन्म माना जा सकता है। “स्लम” शब्द की उत्पत्ति 19वीं शताब्दी के मध्य हुई। जब इसका उपयोग यूरोप और उत्तरी अमेरिका में तेजी से हो रहे विस्तार वाले शहरो में भीड़-भाड़ और खराब स्वास्थ्य स्थितियों का वर्णन करने के लिए किया गया। विकासशील देशों में इन्हें अनौपचारिक बस्तियों के रूप में परिभाषित किया गया।

रोजगार की तलाश में ग्रामीण क्षेत्रों से शहरों की ओर पलायन बढ़ जाने के कारण शहरों में आवास की मांग में वृद्धि होने लगी। जनसँख्या का दबाव अधिक होने की वजह से आवास की पूर्ति संभव नहीं हो सकी। जिसके फलस्वरूप मलिन बस्तियों का उदय हुआ। अपर्याप्त शहरी नियोजन एवं शासन, प्रशासन के द्वारा पर्याप्त नीतियों का निर्माण इस दिशा में न किया जाना भी मलिन बस्तियों के उदय का कारण है।

---

## 1.2 मलिन बस्ती का अर्थ एवं परिभाषा

---

मलिन बस्तियों को वह शहरी क्षेत्र कहा जा सकता है जिसमें घर ही छोटे या घर के नाम पर एक छोटा का कमरा होता है, निवास की दृष्टि से ज्यादा जनसंख्या और भीड़भाड़ होती है, स्वस्थ वातावरण का आभाव, गरीब या निम्न आय वाले लोग, रोजगार की कमी, बिजली, पानी, पेशाबघर या शौचालय न होना, इस तरह की अनेक समस्याएं होती हैं।

शहरों में मलिन बस्तियां का अस्तित्व लम्बे समय से हैं। शहरीकरण से अनेक प्रकार की सामाजिक-आर्थिक व पर्यावरणीय समस्याएं जुड़ी हैं, परन्तु साथ ही शहरीकरण के साथ मलिन बस्तियों का बढ़ना भी एक बड़ी समस्या है। (एस गोस्वामी व मन्ना, 2010)। एस गोस्वामी तथा मन्ना का यह विचार है कि मलिन बस्ती में घनी आबादी निवास करती हैं, आवास-स्थल बेतरतीव और खस्ताहाल होते हैं, स्वास्थ्य



विरोधी वातावरण होता, मूलभूत सुविधाओं का अभाव होता है। स्वच्छता व पीने के पानी का अभाव रहता है। इसलिए यही रहने वाले लोगों का स्वास्थ्य अच्छा नहीं होता। नगर नियोजकों के सामने मलिन बस्तियों की तादाद में बढ़ोतरी एक बड़ी चुनौती है, जिसका नगर में रहने वालों के लिए स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है। फिर भी दुनिया भर में कहीं भी यह सम्भव नहीं हो सकता है कि नगरों के विकास के साथ-साथ उनके निकटवर्ती क्षेत्रों में बढ़ने वाली मलिन बस्तियों को रोका जा सके। नगरों के बसाये जाने का उद्देश्य ये होता है की वहाँ पर स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं उत्पन्न न हों। मलिन बस्ती के उदाहरण के तौर पर मुंबई की चाल एवं मुंबई की सबसे बड़ी मलिन बस्ती धारावी, कलकत्ता को बस्तिया, चेन्नई की पेरी , कानपुर की अहाते और दिल्ली के बस्ती आदि। कानपुर की मलिन बस्ती को देखकर एक बार नेहरु जी ने कहा था “ ये मलिन बस्तियां मानव के पतन की पराकाष्ठ की प्रतीक है। जो व्यक्ति इन मेल बस्तियों के लिए उत्तरदायी है, उन्हें फांसी दे देनी चाहिए”

### 1.2.1 मलिन बस्ती की परिभाषा

मलिन बस्ती को और भी स्पष्ट करने के लिए कुछ प्रमुख विद्वानों की परिभाषाओं का उल्लेख कर सकते हैं -

कीन एवं थॉमस ने मलिन बस्तियों को रोगग्रस्त क्षेत्र कहा है

बर्गल के अनुसार “मलिन बस्तियों का स्वरूप प्रारंभ से ही विकृत हो जाता है। अतः यह स्पष्ट है कि इनकी कोई सार्वभौमिक परिभाषा नहीं दी जा सकती।”

जिस्टस और हालबर्ट ने मलिन बस्ती की परिभाषा इस प्रकार दी- “एक मलिन बस्ती निर्धन लोगों तथा मकानों का क्षेत्र है। यह संक्रमण का एवं गिरावट का क्षेत्र है। यह असंगठित क्षेत्र होता है, जो मानव अपशिष्ट से परिपूर्ण होता है। यह अपराधियों, दोषयुक्त, निम्न एवं त्यक्त लोगों के लिए सुविधाजनक क्षेत्र होता है।”

संयुक्त राष्ट्र संघ ने मलिन बस्तियों की परिभाषा देते हुए कहा है - “एक छोटे से घर में एक या अनेक लोगों का निवास करना, नगर के

ऐसे हिस्से में रहना जहाँ कोई सुविधा उपलब्ध नहीं होती, न सुरक्षा मिलती है, न रहने को पर्याप्त जगह, पीने का पानी, सफाई आदि। (एम. नितिन, एस. किसन एवं अन्य, 2021)।

सी चंद्रमौली द्वारा 2011 में दी गई परिभाषा के अनुसार “जनगणना में मलिन बस्ती को एक ऐसा निवास स्थल बताया गया है जहाँ जो मनुष्यों के रहने के लिए तनिक भी उपयुक्त नहीं है, क्योंकि यहाँ आवास जीर्णावस्था में होते हैं, भीड़ से भरे होते हैं, अव्यवस्थित, संकीर्ण होते हैं। न हवा ठीक से जा पाती है न बिजली आती है, गंदगी पसरी रहती है, कुल मिलाकर मलिन बस्तियाँ ऐसी जगहें हैं जो स्वास्थ्य व सुरक्षा के लिए तनिक भी अनुकूल नहीं हैं।”

मलिन बस्तियाँ नगर का अभिन्न अंग नहीं मानी जाती, न ही उन्हें नगर की तरह प्रतिष्ठा दी जाती है। यही कारण है कि मलिन बस्तियों के बारे में जानकारीयाँ एकत्रित नहीं की जाते, उपेक्षित बस्तियाँ मानकर इनकी अनदेखी कर दी जाती है। अतः आप मलिन बस्तियों को नगर के बाहर स्थिति ऐसे आवास-स्थल कह सकते हैं जो पूरी तरह उपेक्षित होते हैं। यहाँ के हालात बहुत ही खराब और अलग तरह के होते हैं। मलिन बस्तियों में बहुत घनी आबादी होती है। वे नगर के बाह्य व अविकसित आवास-स्थल होते हैं या बिना किसी कानूनी मान्यता के अपनी मर्जी से बसाए गये आवास स्थल होते हैं जो नगरों की बाहरी सीमाओं के साथ फैले होते हैं। (आर. ई. ए. खान, 2010: 35)।

---

### 1.3 मलिन बस्तियों के कारण

---

गन्दी बस्तियों के विकास के निम्न कारण हैं-

- (i) नगरीकरण और औद्योगीकरण,
- (ii) नगरीय आकर्षण
- (iii) नगरों में आवास का अभाव,
- (iv) नगर नियोजन में कमी,
- (v) पर्याप्त संसाधनों का अभाव,
- (vi) तीन औद्योगीकरण के कारण अधिक संख्या में श्रमिकों की

आवश्यकता,

(vii) गाँवों से भारी संख्या में लोगों का नगरों की तरफ पलायन।

(viii) निर्धनता

### बोध प्रश्न - 1

#### टिप्पणी

(i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का उपयोग कीजिये।

(ii) इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

1. मलिन बस्ती का अर्थ एवं परिभाषा बताइए।

---

---

---

---

---

2. मलिन बस्ती के कारणों को स्पष्ट कीजिये।

---

---

---

---

---

---

---

## 1.4 झुग्गी वासियों की समस्याएँ

---

मलिन बस्तियों में स्वच्छता साफ-सफाई न होना और सुरक्षित जल स्रोतों तक पहुँच की कमी, अपशिष्ट प्रबंधन की कमी, बिजली आपूर्ति और जल निकासी प्रणालियों की कमी जैसी मूलभूत समस्याओं का सामना करना पड़ता है। 2011 की जनगणना के अनुसार भारत में मलिन बस्तियों के बीच में रहने वाले लोगों को निम्नलिखित समस्याओं

से जूझना पड़ता है-

58% लोगों के लिए जल निकासी की कोई व्यवस्था नहीं है।

43% लोगों को मलिन बस्तियों के बाहर से पीने का पानी लाना पड़ता है।

34% लोगों के पास शौचालय की व्यवस्था नहीं है।

30% लोगों के पास करने को कोई काम नहीं है जिससे वे अपनी आजीविका चला सकें।

मलिन बस्तियों में रहने वाले लोगों के घरों की स्थिति काफी ज्यादा खराब होती है, उनके घर आम तौर पर मिट्टी या ईंटों के बने होते हैं उनकी गुणवत्ता काफी निम्न प्रकार की होती है। प्रति व्यक्ति रहने के लिए स्थान बहुत कम होता है। ज्यादातर मलिन बस्तियाँ औद्योगिक क्षेत्र के आस पास स्थित होती हैं। जहाँ औद्योगिक कचरों का निष्कासन होता है। इसके साथ ही मलिन बस्तियों की स्थिति खराब होने की वजह खुले सीवर, रास्तों की कमी, कचरे का अनियंत्रित डंपिंग तथा प्रदूषित वातावरण आदि हैं। जिस कारण से वह रहने वाले लोगों के शरीर के अंदर खतरनाक छोटे-छोटे कण प्रवेश कर जाते हैं (जैसे-PM2.5, PM10 आदि) । जो उनके स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होता है। कभी कभी उन्हें गंभीर बीमारियों का सामना करना पड़ता है जैसे कैंसर, टी.बी. आदि।

झुग्गी-झोपड़ियों में जो लोग काम करते भी हैं उन्हें बहुत कम वेतन प्राप्त होता है इससे उन्हें उच्च गुणवत्ता का खाना प्राप्त नहीं होता, जिससे उनमें पोषण की भारी कमी हो जाती है, उनके बच्चों को अच्छी शिक्षा प्राप्त नहीं होती है। भारत में अधिकतर लोगों द्वारा मलिन बस्तियों और झुग्गी झोपड़ियों वाला क्षेत्र सामाजिक बहिष्कार का क्षेत्र माना जाता है। इन क्षेत्रों में अपराध का स्तर काफी उच्च होता है। झुग्गी झोपड़ियों में महिलाओं और बच्चों के प्रति लिंग भेदभाव, हिंसा तथा मादक द्रव्यों का सेवन जैसी घटनाएँ बड़े पैमाने पर होती हैं। ज्यादातर इन बस्तियों से जुड़े हुए लोग मानव तस्करी, बलात्कार ड्रग्स स्मगलिंग आदि अपराधों में संलिप्त पाए जाते हैं।

## 1.5 भारत में मलिन बस्तियों के प्रकार

---

भारतीय जनगणना 2011 के अनुसार मलिन बस्तियों को तीन श्रेणियों में विभाजित किया गया है-

- अ) अधिसूचित मलिन बस्तियां
- ब) मान्यता प्राप्त मलिन बस्तियां
- स) चिन्हित मलिन बस्तियां

**अधिसूचित मलिन बस्तियां :** कस्बों तथा नगरों के सभी अधिसूचित क्षेत्र जिन्हें राज्य सरकार द्वारा मलिन बस्तियां के रूप में अधिसूचित किया गया है - राज्य सरकार द्वारा, केंद्र सरकार द्वारा , स्थानीय सरकार, आवास मंत्रालय या मलिन बस्ती बोर्ड द्वारा मलिन बस्ती अधिनियम तथा अन्य वैधता के तहत अधिसूचित किया गया है, वे अधिसूचित मलिन बस्तियां कहलाती हैं।

**मान्यता प्राप्त मलिन बस्तियां :** वे सभी क्षेत्र जिन्हें राज्य/स्थानीय सरकार, केंद्र सरकार द्वारा, आवास तथा मलिन बस्ती बोर्ड आदि द्वारा अधिसूचित मलिन बस्ती घोषित नहीं किया गया है, उन्हें मान्यता प्राप्त मलिन बस्तियां कहा जाता है।

**चिन्हित मलिन बस्तियां :** घनी आबादी वाला क्षेत्र जिसकी जनसंख्या कम से कम 300 हो, जिसमें 60-70 घर बने हों, जो आधे-अधूरे और एक दूसरे से सटकर बने हों, जहां का वातावरण स्वास्थ्य के अनुकूल न हो, जहाँ मूलभूत सुविधाओं का अभाव हो, स्वच्छता व पीने के पानी का अभाव हो, उन्हें चिन्हित मलिन बस्तियां कहा जाता है।

## 1.6 भारत में मलिन बस्तियों की वर्तमान स्थिति

---

भारत के कस्बों में मलिन बस्तियां: जनसंख्या 2011 के अनुसार-

- अ) 2011 की जनगणना में 4041 वैधानिक कस्बों में 2543 मलिन बस्तियां पाई गईं। (63 प्रतिशत)।
- ब) 2011 की जनगणना में पूरे देश में लगभग 1.08 लाख मलिन बस्तियां थीं।

ग) मलिन बस्तियों की सबसे ज्यादा संख्या (21359) महाराष्ट्र में दर्ज की गई (सीचंद्रमौली, 2011)।

भारत में 2011 की जनगणना के अनुसार मलिन बस्तियों की कुल संख्या 108227 थी

जिनमें-

अधिसूचित मलिन बस्तियां- 37,072

मान्यता प्राप्त मलिन बस्तियां - 30,846 तथा चिन्हित मलिन बस्तियां - 40,309 थीं।

भारतीय जनगणना 2011 के अनुसार मलिन बस्तियों में निर्मित आवासों की कुल संख्या 137.49 लाख थी।

अ) अधिसूचित मलिन बस्तियों के आवास - 49.65 लाख

ब) मान्यता प्राप्त मलिन बस्तियों के आवास - 37.96 लाख

स) चिन्हित मलिन बस्तियों के आवास - 49.88 लाख थे।

---

## **1.7 मलिन बस्तियों के विकास के लिए सरकार द्वारा उठाये गए कदम-**

---

1. राष्ट्रीय स्लम विकास कार्यक्रम (1996)
2. वाल्मीकि आंबेडकर मलिन बस्ती आवास योजना (2001)
3. एकीकृत आवास एवं स्लम विकास कार्यक्रम
4. राजीव आवास योजना
5. प्रधानमंत्री आवास योजना (2015)
6. शहरी गरीबों के लिए मूलभूत सेवाएं
7. शहरी गरीबों के आवास के लिए ब्याज सब्सिडी योजना

1972-1973 में मलिन बस्तियों के पर्यावरण को बेहतर बनाने के लिए केंद्र सरकार द्वारा एक योजना लागू की गई थी, जिसके अंतर्गत मलिन बस्तियों को अत्यधिक जरूरी सुविधाएं प्रदान करना शामिल था -

जैसे - जल आपूर्ति, सीवर व्यवस्था, पानी की निकासी, गलियों को पक्का करना शामिल था। यह योजना 8 लाख तथा इससे ऊपर जनसंख्या वाले भारत के 11 शहरों में लागू की गई थी।

1980-1981 में 'इंटीग्रेटिड लो-कोस्ट सेनिटेशन स्कीम' आरंभ की गई जिसका उद्देश्य मलिन बस्तियों की साफ-सफाई की व्यवस्था करना था। सातवीं योजना में शहरी गरीबों की स्थिति को विशेष रूप से केंद्र से रखा गया था, और पहली बार शहरी गरीबी उन्मूलन योजना लागू की गई जिसे बेसिक सर्विसेज़ फॉर द यूअर (यू बी एस पी) नाम दिया गया था। भारत सरकार ने दिसम्बर 2005 में जवाहरलाल नेहरू नेशनल अर्बन रिन्यूअल मिशन आरम्भ किया था। इसका उद्देश्य आर्थिक रूप से टिकाऊ सभी सुविधाओं से सम्पन्न नगरों का विकास करना था। जे. एन. एन. यू. आर. एम. के एक भाग के रूप में समेकित आवास तथा मलिन बस्ती निवासियों की रहन-सहन की स्थितियों में सुधार लाना था। भारत सरकार ने 2009-10 के बजट में आवास तथा शहरी गरीब उन्मूलन मंत्रालय के अंतर्गत राजीव गांधी योजना की घोषणा की जिसका उद्देश्य 5 वर्ष में मलिन बस्ती मुक्त भारत का निर्माण करना था और मलिन बस्तियों के निवासियों को संपत्ति का अधिकार/मालिकाना हक प्रदान करना था (यू. साहनी, 2013)।

---

## 1.8 मलिन बस्तियों के विकास के लिए कानूनी ढांचा

---

भारत का संविधान में किये गए प्रावधान : अनुच्छेद 243W (12वीं अनुसूची), स्लम सुधार एवं उन्नयन जो स्थानीय निकाय अर्थात् नगर पालिका के अंतर्गत आता है। अनुच्छेद नगरपालिका की शक्ति और उत्तरदायित्व को परिभाषित करता है।

अनुच्छेद 12 जो स्थानीय प्राधिकरण को राज्य के रूप में परिभाषित करता है

अनुच्छेद 19 (1) (ई) - भारत के क्षेत्र के किसी भी हिस्से में रहने और बसने के लिए (44वां संशोधन)

अनुच्छेद 19 (5) - यह एक प्रावधान है जो राज्य को सार्वजनिक भूमि की रक्षा करने में सक्षम बनाता है

अनुच्छेद 37 - न्यायपालिका को 'राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों' के तहत अपनी कर्तव्य संबंधी नीतियों को करने के लिए राज्य को लागू करने से प्रतिबंधित करता है।

### 1.8.1 विधान और अध्यादेश

1. स्लम क्लीयरेंस एंड इम्प्रूवमेंट एक्ट, 1956 यह एक केंद्रीय अधिनियम है जो सभी पर लागू होता है।

धारा 3 स्लम क्षेत्रों को परिभाषित करती है

धारा 19 मलिन बस्तियों (मूल मालिकों) के संरक्षण के बारे में बताता है

धारा 20A में सुधार के बाद झुग्गीवासियों की बहाली के बारे में बताया गया है

धारा 21 स्लम निवासियों द्वारा सार्वजनिक भूमि के संरक्षण के बारे में बताती है जहां धारा 19 और 20 लागू नहीं होती है।

धारा 28 बेदखली के लिए प्रतिस्पर्धा प्राधिकरण की शक्ति के बारे में बताती है।

धारा 34: प्रथम श्रेणी से नीचे प्रतिबंध न्यायालय।

धारा 37: प्रतिस्पर्धा प्राधिकरणों और प्रतिनिधियों का संरक्षण

धारा 37ए: किसी भी न्यायालय द्वारा कोई सिविल क्षेत्राधिकार और कोई निषेधाज्ञा नहीं दी जाएगी।

धारा 39: यह किसी भी अन्य कानून को ओवरराइड करती है।

धारा 40: स्थानीय निकायों द्वारा नियम बनाने की शक्ति।

2. राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली कानून (विशेष प्रावधान) अधिनियम 2007, 2009 और 2011

यह राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली तक फैला हुआ है। इसका अच्छा मॉडल है जिसे देश के किसी भी हिस्से में लागू किया जा सकता है। यह शहरी विकास से संबंधित विभिन्न मुद्दों को संबोधित करता है जिसमें से एक चुनौती सार्वजनिक भूमि पर अतिक्रमण है।



3. दिल्ली नगर निगम अधिनियम, 1957: राज्य का स्थानीय निकाय। इसमें केवल स्लम क्लीयरेंस और डिमोलिशन के बारे में बताया गया है।

धारा 336 (2)(ई) - भवन या कार्य सरकारी भूमि या निगम में निहित भूमि पर अतिक्रमण होगा

धारा 365 - भीड़भाड़ वाले भवनों को हटाना

धारा 366 - मानव निवास के लिए अनुपयुक्त भवनों के सुधार की आवश्यकता के लिए आयुक्त की शक्ति

धारा 368 - मानव निवास के लिए अनुपयुक्त भवनों को गिराने का आदेश देने की आयुक्त की शक्ति

4. दिल्ली विकास प्राधिकरण अधिनियम, 1957: धारा 53 जो स्लम निकासी और सुधार के अनुरूप है।
5. दिल्ली विकास प्राधिकरण (मास्टर प्लान और ज़ोनिंग डेवलपमेंट प्लान) नियम 1959 स्लम क्लीयरेंस, हाउसिंग और रीहाउसिंग और पुनर्विकास योजनाओं के बारे में बताता है।

---

## 1.9 सारांश

---

भारत में मलिन बस्तियां एक बहुत बड़ी समस्या बनी हुई हैं मलिन बस्तियों में घर छोटे या घर के नाम पर एक छोटा का कमरा होता है, निवास की दृष्टि से ज्यादा जनसंख्या और भीड़भाड़ होती है, स्वस्थ वातावरण का आभाव, गरीब या निम्न आय वाले लोग, रोजगार की कमी, बिजली, पानी, पेशाबघर या शौचालय न होना, इस तरह की अनेक समस्याएं होती हैं। नगरों के बसाये जाने का उद्देश्य ये होता है की वहाँ पर स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं उत्पन्न न हों। मलिन बस्ती को अलग- अलग नामों से जानते हैं जैसे - मुंबई की चाल या झोपड़पट्टी एवं मुंबई की सबसे बड़ी मलिन बस्ती धारावी, कलकत्ता को बस्तिया, चेन्नई में पेरी , कानपुर की अहाते और दिल्ली में बस्ती आदि।

---

## 1.10 शब्दावली

---

**मलिन बस्ती** - जिस्टस और हालबर्ट ने मलिन बस्ती की परिभाषा इस प्रकार दी- “एक मलिन बस्ती निर्धन लोगों तथा मकानों का क्षेत्र है। यह संक्रमण का एवं गिरावट का क्षेत्र है। यह असंगठित क्षेत्र होता है, जो मानव अपशिष्ट से परिपूर्ण होता है। यह अपराधियों, दोषयुक्त, निम्न एवं त्यक्त लोगों के लिए सुविधाजनक क्षेत्र होता है।”

---

## 1.11 सन्दर्भ सूची

---

1. Khan, R.E.A. 2010. Life in slums: A case study of Bahawalpur. Afro Asian Journal of Anthropology and Social Policy Vol. 1 January-June, 2010
2. Sawhney, U. 2013. Slum population in India: Extent and policy response. International Journal of Research in Business and Social Science IJRBS Vol.2 No.1, 2013 ISSN: 2147-4478
3. Sinha, B.R.K, Nishad, P, et al. 2016. Characteristics of Slum Population in India. The 13th International Asian Urbanization Conference Rapid Urbanization and Sustainable Development in Asia, January 6-8, 2016.
4. <https://social-work.in/malin-basti-kise-kehte-hain/>
5. <https://indianlawwatch.com/practice/legal-framework-to-handle-slum-development-and-related-issues-in-india/#:~:text=The%20Slum%20Clearance%20%26%20Improvement%20Act%2C%201956&text=Section%2021%20states%20about%20Protection,of%20Competition%20Authority%20for%20Eviction>

टिप्पणी

- (i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का उपयोग कीजिये।
- (ii) इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

1. झुग्गीवासियों की समस्याओं को बताइए।

---

---

---

---

---

2. मलिन बस्ती के प्रकारों को स्पष्ट कीजिये।

---

---

---

---

---

---

## 1.12 बोध प्रश्न उत्तर

---

बोध प्रश्न - 1

1. मलिन बस्तियों को वह शहरी क्षेत्र कहा जा सकता है जिसमें घर ही छोटे या घर के नाम पर एक छोटा का कमरा होता है, निवास की दृष्टि से ज्यादा जनसंख्या और भीड़भाड़ होती है, स्वस्थ वातावरण का आभाव, गरीब या निम्न आय वाले लोग, रोजगार की कमी, बिजली, पानी, पेशाबघर या शौचालय न होना, इस तरह की अनेक समस्याएँ होती हैं। शहरों में मलिन बस्तियाँ का अस्तित्व लम्बे समय से हैं। शहरीकरण से अनेक प्रकार की सामाजिक-आर्थिक व पर्यावरणीय समस्याएँ जुड़ी हैं, परन्तु साथ ही शहरीकरण के साथ मलिन बस्तियों का बढ़ना भी एक बड़ी समस्या

है। (एस गोस्वामी व मन्ना, 2010) जिस्टस और हालबर्ट ने मलिन बस्ती की परिभाषा इस प्रकार दी- “एक मलिन बस्ती निर्धन लोगों तथा मकानों का क्षेत्र है। यह संक्रमण का एवं गिरावट का क्षेत्र है। यह असंगठित क्षेत्र होता है, जो मानव अपशिष्ट से परिपूर्ण होता है। यह अपराधियों, दोषयुक्त, निम्न एवं त्यक्त लोगों के लिए सुविधाजनक क्षेत्र होता है।”

## 2. मलिन बस्तियों के कारण-

गन्दी बस्तियों के विकास के निम्न कारण हैं-

1. नगरीकरण और औद्योगीकरण,
2. नगरीय आकर्षण
3. नगरों में आवास का अभाव,
4. नगर नियोजन में कमी,
5. पर्याप्त संसाधनों का अभाव,
6. तीन औद्योगीकरण के कारण अधिक संख्या में श्रमिकों की आवश्यकता,
7. गाँवों से भारी संख्या में लोगों का नगरों की तरफ पलायन।
8. निर्धनता

## बोध प्रश्न - 2

### 1. झुग्गी वासियों की समस्याएँ

मलिन बस्तियों में स्वच्छता साफ-सफाई न होना और सुरक्षित जल स्रोतों तक पहुँच की कमी, अपशिष्ट प्रबंधन की कमी, बिजली आपूर्ति और जल निकासी प्रणालियों की कमी जैसी मूलभूत समस्याओं का सामना करना पड़ता है। 2011 की जनगणना के अनुसार भारत में मलिन बस्तियों के बीच में रहने वाले लोगों को निम्नलिखित समस्याओं से जूझना पड़ता है-

58% लोगों के लिए जल निकासी की कोई व्यवस्था नहीं है।

43% लोगों को मलिन बस्तियों के बाहर से पीने का पानी लाना पड़ता है।

34% लोगों के पास शौचालय की व्यवस्था नहीं है।

30% लोगों के पास करने को कोई काम नहीं है जिससे वे अपनी आजीविका चला सकें।

**2. भारत में मलिन बस्तियों के प्रकार-** भारतीय जनगणना 2011 के अनुसार मलिन बस्तियों को तीन श्रेणियों में विभाजित किया गया है-

अ) अधिसूचित मलिन बस्तियां

ब) मान्यता प्राप्त मलिन बस्तियां

स) चिन्हित मलिन बस्तियां



## इकाई की रूपरेखा

- 1.0 इकाई का उद्देश्य
- 1.1 पर्यावरण का अर्थ एवं परिभाषा
- 1.2 पर्यावरण की आधारभूत संकल्पनाएँ
- 1.3 पर्यावरण प्रक्रियाएं
- 1.4 पर्यावरण का महत्व
- 1.5 पर्यावरण संरक्षण की अवधारणा
- 1.6 पर्यावरण संरक्षण एवं प्रबंधन
- 1.7 पर्यावरण संरक्षण की नीतियां
- 1.8 पर्यावरण संरक्षण पर संवैधानिक प्रावधान एवं अधिनियम
- 1.9 सारांश
- 1.10 शब्दावली
- 1.11 बोध प्रश्न
- 1.12 सन्दर्भ सूची

---

## 1.0 इकाई का उद्देश्य

---

इस इकाई का उद्देश्य विद्यार्थियों में पर्यावरण के बारे में गहन समझ विकसित करना और पर्यावरण संरक्षण का अर्थ अवधारणा के बारे में विद्यार्थियों को बताना। इस इकाई में विद्यार्थी पर्यावरण संरक्षण एवं प्रबंधन के बारे में भी जानेंगे। इस अध्याय में पर्यावरण संरक्षण से सम्बंधित नीतियों एवं संवैधानिक प्रावधानों पर भी चर्चा की गई है।

हम सभी पर्यावरण से घिरे हुए हैं। पेड़-पौधे, जीव जंतु, पंछी, नदी, पहाड़, पर्वत, झरने इत्यादि सभी पर्यावरण हैं। मनुष्य तथा सभी जीव जंतुओं का पर्यावरण से बहुत ही घनिष्ट संबंध है और हमेशा रहेगा। पर्यावरण के साथ संतुलन बनाकर ही मनुष्य इस धरती पर अपने

अस्तित्व को बनाए रख सकता है। हरे भरे लहलहाते पेड़, आसमान में कलरव करते और चहचहाते पक्षी, जंगल में दौड़ते जीव जंतु, समन्दर में आती और जाती हुई लहरें, कल कल करके बहती हुई नदियां आदि जो मनोरम अहसास करवाते हैं, वो हमें अन्य कहीं से महसूस नहीं हो सकता।

## 1.1 पर्यावरण का अर्थ एवं परिभाषा

पर्यावरण शब्द परि+ आवरण से मिलकर बना है जहां "परि" का अर्थ है "हमारे चारों ओर" और "आवरण" का अर्थ है "घिरे हुए" अर्थात् "पर्यावरण" का शाब्दिक अर्थ है "चारों ओर से घिरे हुए" पर्यावरण सभी भौतिक रासायनिक व जैविक कारकों का एक संग्रह जो किसी भी जीव व पारितंत्रीय आबादी से संबंधित है तथा उनके बारे में उनके रूप, रंग, जीवन आदि को तय करते हैं।

एक ओर सभी संजीव तत्व जैसे पेड़ पौधे पशु पक्षी मनुष्य वन आदि को जैव घटक में शामिल किया जाता है। दूसरी ओर सभी निर्जीव वस्तुएं जैसे वायु जल चट्टान सूर्य आदि पर्यावरण के अजैव घटक के उदाहरण हैं। पर्यावरण जैव तथा अजैव घटकों में अंतर संबंध का अध्ययन भी है।

‘पर्यावरण एक व्यापक शब्द है। यह उन संपूर्ण शक्तियों, परिस्थितियों एवं वस्तुओं का योग है जो मानव को परावृत्त करती है तथा उसके क्रिया कलापों को अनुशासित करती है। वस्तुतः अनुवांशिकता एवं पर्यावरण ये दो अत्यंत महत्वपूर्ण कारक मानव को प्रभावित करते हैं। इस सम्पूर्ण जीव जगत का केन्द्र बिन्दु मानव है। अनुवांशिकता के माध्यम से ही उसकी अंतर्निहित क्षमतायें एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक स्थानांतरित होती है जबकि पर्यावरण इन क्षमताओं को भू-सतह पर लाता है। इस प्रकार से मानव तथा अन्य जीव पृथ्वी अथवा पर्यावरण के अविभाज्य अंग हैं और पृथ्वी को एक अविभाज्य पूर्ण इकाई का स्वरूप प्रदान करते हैं।’

कई विद्वानों, वैज्ञानिकों एवं समाजशास्त्रियों ने पर्यावरण को परिभाषित किया है-



**फिटिंग के अनुसार :** "पर्यावरण किसी जीवधारी को प्रभावित करने वाले समस्त कारकों का योग है। "

**हरकोविट्ज के अनुसार :** "किसी जीवित तत्व के विकास चक्र को प्रभावित करने वाली समस्त बाह्य दशाओं को पर्यावरण कहते हैं।"

**डगलस एवं रोमन हालैण्ड के अनुसार:** "पर्यावरण उन सभी बाहरी शक्तियों एवं प्रभावों का वर्णन करता है, जो प्राणी जगत के जीवन, स्वभाव, व्यवहार, विकास और परिपक्वता को प्रभावित करता है।"

**रॉस के अनुसार :** "पर्यावरण एक बाह्य शक्ति है जो हमें प्रभावित करती है।" -

**बोरिंग के अनुसार:** "एक व्यक्ति के पर्यावरण में वह सब कुछ सम्मिलित किया जाता है जो उसके जन्म से मृत्युपर्यन्त उसे प्रभावित करता है। "

**बुडबर्थ के अनुसार:** "पर्यावरण शब्द का अभिप्राय उन सभी बाहरी शक्तियों और तत्वों से है, जो व्यक्ति को आजीवन प्रभावित करते हैं। "

**डेविस ने** पर्यावरण को मूर्त वस्तु न मानकर अमूर्त वस्तु मानी है।

**अर्नेस्ट हैकेल के अनुसार:** "पर्यावरण का तात्पर्य मनुष्य के चारों ओर पायी जाने वाली परिस्थितियों के उस समूह से है जो उसके जीवन और उसकी क्रियाओं पर प्रभाव डालती है।"

---

## 1.2 पर्यावरण की आधारभूत संकल्पनायें

---

पर्यावरण के निम्न तीन संकल्पनायें हैं।

**परिस्थिति तंत्र :-** परिस्थिति तंत्र की विचारधारा को सर्वप्रथम ए.जी. टेन्सले ने 1935 में प्रस्तुत किया था । वह अंतःक्रियाएं जो वनस्पति एवं पशु जगत और उनके पर्यावरण को एक पूर्ण किन्तु सक्रीय इकाई के रूप में जोड़ती है, परिस्थिति तंत्र कहलाता है ।

परिस्थिति तंत्र के दो घटक होते हैं। जो निम्नलिखित हैं -

**अजैविक घटक:-** इसके अंतर्गत निर्जीव कारक आते हैं जैसे - मिट्टी, जल, हवा, प्रकाश, खनिज, ताप, जलवायु आदि ।

**जैविक घटक:-** पादप और जन्तुओं को मिलाकर जैविक घटक बनता है। इनमें उत्पादक अर्थात् वनस्पतियाँ, उपभोक्ता अर्थात् पशु एवं मानव तथा अपघटक अर्थात् बैक्टीरियाँ, फंगस आदि सूक्ष्म जीव होते हैं।

**परिस्थिति विज्ञान:-** परिस्थिति विज्ञान यह पर्यावरणीय अंतःक्रियाओं का वैज्ञानिक उपागम है जो जीवित वस्तुओं के कल्याण को, उनके विवरण प्रचुरता, उत्पादन और विकास को नियमित करते हुये नियंत्रित करता है। परिस्थिति विज्ञान के मुख्य निम्न तीन घटक होते हैं।

1. आवास क्षेत्रीय परिस्थिति विज्ञान:- इसके अंतर्गत जीवों का उनके पर्यावरण प्रकार या आवास क्षेत्र के आधार पर अध्ययन किया जाता है जैसे - स्वच्छ जल, समुद्री मुहाना, पार्थिव, अंतरिक्ष, मानव, सूक्ष्मजीव आदि।
2. व्यक्ति परिस्थिति विज्ञान:- इसमें किसी एक प्रजाति का अध्ययन किया जाता है। प्रजातियों का व्यक्ति परिस्थिति विज्ञान में अध्ययन की इकाई एक प्रजाति होती है।
3. सामुदायिक परिस्थिति विज्ञान:- इसमें पौधे और पशुओं की अनेक प्रजातियों या समुदायों का अध्ययन होता है। इसमें अध्ययन की अनेक इकाईयाँ अनेक समुदाय होते हैं तथा अजैव पर्यावरण से उसकी प्रतिक्रिया का एक तंत्र के रूप में अध्ययन होता है।

**जैव मण्डल:-** पृथ्वी में जीवन थलमण्डल, जलमण्डल और वायुमण्डल की एक पतली पर्त में सीमित है जीवधारी इस पर्त को जैव मण्डल कहते हैं। इस प्रकार से पृथ्वी का वह भाग जिसमें परिस्थिति तंत्र कार्य कर सकता है अर्थात् जीवन युक्त मिट्टी, हवा और जल क्षेत्र जैव मण्डल या जीवन वृत्त कहलाता है।

---

### 1.3 पर्यावरणीय प्रक्रियायें

---

**भौतिक प्रक्रियायें :** - ये धरातल पर जैविक और अजैविक दोनों प्रकार के पदार्थ निर्माण, पोषण और विनाश करती हैं। अजैविक पदार्थों के निर्माण में संलग्न प्रक्रियाओं को भौगर्भिक चक्र कहते हैं। भौगर्भिक चक्र के अंतर्गत अनेक प्रकार के उपचक्र कार्य करते हैं। जलचक्र, शैलचक्र, भू-रासायनिक चक्र तथा भू-विवर्तनिक चक्र आदि।

**1.3.2 जैव रासायनिक प्रक्रियायें:-** जैव रासायनिक प्रक्रियाओं जैविक पदार्थों का निर्माण, पोषण तथा विनाश करती है। इसे जैव भू-रासायनिक चक्र भी कहते हैं। इस चक्र में अनेक उपचक्र कार्यरत हैं। जैसे आक्सीजन, कार्बन, हाईड्रोजन नाइट्रोजन, फास्फोरस, सल्फर चक्र आदि।

---

## 1.4 पर्यावरण का महत्व

---

इस धरती पर रहने वाले सभी जीवित और मृत चीज पर्यावरण के अंतर्गत आती हैं चाहे वह जमीन पर रहते हो या पानी पर सभी पर्यावरण का हिस्सा है पर्यावरण में हवा पानी सूरज की रोशनी पौधे जानवर आदि सभी आते हैं। पर्यावरण हमारे चारों ओर व्याप्त वातावरण को कहा जाता है जो हमें प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं।

हमारे सौरमंडल का पृथ्वी एकमात्र ग्रह जिस पर जीवन पाया जाता है जीवन के लिए पर्यावरण बहुत महत्वपूर्ण होता है जो सभी जीवों को सुरक्षा प्रदान करता है।

पृथ्वी पर जीवन के अस्तित्व में पर्यावरण एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, पृथ्वी विभिन्न जीवित प्रजातियों का घर है और हम सभी भोजन हवा पानी और अन्य जरूरत के लिए पर्यावरण पर निर्भर हैं हम सभी का यह कर्तव्य है की पर्यावरण की रक्षा करें।

- 
1. पर्यावरण पृथ्वी पर जीवन का प्रमुख अस्तित्व है।
  2. पृथ्वी पर रहने वाले मनुष्यों के लिए पर्यावरण एकमात्र साधन है जो उनके घर की तरह है जो उन्हें हवा भोजन और अन्य जरूरत की चीज प्रदान करता है।
  3. मनुष्य के जीवन को स्वस्थ रखने में भी पर्यावरण महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
  4. इस धरती पर जीवन के अस्तित्व का एकमात्र कारक पर्यावरण है।
  5. पर्यावरण भाई और जलवायु को विनियमित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
  6. पर्यावरण प्राकृतिक सुंदरता का स्रोत है इसलिए यह एक और महत्वपूर्ण कारक है।

मानवता की संपूर्ण जीवन समर्थन प्रणाली पृथ्वी पर रहती सब जीवों की भलाई पर निर्भर करती है। वैसे इसे वायुमंडल के बेयोस्फीयर के रूप में जाना जाता है, यह 1920 के दशक में एक रूसी वैज्ञानिक **ब्लादिमीर बर्नाडस्की** द्वारा गढ़ा गया था। बायोस्फीयर एक वैश्विक पारिस्थितिकी तंत्र को संदर्भित करता है जिसमें सारे जीव एक दूसरे पर आश्रित हैं। पूरे पारिस्थितिकी तंत्र के भीतर वर्षावन, महासागर, रेगिस्तान और टुंड्रा जैसे छोटे पारिस्थितिक तंत्र हैं।

## बोध प्रश्न - 1

---

### टिप्पणी

- (i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का उपयोग कीजिये।
- (ii) इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

1. पर्यावरण का अर्थ एवं परिभाषा बताइए।

---

---

---

---

2. पर्यावरण के महत्व को स्पष्ट कीजिये।

---

---

---

---

---

## 1.5 पर्यावरण संरक्षण की अवधारणा

---

पर्यावरण संरक्षण हमारे ग्रह के सभी प्राकृतिक संसाधनों वह हमारे ग्रह की रक्षा करने के लिए प्रयोग में आता है और इसके द्वारा किए गए कार्य ही उसे परिभाषित करते हैं। सरल शब्दों में कहें तो पर्यावरण संरक्षण प्राकृतिक संसाधनों के समुचित योजनाबाद और संतुलित उपयोग कर पर्यावरण में संतुलन बनाए रखने का कार्य करते हैं इसमें प्राकृतिक

संसाधनों का समझदारी पूर्ण उपयोग शामिल है। इसे वर्तमान पीढ़ी के उपयोग हेतु संसाधन तो रहे ही साथ ही आने वाली पीढ़ियों के लिए भी संरक्षित करके रख सकें। जिससे आगे आने वाली पीढ़ियों को भी प्राकृतिक संसाधन पर्याप्त मात्रा में प्राप्त हो सके।

वर्तमान समय में विश्व में जनसंख्या वृद्धि की स्थिति तीव्र होती जा रही है। जितने भी विकसित देश हैं वहां की स्थिति तो नियंत्रण में है परंतु जितने भी विकासशील देश हैं वहां जनसंख्या तीव्र गति से बढ़ रही है जिसका परिणाम है प्राकृतिक संसाधनों की अत्यधिक खपत, क्योंकि संसाधन सीमित मात्रा में मौजूद हैं। साथ ही साथ औद्योगिक क्षेत्र में हो रहा निरंतर विकास भी प्राकृतिक संसाधनों में निरंतर कमी लाता जा रहा है क्योंकि जितना अधिक औद्योगिक क्षेत्र विकसित होगा उतनी ही संसाधनों की खपत होगी जिसके परिणाम स्वरूप बहुत सी पर्यावरणीय समस्या हमारे समक्ष आएंगी व कुछ आ रही हैं, जैसे वन्यजीवों का नुकसान वी वनों का लगातार कम होते जाना, कोयल पेट्रोलियम प्राकृतिक गैसों जैसे जीवाश्म इंधनों की कमी वायु जल भूमि ध्वनि प्रदूषण आदि इसके अलावा जीवित जीवों को बहुत से समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। इससे कई सारी वैश्विक पर्यावरणीय समस्याओं का जन्म हुआ है जैसे जलवायु परिवर्तन जैव विविधता की हानि मरुस्थलीकरण तापमान की वृद्धि और ओजोन परत का ह्रास।

---

## 1.6 पर्यावरण संरक्षण व प्रबंधन

---

गाँधी जी ने कहा था की हमारी धरती पर मनुष्य की आवश्यकताओं की पूर्ति करने के पर्याप्त साधन हैं किन्तु मनुष्य के लालच की पूर्ति करने के लिए नहीं। मनुष्य अपने लालच में प्राकृतिक संसाधनों का दोहन कर रहा है। वर्तमान समय में जीवाश्म खनिज बहुत ही तीव्र गति से कम होते जा रहे हैं जैसे कोयला और पेट्रोलियम। अगर यह समाप्त हो गए तो हमें ऊर्जा के किसी और स्रोत की खोज कर उसे पर निर्भर रहना होगा। खनिजों के अत्यधिक प्रयोग से प्राकृतिक संसाधनों की समाप्ति की समस्या उत्पन्न हो रही है क्योंकि संसाधन सीमित मात्रा में प्रकृति में मौजूद हैं और बढ़ती जनसंख्या के कारण इनका लगातार ह्रास होता जा रहा है। पेट्रोलियम व कोयल जैसे कुछ प्राकृतिक संसाधन हैं जो पुनः

प्रकृति द्वारा निर्मित कर दिए जाते हैं परंतु इस प्रक्रिया में अत्यधिक समय लगता है इसलिए हमें अपने संसाधनों का संरक्षण करना आवश्यक हो गया है। इसके संरक्षण का मुख्य रूप है कि संसाधनों का मंत्र जरूरत के लिए है इस्तेमाल करें, इनका काम से कम उपयोग करें। इनका उपयोग तीन तरह से किया जाता है जैसे उपयोग कम करने संसाधनों के पुनः उपयोग और सामग्रियों के पुनर्चक्रण के द्वारा। पर्यावरण की समस्याओं का समाधान करने के लिए प्रबंधन के द्वारा उनका उपयोग कम करने व संरक्षण करने की योजना भी बनाई जाती है। प्रमुख पर्यावरणीय समस्याएं प्राकृतिक संसाधनों की गुणवत्ता में निम्नीकरण या गिरावट रही हैं - उदाहरण के लिए, भूमि, मृदा, जल और वायु आदि की प्राकृतिक गुणवत्ता में कमी या गिरावट। साथ ही वन्यजीवों, वनस्पतियों और जीवों को नुकसान पारिस्थितिकी तंत्र में गंभीर व्यवधान की ओर ले जा रहा है। प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र के लिए ये विनाश भूमंडलीय तापन और जलवायु परिवर्तन जैसी बड़ी वैश्विक समस्याओं का कारण बन रहे हैं। इसलिए मजबूत और प्रभावी पर्यावरण प्रबंधन योजना की आवश्यकता है-

पर्यावरण प्रबंधन योजना किसे कहते हैं?

पर्यावरण प्रबंधन योजना में आदर्श रूप से निम्नलिखित बातें शामिल होने चाहिए;

1. प्रशासनिक और तकनीकी व्यवस्था होना।
2. प्रभावी कार्यान्वयन के लिए अन्य संगठनों एवं सरकारी अधिकारियों के साथ प्रस्तावित संस्थागत व्यवस्था,
3. स्व-निगरानी का तंत्र का होना जिससे नियमों के अनुपालन हो सके,
4. विकास प्रक्रिया में पर्यावरण प्रबंधन योजनाओं को एकीकृत करना,
5. प्राकृतिक संसाधनों, जैसे जल, भूमि, ऊर्जा, आदि के उपयोग को कम करने के उपाय, और पुनः उपयोग तथा पुनर्चक्रण का प्रावधान करना,
6. विभिन्न घटकों के लिए प्रस्तावित विभिन्न शमन या कम करने के

उपायों की पर्यावरणीय लेखा-परीक्षण करना तथा

7. पर्यावरण प्रबंधन प्रकोष्ठ की स्थापना
8. विभिन्न पर्यावरणीय घटकों के लिए निगरानी प्रोटोकॉल तैयार करना।

---

## 1.7 पर्यावरण संरक्षण नीतियां

---

पर्यावरण के वहनीय विकास और प्रबंधन की दिशा में भारत की नीतियों का विश्लेषण अवश्य है, भारत में पर्यावरणीय नियमों का एक लंबा इतिहास रहा है औपनिवेशिक काल में ही पर्यावरणीय समस्याओं से निपटने के लिए अनेक अधिनियम बनाए गए थे। जो निम्न हैं -

- भारतीय दंड संहिता 1860, आपराधिक प्रक्रिया संहिता,
- बंगाल धूम्रपान हानिकारक अधिनियम 1905,
- व्यापारिक नौपरिवहन अधिनियम 1958,
- भारतीय पासपोर्ट अधिनियम 1908,
- भारतीय मोटर वाहन अधिनियम,
- भारतीय वन अधिनियम 1927,
- कारखाना अधिनियम 1948 ,
- उद्योग (विकास और विनियमन) अधिनियम, खान और खनिज (विनियमन और विकास अधिनियम) 1952 आदि।

---

इनमें से कुछ प्रावधान स्वतंत्रता के बाद वर्तमान समय में भी देश में लागू हैं। भारतीय दंड संहिता 1860 के अनुसार वायु और जल को प्रदूषित करना, सार्वजनिक उपद्रव करना दंडनीय अपराध है। तीव्र परिवर्तन तथा गैर-प्रभावी कार्यान्वयन के कारण ये प्रावधान वर्तमान समय में पर्यावरण का दोहन रोकने में अप्रभावी हैं।

---

## 1.8 पर्यावरण संरक्षण पर संवैधानिक प्रावधान एवं अधिनियम

---

1. अनुच्छेद 48ए: विभिन्न उपायों को अपनाकर पर्यावरण को

प्रदूषण से बचाने के लिए राज्य पर एक कर्तव्य लगाता है।

2. अनुच्छेद 51ए (जी): मैं कहा गया है कि यह भारत के प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य होगा कि वह प्राकृतिक पर्यावरण की रक्षा और सुधार करे जिसमें झीलें, नदियाँ, जंगल, वन्य जीवन शामिल हैं।
3. भारतीय वन अधिनियम 1927: वन संबंधी अपराधों को परिभाषित करता है और एक आरक्षित वन प्रतिबंधों के अंदर निषिद्ध कृत्यों पर जुर्माना लगाया जाता है।
4. वन्यजीव संरक्षण अधिनियम 1972
5. जल निवारण और प्रदूषण नियंत्रण अधिनियम 1974
6. वन संरक्षण अधिनियम 1980-इस अधिनियम का मुख्य उद्देश्य वनों की कटाई को रोकना था।
7. वायु रोकथाम और प्रदूषण नियंत्रण अधिनियम 1981
8. पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 1986

पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 1986 में लाया गया। जिसका मुख्य उद्देश्य था भविष्य के लिए प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा करना। क्योंकि इस वर्तमान समय में हम विकास के नाम पर लगातार पर्यावरण का क्षरण कर रहे हैं और अब हम ऐसी स्थिति में पहुंच गए हैं कि हम बिना पर्यावरण संरक्षण के यहां लंबे समय तक जीवित नहीं रह पाएंगे।

पर्यावरण संरक्षण अधिनियम का उद्देश्य पर्यावरण और पर्यावरण स्थितियों की रक्षा और सुधार करना है यह वर्ष 1972 में स्टॉकहोम में आयोजित मानव पर्यावरण संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन में किए गए निर्णय को भी लागू करता है। जिसके अनुसार पर्यावरण को नुकसान पहुंचाने वाले सभी लोगों के खिलाफ सख्त कार्यवाही करने का प्रावधान है।

---

## 1.9 सारांश

---

पर्यावरण का संरक्षण करना बहुत अत्यधिक जरूरी हो गया है, क्योंकि संपूर्ण मानव जीवन पर्यावरण पर निर्भर है। जब हमारा पर्यावरण सही नहीं रहेगा तो हमारा जीना बहुत मुश्किल हो जाएगा, इसलिए



पर्यावरण का संरक्षण करना बहुत जरूरी है। ऐसी चीजों का प्रयोग नहीं करना होगा, जिन से हमारे पर्यावरण को नुकसान पहुंचे, तभी हम अपने पर्यावरण को संरक्षित कर पाएंगे। इसके लिए लोगों को भी अधिक से अधिक संख्या में जागरूक करना होगा। नए-नए तरीके अपनाकर लोगों को जागरूक कर हम अपने पर्यावरण को बचा पाएंगे उसको संरक्षित कर पाएंगे।

---

## 1.10 शब्दावली

---

**पर्यावरण-** पर्यावरण का तात्पर्य मनुष्य के चारों ओर पायी जाने वाली परिस्थितियों के उस समूह से है जो उसके जीवन और उसकी क्रियाओं पर प्रभाव डालती है।

**पर्यावरण संरक्षण** - पर्यावरण में उपस्थित सभी वस्तुओं का आवश्यकता अनुसार उपयोग करना, किसी भी वास्तु का दुरुपयोग या बर्बाद नहीं करना पर्यावरण संरक्षण कहलाता है।

---

## 1.11 सन्दर्भ सूची

---

1. <https://thesimplehelp.com/essay-on-save-environment-in-hindi/>
2. Ministry of Environment Forest, and Climate Change  
<http://moef.gov.in/en/>
3. Singh, J. S., Singh, S.P. & Gupta, S. 2006. Ecology, Environment and Resource Conservation. Anamaya Publications, New Delhi.
4. Sodhi, N.S. & Ehrlich, P.R. (Eds). 2010. Conservation Biology for All. Oxford University Press
5. Sengupta, R. 2003. Ecology and economics (OUP): An approach to sustainable development." OUP Catalogue.
8. Singh, J.S., Singh, S.P. and Gupta, S.R. 2006. Ecology, Environment and Resource Ecology, Environment and Resource Conservation. Anamaya

6. Nath, B. (Ed.). (2009). Environmental regulations and standard setting. EOLSS Publications

## बोध प्रश्न - 2

### टिप्पणी

- (i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का उपयोग कीजिये।
- (ii) इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

1. पर्यावरण संरक्षण का अर्थ बताइए।

---

---

---

---

2. पर्यावरण संरक्षण एवं प्रबंधन को स्पष्ट कीजिये।

---

---

---

---

---

## 1.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

---

### बोध प्रश्न - 1

1. 'पर्यावरण एक व्यापक शब्द है। यह उन संपूर्ण शक्तियों, परिस्थितियों एवं वस्तुओं का योग है जो मानव को परावृत्त करती है तथा उसके क्रिया कलापों को अनुशासित करती है। वस्तुतः अनुवांशिकता एवं पर्यावरण ये दो अत्यंत महत्वपूर्ण कारक मानव को प्रभावित करते हैं। इस सम्पूर्ण जीव जगत का केन्द्र बिन्दु मानव है। अनुवांशिकता के माध्यम से ही उसकी अंतर्निहित क्षमतायें एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक स्थानांतरित होती हैं जबकि

पर्यावरण इन क्षमताओं को भू-सतह पर लाता है। इस प्रकार से मानव तथा अन्य जीव पृथ्वी अथवा पर्यावरण के अविभाज्य अंग हैं और पृथ्वी को एक अविभाज्य पूर्ण इकाई का स्वरूप प्रदान करते हैं।'

कई विद्वानों, वैज्ञानिकों एवं समाजशास्त्रियों ने पर्यावरण को परिभाषित किया है-

**फिटिंग के अनुसार :** पर्यावरण किसी जीवधारी को प्रभावित करने वाले समस्त कारकों का योग है।

**हरकोविट्ज के अनुसार :** "किसी जीवित तत्व के विकास चक्र को प्रभावित करने वाली समस्त बाह्य दशाओं को पर्यावरण कहते हैं।"

## 2. पर्यावरण का महत्व

1. पर्यावरण पृथ्वी पर जीवन का प्रमुख अस्तित्व है।
2. पृथ्वी पर रहने वाले मनुष्यों के लिए पर्यावरण एकमात्र साधन है जो उनके घर की तरह है जो उन्हें हवा भोजन और अन्य जरूरत की चीज प्रदान करता है।
3. मनुष्य के जीवन को स्वस्थ रखने में भी पर्यावरण महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
4. इस धरती पर जीवन के अस्तित्व का एकमात्र कारक पर्यावरण है।
5. पर्यावरण भाई और जलवायु को विनियमित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
6. पर्यावरण प्राकृतिक सुंदरता का स्रोत है इसलिए यह एक और महत्वपूर्ण कारक है।

## बोध प्रश्न - 2

1. मनुष्य अपने लालच में प्राकृतिक संसाधनों का दोहन कर रहा है । वर्तमान समय में जीवाश्म खनिज बहुत ही तीव्र गति से कम होते जा रहे हैं जैसे कोयला और पेट्रोलियम। अगर यह समाप्त हो गए

तो हमें ऊर्जा के किसी और स्रोत की खोज कर उसे पर निर्भर रहना होगा। खनिजों के अत्यधिक प्रयोग से प्राकृतिक संसाधनों की समाप्ति की समस्या उत्पन्न हो रही है क्योंकि संसाधन सीमित मात्रा में प्रकृति में मौजूद हैं और बढ़ती जनसंख्या के कारण इनका लगातार ह्रास होता जा रहा है। पेट्रोलियम व कोयल जैसे कुछ प्राकृतिक संसाधन हैं जो पुनः प्रकृति द्वारा निर्मित कर दिए जाते हैं परंतु इस प्रक्रिया में अत्यधिक समय लगता है इसलिए हमें अपने संसाधनों का संरक्षण करना आवश्यक हो गया है

2. पर्यावरण प्रबंधन योजना में आदर्श रूप से निम्नलिखित बातें शामिल होने चाहिए;

- प्रशासनिक और तकनीकी व्यवस्था होना।
- प्रभावी कार्यान्वयन के लिए अन्य संगठनों एवं सरकारी अधिकारियों के साथ प्रस्तावित संस्थागत व्यवस्था,
- स्व-निगरानी का तंत्र का होना जिससे नियमों के अनुपालन हो सके
- विकास प्रक्रिया में पर्यावरण प्रबंधन योजनाओं को एकीकृत करना,
- प्राकृतिक संसाधनों, जैसे जल, भूमि, ऊर्जा, आदि के उपयोग को कम करने के उपाय, और पुनः उपयोग तथा पुनर्चक्रण का प्रावधान करना,
- विभिन्न घटकों के लिए प्रस्तावित विभिन्न शमन या कम करने के उपायों की पर्यावरणीय लेखा-परीक्षण करना तथा
- पर्यावरण प्रबंधन प्रकोष्ठ की स्थापना
- विभिन्न पर्यावरणीय घटकों के लिए निगरानी प्रोटोकॉल तैयार करना।

## इकाई की रूपरेखा

- 1.0 इकाई का उद्देश्य
- 1.1 प्रस्तावना
- 1.2 उपभोक्ता कौन है?
- 1.3 उपभोक्ता का अधिकार
- 1.4 उपभोक्ता के उत्तरदायित्व
- 1.5 उपभोक्ता संरक्षण की अवधारणा
- 1.6 उपभोक्ता संरक्षण का महत्व
- 1.7 उपभोक्ता संरक्षण से सम्बंधित कानून
- 1.8 सारांश
- 1.9 शब्दावली
- 1.10 बोध प्रश्न
- 1.11 सन्दर्भ सूची

---

## 1.0 इकाई का उद्देश्य

प्रत्येक युग में उपभोग मनुष्यों की प्रथम आवश्यकता रही है। कोई व्यक्ति अपने जीवन को सुचारु रूप से चलने के लिए वस्तुओं का उपभोग करता है, उसे ही उपभोक्ता कहा जाता है। शुरू से ही यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि एक तरफ उपभोग जहां समाज में रहने वाले लोगों की जरूरत है वहीं दूसरी तरफ उपभोक्तावाद आर्थिक विकास से उत्पन्न होने वाली एक सामाजिक समस्या भी है जो वैयक्तिक पारिवारिक और सामाजिक आर्थिक जीवन में नई समस्याओं को जन्म दे रही है। इस अध्याय में विद्यार्थी उपभोक्ता के बारे में जानेंगे कि उपभोक्ता कौन है उसके दायित्व एवं उसके अधिकार क्या है? उपभोक्ता संरक्षण क्या है? उसके महत्व एवं उपभोक्ता संरक्षण के लिए कानूनी प्रावधानों की भी चर्चा इस अध्याय में की गई है।

## 1.1 प्रस्तावना

उपभोक्तावाद की समस्या को समझने के लिए पहले उपभोग और उपभोक्ता के अर्थ तथा इन से संबंधित प्रवृत्तियों को समझना आवश्यक है। समाजशास्त्र तथा अर्थशास्त्र में उपभोग और उपभोक्ता का अर्थ एक दूसरे से भिन्न है। जहां एक तरफ आर्थिक संदर्भ में उपभोग का तात्पर्य उस आर्थिक क्रिया से है जिसके द्वारा एक व्यक्ति किसी वस्तु या धन के बदले में जीवन निर्वाह के लिए कुछ वस्तुएं प्राप्त करके उन्हें उपयोग में लाता है। इस तरह आर्थिक क्रिया करने वाले व्यक्ति को ही उपभोक्ता कहा जाता है। वहीं दूसरी तरफ समाजशास्त्री अर्थ में उपभोक्ता तात्पर्य सामाजिक मूल्यों और सांस्कृतिक विशेषताओं के अनुसार कुछ विशेष वस्तुओं अथवा पदार्थ का उपयोग करने की प्रवृत्ति से है। इसका अर्थ यह है की जैसे-जैसे समाज के मूल्य में परिवर्तन होता है वैसे-वैसे उपभोग की प्रकृति में भी परिवर्तन होता है। जैसे सभ्यता के आरंभ में लोग जंगली पशुओं को मार कर उनके कच्चे मांस को कहते थे और अपनी उपभोग की आवश्यकता को पूरा कर लेते थे इसके लिए किसी वस्तु या धन का भुगतान भी नहीं करना पड़ता था। जब कृषि युग आरंभ हुआ तब भी उपभोग और उपभोक्ता का संबंध किसी तरह की बाजार व्यवस्था से नहीं था। अलग-अलग गांव या कबीले के लोग आपस में अपनी अपनी जरूरत की वस्तुओं की अदला बदली कर लेते थे और इसी से अपनी सारी जरूरत को पूरा कर लेते थे। इसके पश्चात जब औद्योगिक अर्थव्यवस्था आरंभ हुई और उत्पादन और बिक्री बढ़ने लगा और संगठित बजारों की स्थापना होने लगी जिसमें प्रतियोगिता आर्थिक क्रियों का मुख्य आधार बन गई। जिससे आर्थिक प्रतियोगिता में तब आने के लिए लोगों के द्वारा ऐसी बहुत सारी वस्तुओं का उत्पादन होने लगा जिससे दैनिक जीवन की कठिनाइयों को कम करने का कार्य किया जा सके। और धीरे-धीरे इन बदलती हुई मनोवृत्तियों के फल स्वरूप समाज के कुछ बड़े वर्गों ने ऐसी वस्तुओं का उपभोग करना भी शुरू कर दिया जिनके लिए उसके पास साधनों की कमी थी और इसके पक्ष स्पष्ट है की आर्थिक विकास के फल स्वरूप कुछ ऐसी समस्याएं उत्पन्न होने लगी जिसमें व्यक्तियों में उन वस्तुओं के उपभोग की इच्छा और प्रवृत्ति की बढ़ोतरी हुई जिसकी संतुष्टि करना उपलब्ध साधनों के बाहर था। सामान्य शब्दों में इसी दशा को हम उपभोक्तावाद कहते हैं।

## 1.2 उपभोक्ता कौन है

---

वह व्यक्ति जो वस्तुओं उत्पादों या सेवाओं को स्वयं व्यक्तिगत उपयोग के लिए खरीदना है ना कि निर्माण या पुनः बेचने के लिए उपभोक्ता कहलाता है। एक उपभोक्ता वह होता है जो निर्णय लेने वाला होता है स्टोर पर कोई खरीदना है या नहीं। एक उपभोक्ता वह होता है जो अपनी जरूरत के लिए उत्पाद खरीदते हैं उसका उपयोग करते हैं। एक उपभोक्ता वस्तु का पुनः विक्रय नहीं कर सकता है लेकिन अपने के लिए इसका उपयोग कर सकता है। उत्पाद या सेवाओं को खरीदने वाले खरीददार के अलावा कोई भी व्यक्ति उसकी अनुमति लेकर उत्पादन का उपयोग कर सकता है उसे उपभोक्ता के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। सरल शब्दों में वस्तुओं या सेवाओं के अंतिम उपयोगकर्ता को उपभोक्ता कहा जाता है।

यहां तक की अर्थव्यवस्था में खुद को शामिल करने वाले मनुष्य उत्पाद के उपभोक्ता है उदाहरण के लिए जब कोई भी व्यक्ति अपने परिवार के लिए किसी दुकान से सामान खरीदना है तो पहले तो वह उसका ग्राहक बन जाता है क्योंकि वह केवल वस्तुएं खरीद रहा होता है परंतु जब वह दुकान दार के परिवार के अन्य सदस्यों को खिलाते हैं तो वह उपभोक्ता बन जाता है।

---

## 1.3 उपभोक्ता का अधिकार

---

उपभोक्ता को अपने अधिकार का ज्ञान होना आवश्यक है जो इस प्रकार है :-

**सुरक्षा का अधिकार:** यदि उपभोक्ता किसी भी प्रकार की दवाई, भोजन, या इलेक्ट्रॉनिक सामान खरीदता है तो उस व्यापारी को उससे सम्बंधित हानियों के बारे में उपभोक्ता को बताना होगा जैसे डॉक्टर, फ़ूड सप्लायर, डेरी प्रोडक्ट आदि इन्हें प्रोडक्ट की Expiry Date के बारे में बताना होगा ।

**सूचना के अधिकार:** इस अधिकार में आपको वस्तु खरीदने से पहले उस वस्तु से सम्बंधित सम्पूर्ण जानकारी का होना अनिवार्य है जैसे मूल्य, गुणवत्ता, स्तर, सुधता, मानक आदि । उपभोक्ता यदि कोई वस्तु खरीद

रहा है तो उससे सम्बंधित सम्पूर्ण जानकारी व्यापारि या विक्रेता को देनी होगी ।

**चयन का अधिकार:** उपभोक्ताओं को कोई भी सामान खरीदने से पहले चुनने का अधिकार है उसे क्या लेना है कितनी मात्रा में लेना है व्यापारी बुरी वस्तुओं कोभी अच्छा बता कर अत्यधिक दाम पर बेचते हैं ।

निवारण अधिकार यदि विक्रेता कोई भी सस्ती वस्तु महंगे दाम पर बेचता है, या कोई खराब वस्तु उपभोक्ता को बेचता है तो वह उपभोक्ता उसे विक्रेता को Return कर सकता है।

**सुनवाई का अधिकार:** उपभोक्ता को अपनी सिकायत पर अपनी राय रखने और अपने हक की बात कहने का पूरा अधिकार होना चाहिए. उपभोक्ता या कंज्यूमर्स का उद्देश्य ये सुनिश्चित करना है की उस Person की आवाज कॉर्पोरेट Persons तक सुनी जाये। उसके लिए वे Consumerdaddy.com वेबसाइट पर जाकर अपनी सिकायत दर्ज कर सकते हैं।

**विवाद सुलझाने का अधिकार:** इस अधिकार में उपभोक्ताओं को अपने विवादों का निवारण करने के लिए उपभोक्ता विवाद निवारण फोरम, राज्य उपभोक्ता निवारण आयोग और राष्ट्रीय उपभोक्ता विवाद निवारण आयोग में जाना होगा।

**उपभोक्ता शिक्षा का अधिकार:** उपभोक्ता शिक्षा के अधिकार के अंतर्गत वह अधिकार आता है जिसमें उपभोक्ता शिक्षा या knowledge के माध्यम से उसके अनुसार उत्पाद या कोई भी सामान खरीद सके और उन्हें इस बात की सम्पूर्ण जानकारी हो की उसे ठगा ना जा रहा हो।

### 1.3.1 उपभोक्ता शिक्षा के लाभ

उपभोक्ता शिक्षा के निम्नलिखित लाभ हैं:-

1. इससे उपभोक्ता का सही वस्तु खरीदने का विकास होता है।
2. उपभोक्ता सुरक्षित विश्वसनीय और उच्च गुणवत्ता वाली वस्तुओं की सही मूल्य की मांग करता है।



3. उपभोक्ता हानिकारक वस्तुओं के उपभोग से अपने आप को बचा सकता है।
4. उपभोक्ता अपनी समस्या का उचित समाधान ढूँढने में सक्षम होता है।
5. उपभोक्ता शिक्षा उन्हें ऐसे बेईमान व्यापारियों एवं उत्पादनकर्ताओं द्वारा अपनाये जाने वाली वे विधियाँ जिनके द्वारा वह उपभोक्ताओं को धोखा देने के लिए बाजार के व्यवहार को तोड़ मरोड़ करने का प्रयत्न करता है, से अवगत कराती है।
6. उपभोक्ता यदि शिक्षित है तो शिकायत करते समय उन्हें अपने द्वारा अपनाई जाने वाली सभी प्रक्रियाओं की पहले से जानकारी होती है।

---

## 1.4 उपभोक्ता के उत्तरदायित्व

---

उपभोक्ता को यदि अधिकार प्राप्त है तो उसके कुछ उत्तरदायित्व भी होते हैं अगर उत्तरदायित्व नहीं होंगे तो अधिकारों का उपयोग भी सम्भव नहीं होता है। उपभोक्ता का दायित्व निम्न प्रकार है-

**लेन-देन का प्रमाण:** किसी भी वस्तु को खरीदते समय उपभोक्ता का दायित्व होता है की वह लेन देन का प्रमाण ले वरना भविष्य में उसे समस्या आ सकती है । लेन देन का प्रमाण लेने से आशय है की उसे वस्तु का बिल और यदि वारंटी है तो वारंटी कार्ड जरूर लेना चाहिये।

**स्वयं सहायता का दायित्व:** उपभोक्ता को कम से कम विक्रेता पर निर्भर होना चाहिए उसे धोके से बचने के लिए जितना हो सके उतना जागरूक रहना चाहिए । उपभोक्ता को अपने हितों की रक्षा जितना हो सके उतनी समझदारी से करना चाहिए ।

**उचित दावा:** उपभोक्ता को यदि विक्रेता द्वारा कोई समस्या आती है तो वे क्षति पूर्ति का दवा कर सकता है पर उसे यह ध्यान रखना होगा की किया गया दावा उचित हो हानि से बड़ा दावा नहीं करना चाहिए।

---

**बोध प्रश्न - 1**

(i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का उपयोग कीजिये।

(ii) इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

1. उपभोक्ता का अर्थ बताइए।

---

---

---

---

2. उपभोक्ता शिक्षा के लाभों को स्पष्ट कीजिये।

---

---

---

---

## 1.5 उपभोक्ता संरक्षण की अवधारणा

उपभोक्ताओं को उत्पादकों एवं विक्रेताओं के अनुचित व्यवहारों से बचाना उपभोक्ता संरक्षण कहलाता है। इसके माध्यम से न केवल उपभोक्ताओं को उनके अधिकारों एवं उत्तरदायित्व के बारे में शिक्षित किया जाता है अपितु उनकी शिकायतों का निवारण भी किया जाता है। मान लीजिए आप किसी दुकान पर खाना पकाने का तेल खरीदने गये। दुकानदार आपसे कहता है कि तेल बंद टिन या डिब्बे में उपलब्ध है। आप आश्वस्त होना चाहते हैं कि तेल मिलावटी तो नहीं है, अर्थात् उसमें कोई घटिया हानिकारक तेल तो नहीं मिलाया गया। अब दुकानदार आपको लेबल पर उत्पाद का नाम दिखायेगा और कहेगा कि यह जानी-मानी कम्पनी है, जो कभी भी अशुद्ध और घटिया चीजों की आपूर्ति नहीं करती। आप उस तेल का प्रयोग करते हैं और उसे 'खाकर बीमार पड़ जाते हैं। अब क्या आप दुकानदार के पास जाकर तेल को लौटा सकते हैं? नहीं, अब वह खुले टिन में थोड़ा-बहुत इस्तेमाल हो चुका तेल वापस नहीं लेगा।

से हुई होगी। तो अब आप यही कर सकते हैं कि आगे उस लेबल का तेल इस्तेमाल करना बंद कर दें। लेकिन इस बात की क्या गारंटी है कि दूसरे ब्रांड के तेलों के साथ फिर यही समस्या आपके सामने नहीं आएगी?

उपभोक्ताओं को उनके अधिकारों के प्रति जागरूक करने तथा उन्हें कानूनी संरक्षण प्रदान करने के लिए उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 बनाया गया था। इसके अनुसार उपभोक्ता की परिभाषा निम्नलिखित है:-

1. कोई भी व्यक्ति जो प्रतिफल के बदले माल को क्रय करता है, इसमें क्रेता की स्वीकृति से माल का उपयोगकर्ता भी शामिल है, परन्तु इसमें ऐसा व्यक्ति शामिल नहीं है जो माल को पुनः विक्रय के लिए खरीदता है।
2. कोई भी व्यक्ति जो प्रतिफल के बदले सेवा को किराये पर लेता है। इसमें सेवाओं का लाभग्राही भी शामिल है, परन्तु इसमें ऐसा व्यक्ति शामिल नहीं है जो सेवा को वाणिज्यिक उद्देश्य से प्राप्त करता है

---

## 1.6 उपभोक्ता संरक्षण का महत्व

---

उपभोक्ता सुरक्षा का महत्व निम्न घटकों द्वारा समझा जा सकता है-

### 1.6.1 उपभोक्ताओं के दृष्टिकोण से महत्व:

---

1. यह उपभोक्ताओं को उनके अधिकारों एवं कर्तव्यों से सम्बन्धित सूचनाएं प्रदान करता है।
2. जो उपभोक्ता विभिन्न एजेन्सियों से सहायता चाहते हैं, उन्हें सहायता मिलती है।
3. बहुत से उपभोक्ताओं का उत्पादकों द्वारा शोषण किया जाता है। उपभोक्ता संरक्षण उपभोक्ताओं को गलत व्यापार व्यवहारों से सुरक्षा दिलाता है।
4. कभी-कभी उद्योगों के शोर एवं गन्दगी से उपभोक्ताओं के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है। उपभोक्ता संरक्षण से उपभोक्ताओं को इस दिशा में काफी लाभ पहुँचता है।

5. उपभोक्ताओं में व्यापक रूप से अपने अधिकारों की अज्ञानता एवं उनको प्राप्त सहायता को ध्यान में रखते हुए उनको इन सबके संबंध में शिक्षा देना आवश्यक हो जाता है जिससे कि उनमें जागरुकता पैदा हो।
6. उपभोक्ताओं को उपभोक्ता संगठन के रूप में संगठित हो जाना चाहिए जो उनके हितों का ध्यान रखेंगे। यद्यपि भारत में इस दिशा में कार्यरत उपभोक्ता संगठन हैं लेकिन जब तक यह संगठन उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा करने एवं उनके प्रवर्तन के लिए पर्याप्त सक्षम न हो जाएँ उन्हें संरक्षण की आवश्यकता है।
7. उपभोक्ताओं का दोषपूर्ण एवं असुरक्षित वस्तुओं में मिलावट, झूठा एवं गुमराह करने वाला विज्ञापन, जमाखोरी, कालाबाजारी जैसे झूठे, शोषण करने वाले एवं अनुचित व्यापार व्यवहार के द्वारा शोषण किया जा सकता है। उपभोक्ताओं का विक्रेताओं की इन गलत तरीकों के विरुद्ध संरक्षण की आवश्यकता है।

### 1.6.2 व्यवसाय के दृष्टिकोण से महत्व:

1. व्यवसाय का सामाजिक उत्तरदायित्व, ग्राहकों को अच्छी किस्म की वस्तुएं उचित मूल्य पर प्रदान करके सम्पन्न किया जा सकता है। उपभोक्ता संरक्षण इसमें सहायक की भूमिका निभाता है।
2. व्यवसाय अपने उपभोक्ताओं को अच्छी किस्म की वस्तुएं प्रदान करके, संतुष्ट करता है। इससे उपभोक्ता दीर्घकाल तक व्यवसाय से जुड़े रहते हैं, यह व्यवसाय के लिए भी लाभदायक होता है।
3. यदि व्यवसाय अनैतिक व्यापार में संलग्न होता है तो सरकार उसमें हस्तक्षेप करती है, जिससे व्यवसाय की प्रतिष्ठा भी खराब हो जाती है।
4. व्यवसायिक उपक्रमों को नैतिक रूप से ईमानदार रहने की प्रेरणा मिलती है, जिससे लोगों को अच्छी किस्म की वस्तुएं मिल सके।
5. आज का जागरूक व्यवसायी यह भली-भाँति समझता है कि उपभोक्ता की संतुष्टि दीर्घ अवधि में उन्हीं के हित में है। ग्राहक यदि संतुष्ट है तो वह न केवल बार-बार माल खरीदेगा बल्कि

संभावित ग्राहकों के लिए भी प्रतिपोषक का कार्य करेगा जिससे व्यवसाय के ग्राहकों की संख्या में वृद्धि होगी। इसीलिए व्यावसायिक फर्मों को ग्राहक की संतुष्टि के द्वारा लम्बी अवधि में अधिकतम लाभ प्राप्त करने का लक्ष्य सामने रखना चाहिए।

6. यदि कोई व्यवसाय शोषण करने वाला व्यापार कर रहा है तो सरकारी हस्तक्षेप एवं कार्यवाही होना आवश्यक है।
7. समाज के अधिकार क्षेत्र में आने वाले संसाधनों का उपयोग व्यावसायिक संगठन के द्वारा किया जाता है। इसीलिए जनता के हित में होने वाले उत्पादों की आपूर्ति एवं उन सेवाओं को प्रदान करने का दायित्व उन व्यावसायिक संगठनों पर है।

---

## 1.7 उपभोक्ता संरक्षण से सम्बंधित कानून

---

सामाजिक और आर्थिक विकास के प्रयत्नों में आज उपभोक्ताओं के हितों का संरक्षण करना तथा उत्पादकों के दूषित व्यवहारों से उपभोक्ताओं की रक्षा करना सरकार का प्रमुख दायित्व है। उपभोक्ता संरक्षण एक ऐसा आन्दोलन है जो उपभोक्ताओं को अपने अधिकारों के प्रति जागरूक बनाता है तथा सरकार को ऐसे कानून और नियम बनाने की प्रेरणा देता है जिनकी सहायता से उपभोक्ताओं को तरह- तरह की सुरक्षाएँ दी जा सकें। वास्तव में उपभोक्तावाद का विकास सबसे पहले अमरीका में आरम्भ हुआ था। फलस्वरूप अमरीका में ही सबसे पहले सन् 1960 में उपभोक्ता संरक्षण एक आन्दोलन के रूप में आरम्भ हुआ। अमरीका में उपभोक्ताओं को विभिन्न प्रकार की सुरक्षाएं देने का काम 'लेटर बिजनेस ब्यूरोज' तथा 'अमेरिकन ट्रेड एसोसियेशन' द्वारा किया जा रहा है। इसके बाद इंग्लैण्ड में सन् 1973 में एक 'फेयर ट्रेडिंग एक्ट' (Fair Trading Act) पास हुआ जिसके द्वारा उपभोक्ताओं को संरक्षण दिया जाने लगा। इसी तरह कनाडा, डेनमार्क, जर्मनी, फ्रान्स, न्यूजीलैण्ड, नावें, बेल्जियम, स्वीडन और जापान तथा अनेक दूसरे देशों में भी उपभोक्ताओं को सुरक्षा देने के लिए अनेक कानून बनाये गये।

भारत में उपभोक्तावाद का वर्तमान रूप नया है लेकिन बहुत प्राचीनकाल से ही यहाँ उपभोक्ताओं के हितों के संरक्षण का उल्लेख मिलता है। कौटिल्य के 'अर्थशास्त्र' में राजा के लिए यह स्पष्ट निर्देश

दिया गया था कि माप-तौल में किसी भी तरह की गड़बड़ी के लिए दोषी व्यक्ति को शासन द्वारा कठोर दण्ड दिया जाय। स्वतन्त्रता से पहले ब्रिटिश शासन के अन्तर्गत भारत में कृषि उत्पादन के श्रेणीकरण, वस्तुओं के विपणन तथा सौन्दर्य प्रसाधनों की गुणवत्ता से सम्बन्धित कुछ कानून बनाये गये लेकिन उनके क्रियान्वयन पर कोई ध्यान नहीं दिया गया। स्वतन्त्रता के बाद सरकार द्वारा यह महसूस किया जाने लगा कि उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा करना राज्य का दायित्व है। इसके फलस्वरूप वस्तुओं और सेवाओं से सम्बन्धित अनेक महत्वपूर्ण अधिनियम पारित हुए। इनमें निम्नांकित अधिनियम महत्वपूर्ण हैं-

- i. **प्रंसविदा अधिनियम, 1982-** यह अधिनियम शर्तें निर्धारित करता है जिनके अनुसार किसी अनुबंध के पक्षों में जो वायदे किए हैं उनको पूरा करने के लिए वे बाध्य होंगे। यह अधिनियम अनुबंध को तोड़ने पर इससे जुड़े पक्षों को उपलब्ध प्रतिकार का निर्धारण करता है।
- ii. **वस्तु विक्रय अधिनियम, 1930-** यह अधिनियम क्रेताओं को उस स्थिति में कुछ संरक्षण प्रदान करता है जबकि उन्होंने जो वस्तुएँ खरीदी हैं वह घोषित अथवा गर्भित शर्त अथवा आश्वासन के अनुरूप न हों।
- iii. **आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955-** यह अधिनियम आवश्यक वस्तुओं के उत्पादन, आपूर्ति एवं वितरण पर नियंत्रण, इनके मूल्यों की वृद्धि की प्रवृत्ति को रोकने तथा इनके समान वितरण को सुनिश्चित करता है। इस कानून में अनुचित लाभ कमाने वाले जमाखोर एवं कालाबाजारियों की समाजविरोधी कार्यवाहियों के विरुद्ध कार्यवाही करने का भी प्रावधान है।
- iv. **कृषि उत्पाद; (श्रेणीकरण एवं चिन्हांकन) अधिनियम, 1937-** यह अधिनियम कृषि उत्पादों एवं पशुओं के लिए उत्पादों की श्रेणियों के मानक निर्धारित करता है। यह मानकों के उपयोग को शासित करने के लिए शर्तें तय करता है तथा कृषि उत्पादों के श्रेणीकरण, चिन्हांकन एवं पैकिंग के लिए प्रक्रिया भी तय करता है। इस अधिनियम के अंतर्गत जो गुणवत्ता का चिन्ह निर्धारित किया है

उसे 'एगमार्क' कहते हैं जो कि कृषि विपणन का एक संक्षिप्त नाम है।

- v. **खाद्य मिलावट अवरोध अधिनियम, 1954-** यह अधिनियम खाद्य पदार्थों में मिलावट पर अंकुश लगाता है एवं जनसाधारण के स्वास्थ्य के हित में शुद्धता सुनिश्चित करता है।
- vi. **माप तौल मानक अधिनियम, 1976-** इस अधिनियम की धाराएँ उन वस्तुओं पर लागू नहीं होती हैं जिनका वजन, माप, संख्यानुसार विक्रय अथवा वितरण किया जाता है। यह उपभोक्ताओं को कम तौलने अथवा मापने के अनुचित आचरण के विरुद्ध संरक्षण प्रदान करता है।
- vii. **ट्रेड मार्क अधिनियम, 1999-** इस अधिनियम ने व्यापार एवं वाणिज्य चिन्ह अधिनियम 1958 को समाप्त कर उसका स्थान ले लिया है। यह अधिनियम उत्पादों पर धोखा-धड़ी वाले चिन्ह के उपयोग पर रोक लगाता है। इस प्रकार से उपभोक्ताओं को ऐसे उत्पादों से संरक्षण प्रदान करता है।
- viii. **प्रतियोगिता अधिनियम, 2002-** यह अधिनियम एकाधिकार एवं प्रतिरोध व्यापार व्यवहार अधिनियम, 1969 को भंग कर उसका स्थानापन्न करता है। यह अधिनियम व्यावसायिक इकाइयों द्वारा बाजार में प्रतियोगिता में अड़चनें डालने वाले कार्य करने पर उपभोक्ताओं को संरक्षण प्रदान करता है।

#### 1.7.9 भारतीय मानक ब्यूरो अधिनियम, 1986 -

इस अधिनियम के अंतर्गत भारतीय मानक ब्यूरो की स्थापना की गई है। ब्यूरो की दो मुख्य क्रियाएँ हैं- वस्तुओं के लिए गुणवत्ता मानक निश्चित करना एवं बी.आई.एस. प्रमाणीकरण योजना के माध्यम से उनका प्रमाणीकरण करना। निर्माता अपने उत्पादों पर आई.एस.आई. (ISI) चिन्ह तभी प्रयोग कर सकते हैं जबकि यह सुनिश्चित कर लिया जाए कि वस्तुएँ निर्धारित गुणवत्ता के मानकों के अनुरूप हैं। ब्यूरो ने एक शिकायत प्रकोष्ठ की भी स्थापना की है जहाँ उपभोक्ता उन वस्तुओं की गुणवत्ता की शिकायत कर सकते हैं जिन पर आई.एस.आई.

(ISI) चिन्ह है। इन सभी कानूनों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम है जिसमें उपभोक्ता के छः अधिकारों का प्रावधान है तथा उपभोक्ताओं को क्रय की गई वस्तुओं एवं लाभ उठाई गई सेवाओं में यदि कोई कमी है तो उसकी शिकायत को दूर करने में सहायता करता है।

### **उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 (The Consumer Protection Act, 1986):**

उपभोक्ताओं के हितों का संरक्षण करने के लिए जो अधिनियम बनाये गये, उनमें उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। इस अधिनियम के विभिन्न प्रावधान 1 जुलाई, 1987 से लागू हुए। उपभोक्ताओं की विभिन्न आवश्यकताओं को देखते हुए सन 1991 और 1993 में इस अधिनियम में दो बार संशोधन किया गया। अधिनियम को अधिक से अधिक प्रभावी बनाने के लिए भारत सरकार द्वारा दिसम्बर, 2002 में इसमें एक व्यापक संशोधन किया गया जिसे 15 मार्च, 2003 से लागू कर दिया गया। उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 को भारत के राष्ट्रपति द्वारा सबसे पहले 24 दिसम्बर, 1986 को स्वीकृति देने के कारण भारत में 24 दिसम्बर को 'राष्ट्रीय उपभोक्ता दिवस' के रूप में मनाया जाता है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक वर्ष 15 मार्च को विश्व उपभोक्ता दिवस के रूप में मनाया जाता है।

#### **1.7.10.1 उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 की विशेषताएँ -**

इस अधिनियम की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं-

1. यह सभी वस्तुओं और सेवाओं पर लागू होता है जब तक कि केंद्र सरकार द्वारा विशिष्ट रूप से छूट प्रदान न की गई हो;
2. इसमें सभी निजी, सार्वजनिक और सहकारी क्षेत्र आते हैं;
3. यह एक अतिरिक्त समाधान उपलब्ध कराता है;
4. इस अधिनियम के प्रावधान प्रतिपूरक प्रकृति के हैं;
5. इसमें ऐसे न्यायनिर्णय प्राधिकारी उपलब्ध कराने का प्रावधान है जो सरल, त्वरित और किफायती है;



6. इसमें राष्ट्रीय, राज्य और जिला स्तरों पर उपभोक्ता संरक्षण परिषदों की स्थापना का प्रावधान भी है। उपभोक्ताओं को शीघ्र और सस्ता न्याय दिलाने के लिए उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के अंतर्गत राष्ट्रीय, राज्य तथा जिला स्तरों पर अर्द्ध-न्यायिक तन्त्र की स्थापना की गयी है। राष्ट्रीय स्तर पर राष्ट्रीय आयोग का गठन किया गया है जिसे 20 लाख से ऊपर की क्षति के लिए क्षतिपूर्ति संबंधी निर्णय देने की शक्ति प्राप्त है। राज्य स्तर पर राज्य आयोग का गठन किया गया है, यह उपभोक्ताओं के 5 लाख रुपये तक के दावे के संबंध में निर्णय दे सकता है। जिला स्तर पर उपभोक्ता संरक्षण फोरमों की रचना की गयी है, इसे 5 लाख रुपये तक की राशि के दावे के संबंध में निर्णय देने की शक्ति होती है।

#### **1.7.11 उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 (The Consumer Protection Act, 2019):**

उपभोक्ता संरक्षण विधेयक, 2019 को लोकसभा ने 30 जुलाई, 2019 को और राज्यसभा ने 06 अगस्त, 2019 को पारित किया है। यह विधेयक संसद में उपभोक्ता मामलों, खाद्य और सार्वजनिक वितरण मंत्री द्वारा पेश किया गया था। 20 जुलाई 2020 को उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 लागू किया गया। इस अधिनियम का उद्देश्य उपभोक्ताओं को सशक्त बनाना एवं उनके अधिकारों की रक्षा करने में मदद करना तथा उपभोक्ताओं की समस्याओं को समय पर हल करने के लिए प्रभावी प्रशासन और जरूरी प्राधिकरण की स्थापना करना। यह अधिनियम उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 की तुलना में अधिक प्रभावी है एवं इसमें कम समय में कार्यवाही करना सुनिश्चित किया गया है। पुराने अधिनियम में त्रिस्तरीय उपभोक्ता विवाद निवारण तंत्र (राष्ट्रीय, राज्य, जिला स्तर) की व्यवस्था मौजूद थी। **इस अधिनियम के अनुसार उपभोक्ता की परिभाषा:** उस व्यक्ति को उपभोक्ता कहा जाता है जो वस्तुओं और सेवाओं की खरीद और उपभोग अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए करता है। यहाँ पर यह जानना जरूरी है कि जो व्यक्ति वस्तुओं और सेवाओं को बेचने के लिए या वाणिज्यिक उद्देश्य के लिए खरीदता है उसे उपभोक्ता नहीं माना गया है।

##### **1.7.11.1 उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 की मुख्य विशेषताएं**

- यह अधिनियम केंद्रीय उपभोक्ता संरक्षण प्राधिकरण) Central Consumer Protection Authority-CCPA) केगठन का प्रस्ताव करता है।
  - उपभोक्ता संरक्षण परिषद
  - इसमें विवाद निपटान प्रक्रिया को आसान बनाया गया है
  - भ्रामक विज्ञापनों पर प्रतिबंध और जुर्माना
  - मध्यस्थता
  - ईकॉमर्स- और प्रत्यक्ष बिक्री )Direct Selling) सम्बन्धी नियम
- इसके अतिरिक्त कुछ अधिनियम निम्न प्रकार से कई हैं-

1. औद्योगिक विकास एवं नियमन अधिनियम, 1951
2. औषधि नियन्त्रण अधिनियम, 1954
3. खाद्य अपमिश्रण रोकथाम अधिनियम, 1954
4. आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955
5. मानक नाप-तौल अधिनियम, 1956
6. व्यापार एवं व्यापारिक चिन्ह अधिनियम, 1958
7. कालाबाजारी की रोकथाम तथा आवश्यक वस्तुओं की आपूर्ति एवं रख-रखाव अधिनियम, 1980

---

## 1.8 सारांश

---

उपभोक्ताओं का हित सुरक्षित करने के लिए यह महसूस किया गया कि वस्तुओं और सेवाओं के विक्रेता की मनमानी से आम आदमी को बचाने के लिए और उसकी मदद के लिए कुछ उपाय आवश्यक हैं। उपभोक्ता संरक्षण का अर्थ है, व्यापार से जुड़ी अनियमितताओं से आम उपभोक्ता के हित की रक्षा के लिए उठाये जाने वाले कदम या आवश्यक उपाय। उपभोक्तावाद की तरह इसे भी एक आंदोलन माना जा सकता है। ये सब प्राथमिक बातें हैं क्योंकि हर व्यापारी अधिक से अधिक लाभ कमाना चाहता है और यह अक्सर उपभोक्ताओं के खर्च की कीमत पर ही

होता है।

---

## 1.9 शब्दावली

---

**उपभोक्ता** - उपभोक्ता वे लोग हैं जो वस्तुएं या सेवाएं खरीदते और उपयोग करते हैं। उपभोक्ताओं को उनके द्वारा उपयोग में लायी जाने वाली किसी भी सेवा या सामान के लिए शिकायत दर्ज करने का अधिकार है

**उपभोक्ता संरक्षण** - उपभोक्ता संरक्षण एक प्रकार का सरकारी नियंत्रण है जो उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा करता है।

---

## 1.10 सन्दर्भ सूची

---

1. <https://www.drishtiias.com/hindi/pdf/1595342684-consumer-protection-act-2019.pdf>
2. <https://consumeraffairs.nic.in/hi/acts-and-rules/consumer-protection/the-consumer-protection-act-1986>
3. chrome-extension://efaidnbmnnnibpcajpcglclefindmkaj/https://ncert.nic.in/ncerts/l/lhbs212.pdf
4. Gurbax Singh 1993 : Law of Consumer Protection, Bharat Law Publication, Jaipur.
5. P.K. Ma-jumdar, 1995: Law of Consumer Protection in India, Orient Publishing Company, New Delhi.
6. S.S. Gulshan, 1994: Consumer Protection and Satisfaction: Legal and Managerial Dimensions, Eastern Usiley, New Delhi.

---

### बोध प्रश्न - 2

---

#### टिप्पणी

- (i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का उपयोग कीजिये।

(ii) इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

1. उपभोक्ता संरक्षण की अवधारणा को स्पष्ट कीजिये।

---

---

---

---

2. उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 की विशेषताओं का उल्लेख कीजिये।

---

---

---

---

---

### 1.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

---

#### बोध प्रश्न - 1

1. एक उपभोक्ता वह होता है जो निर्णय लेने वाला होता है स्टोर पर कोई खरीदना है या नहीं। एक उपभोक्ता वह होता है जो अपनी जरूरत के लिए उत्पाद खरीदते हैं उसका उपयोग करते हैं। एक उपभोक्ता वस्तु का पुनः विक्रय नहीं कर सकता है लेकिन अपने के लिए इसका उपयोग कर सकता है। उत्पाद या सेवाओं को खरीदने वाले खरीददार के अलावा कोई भी व्यक्ति उसकी अनुमति लेकर उत्पादन का उपयोग कर सकता है उसे उपभोक्ता के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। सरल शब्दों में वस्तुओं या सेवाओं के अंतिम उपयोगकर्ता को उपभोक्ता कहा जाता है।

#### 2. उपभोक्ता शिक्षा के लाभ

उपभोक्ता शिक्षा के निम्नलिखित लाभ हैं:-

1. इससे उपभोक्ता का सही वस्तु खरीदने का विकास होता है।

2. उपभोक्ता सुरक्षित विश्वसनीय और उच्च गुणवत्ता वाली वस्तुओं की सही मूल्य की मांग करता है।
3. उपभोक्ता हानिकारक वस्तुओं के उपभोग से अपने आप को बचा सकता है।
4. उपभोक्ता अपनी समस्या का उचित समाधान ढूँढने में सक्षम होता है।
5. उपभोक्ता शिक्षा उन्हें ऐसे बेईमान व्यापारियों एवं उत्पादनकर्ताओं द्वारा अपनाये जाने वाली वे विधियाँ जिनके द्वारा वह उपभोक्ताओं को धोखा देने के लिए बाजार के व्यवहार को तोड़ मरोड़ करने का प्रयत्न करता है, से अवगत कराती है।
6. उपभोक्ता यदि शिक्षित है तो शिकायत करते समय उन्हें अपने द्वारा अपनाई जाने वाली सभी प्रक्रियाओं की पहले से जानकारी होती है।

## बोध प्रश्न - 2

---

1. उपभोक्ताओं को उत्पादकों एवं विक्रेताओं के अनुचित व्यवहारों से बचाना उपभोक्ता संरक्षण कहलाता है। इसके माध्यम से न केवल उपभोक्ताओं को उनके अधिकारों एवं उत्तरदायित्व के बारे में शिक्षित किया जाता है अपितु उनकी शिकायतों का निवारण भी किया जाता है। उपभोक्ताओं को उनके अधिकारों के प्रति जागरूक करने तथा उन्हें कानूनी संरक्षण प्रदान करने के लिए उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 बनाया गया था।

### 2. उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 की विशेषताएँ -

इस अधिनियम की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं-

1. यह सभी वस्तुओं और सेवाओं पर लागू होता है जब तक कि केंद्र सरकार द्वारा विशिष्ट रूप से छूट प्रदान न की गई हो;
2. इसमें सभी क्षेत्र - निजी, सार्वजनिक और सहकारी - आते हैं;
3. यह एक अतिरिक्त समाधान उपलब्ध कराता है;

4. इस अधिनियम के प्रावधान प्रतिपूरक प्रकृति के हैं;
5. इसमें ऐसे न्यायनिर्णय प्राधिकारी उपलब्ध कराने का प्रावधान है जो सरल, त्वरित और किफायती है;
6. इसमें राष्ट्रीय, राज्य और जिला स्तरों पर उपभोक्ता संरक्षण परिषदों की स्थापना का प्रावधान भी है। उपभोक्ताओं को शीघ्र और सस्ता न्याय दिलाने के लिए उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के अंतर्गत राष्ट्रीय, राज्य तथा जिला स्तरों पर अर्द्ध-न्यायिक तन्त्र की स्थापना की गयी है। राष्ट्रीय स्तर पर राष्ट्रीय आयोग का गठन किया गया है

## इकाई की रूपरेखा

- 1.0 इकाई का उद्देश्य
- 1.1 असंगठित क्षेत्र का अर्थ
- 1.2 असंगठित क्षेत्र के लिए कल्याणकारी उपाय
- 1.3 असंगठित श्रमिक
- 1.4 असंगठित श्रमिकों की वर्तमान स्थिति
- 1.5 भारत में असंगठित अर्थव्यवस्था की स्थिति
- 1.6 असंगठित क्षेत्र से सम्बंधित श्रमिकों की चुनौतियाँ
- 1.7 असंगठित मजदूरों के अधिकार
- 1.8 असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों के लिए व्यापक कानून
- 1.9 सारांश
- 1.10 शब्दावली
- 1.11 सन्दर्भ सूची
- 1.12 बोध प्रश्न

---

## 1.0 इकाई का उद्देश्य

---

भारत में असंगठित मजदूरों के रूप में अवशिष्ट क्षेत्र में कौशल के साथ काम करने वाले 43.7 करोड़ लोग शामिल हैं। लगभग 24.6 करोड़ कृषि में, 4.4 करोड़ निर्माण में और शेष लोग विनिर्माण और सेवा क्षेत्रों में संलग्न हैं। यह क्षेत्र रोजगार, पारिश्रमिक पैटर्न, खराब नियोजन और कर्मचारी संबंध और आकस्मिक कार्य संस्कृति पर नियमों में कमियों का सामना करता है। अनौपचारिक क्षेत्र ग्रामीण श्रमिकों की बड़ी संख्या और शहरी क्षेत्रों से बड़ी संख्या में संभावित पारिवारिक श्रम और प्रौद्योगिकी को शामिल करता है। असंगठित मजदूर आकस्मिक, मौसमी और छिटपुट रोजगारों में संलग्न हैं, जो संघबद्ध नहीं हैं। असंगठित क्षेत्र से संबंधित मुद्दों को संबोधित करने वाली बड़ी संख्या में कानून न तो व्यवहार्य हैं

और न ही व्यावहारिक। असंगठित श्रमिकों को भारत में वृद्धावस्था पेंशन, ग्रेच्युटी, कर्मचारी राज्य बीमा, कामगारों के मुआवजे आदि जैसे सामाजिक सुरक्षा लाभों से भी दूर रखा जाता है। असंगठित क्षेत्र भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। असंगठित क्षेत्रों के लिए श्रम कानूनों के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए मौजूदा रोजगार संबंधों का अध्ययन करना आवश्यक है, भारत में असंगठित श्रमिकों की मौजूदा कामकाजी परिस्थितियों का विश्लेषण करने के बाद विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। इस अध्याय में विद्यार्थी असंगठित क्षेत्र एवं असंगठित श्रमिकों के बारे में जानेंगे। इस अध्याय में भारत सरकार द्वारा असंगठित श्रमिकों के स्थिति में सुधार लाने एवं उनके कल्याण के लिए बने गई योजनाओं पर भी चर्चा की गई है। जिससे विद्यार्थी भारत में असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों की समस्याओं एवं चुनौतियों को समझ सकेंगे।

असंगठित श्रमिकों की स्थिति और उनके बारे में इस अध्याय में चर्चा करने से पहले यहाँ पर हम लोग असंगठित क्षेत्र की भी चर्चा कर लेते हैं

---

## 1.1 असंगठित क्षेत्र का अर्थ

---

असंगठित क्षेत्र का तात्पर्य ऐसे क्षेत्र से होता है जहाँ पर लोग अस्थायी रूप से कार्य करते हैं और उनके कार्य ज्यादा लंबी अवधि के लिए नहीं होते हैं या उनके स्वरोजगार भी इसमें आते हैं, जैसे सब्जी बेचना, घरेलू कामगार, सफाई कर्मचारी, बोझ ढोने वाले, मछुआरे, नाई, फल विक्रेता, न्यूज़ पेपर विक्रेता आदि। अर्थात् वे मजदूर या श्रमिक जो अस्थायी रूप से रोजगार करते हैं और जानकारी की कमी व अशिक्षा के कारण कहीं भी संगठित रूप से जुड़ नहीं पाते हैं या कार्य नहीं कर पाते हैं।

असंगठित क्षेत्र में वो व्यवसाय आते हैं जो की किसी भी सरकारी क्षेत्र में पंजीकृत नहीं होते हैं और उनके बनाए नियमों निर्देशों और विनियमों का पालन भी नहीं करते हैं अर्थात् ऐसे व्यवसाय जो कि स्वयं के द्वारा चलाए जाते हैं इसमें सरकार का कोई भी हस्तक्षेप नहीं होता है वे असंगठित क्षेत्र में आते हैं।



असंगठित क्षेत्र में रोजगार की कोई सुरक्षा नहीं है जहां कोई भुगतान नहीं मिलता किसी तरह की सुविधा नहीं मिलती और ना ही सेवा निवृत्त होने पर पेंशन प्राप्त होती है भविष्य निधि जीवन बीमा स्वास्थ्य बीमा और ऐसा कोई भी फायदा नहीं मिलता है यहां काम अनिर्धारित होता है अर्थात आप जितने भी घंटे काम कर सकते हैं और आपके कार्य के सुरक्षित वातावरण की भी कोई गारंटी नहीं होती है। अनौपचारिक या वह क्षेत्र जो संगठित नहीं है से जुड़े रोजगारों या कार्यों का एक बहुत बड़ा बहुमत भारत की अर्थव्यवस्था की एक विशेषता भी है। आर्थिक सर्वेक्षण 2007-8 के अनुसार भारत में कार्य करने वाले 93% स्वरोजगार और रोजगार रथ कर्मचारियों की संख्या असंगठित क्षेत्र में जुड़ी थी, जिसमें से 60% केवल कृषि क्षेत्र से संबंधित थी।

भारत सरकार के श्रम मंत्रालय को असंगठित श्रम बल के अनुसार व्यवसाय, रोजगार की प्रकृति, विशेष रूप से व्यथित श्रेणियां और सेवा श्रेणियां के मामले में चार भागों में बांटा गया है वह भाग निम्नलिखित हैं

- 1. व्यवसाय के संदर्भ में:** भूमिहीन खेतिहर मजदूर हिस्सा साझा करने वाले मछली पकड़ने वाले जानवर पालने वाले बीड़ी श्रमिक ईंट के भट्टों पर काम करने वाले खदानों में काम करने वाले सामानों की पैकिंग करने वाले निर्माण करने वाले आधारभूत संरचनाओं में कार्यरत चमड़े के कर्मचारी बुनकर कारीगर नामक मजदूर छोटे और सीमांत किसान तेल मिलों में काम करने वाले आदि मजदूरों को इस कार्य की श्रेणी में रखा गया है।
- 2. रोजगार की प्रकृति के संदर्भ में:** इसमें संलग्न खेतिहर मजदूर बंधुआ मजदूर प्रवासी मजदूर दिहाड़ी मजदूर अनुबंधी आदि मजदूर इस श्रेणी में आते हैं।
- 3. विशेष व्यथित श्रेणियों के संदर्भ में:** इसमें ताड़ी बनाने वाले सफाई कर्मी बोझाड़ होने वाले पशु चलित वाहन वाले मजदूर आते हैं।
- 4. सेवा श्रेणियां के संदर्भ में:** घरेलू कामगार मछुआरे और महिलाएं नई सब्जी बेचने वाले फल बेचने वाले न्यूजपेपर बेचने वाले आदि मजदूर इस श्रेणी के अंतर्गत आते हैं।

## 1.2 असंगठित क्षेत्र के लिए कल्याणकारी उपाय

हमारे देश के श्रम और रोजगार मंत्रालय ने असंगठित क्षेत्र में कार्य करने वाले बुनकरों हाथ करघा श्रमिकों मछुआरा या मछली पालन करने वालों दाढ़ी निकालने वालों चमड़ा कार्यकर्ताओं वृक्षारोपण मजदूर बीड़ी श्रमिकों के कल्याण सुनिश्चित करने के लिए एक श्रमिक सामाजिक सुरक्षा अधिनियम 2008 अधिनियमित किया। यह अधिनियम राष्ट्रीय सामाजिक सुरक्षा बोर्ड के एक संविधान को उपलब्ध कराता है जो की सामाजिक सुरक्षा की योजनाओं के निर्माण जीवन और विकलांगता कर स्वास्थ्य और मातृत्व लाभ वृद्धावस्था सुरक्षा और कोई भी अन्य लाभ जो असंगठित श्रमिकों के लिए सरकार के द्वारा निर्धारित किया गया हो के लिए अपनी अनुशंसाएं देता है। जिसके अनुसार मंत्रालय ने इन असंगठित मजदूरों के लिए एक राष्ट्रीय सामाजिक सुरक्षा बोर्ड का गठन किया है।

## 1.3 असंगठित श्रमिक

इसमें सर्वप्रथम एक मजदूर के बारे में चर्चा करते हैं एक मजदूर वह होता है जो मुख्य रूप से शारीरिक श्रम प्रदान करता है, इन्हें श्रमिक मजदूर या कामगार या दिहाड़ी मजदूर आदि कहा जाता है। यह मुख्य रूप से खेती करने में निर्माण के कामों में जैसे घर बनाना सड़क बनाना पुल बनाना रेलगाड़ी की पटरिया बनाना और कारखाने में काम करते हैं। इनके पास देने के लिए केवल श्रम ही होता है क्योंकि ना तो यह पढ़े लिखे होते हैं और ना ही इन्हें कुछ दूसरा काम आता है। यह मुहता कुछ औजारों का इस्तेमाल करते हैं जो की हैं फावड़ा कुदाल हाथ की औजार तोड़ने वाले औजार हंसिया शक्तिचालित औजार आदि। मजदूर मुख्य रूप से दूसरों के सहायक के रूप में कार्य करते हैं जैसे यदि कोई घर बन रहा है तो राजगीरों के साथ कार्य करते हैं उन्हें ईंट पकड़ाना, गारा तैयार करना, सीमेंट तैयार करना आदि, जो जो राजमिस्त्री बताता है वह काम यह करते जाते हैं।

महात्मा गाँधी के अनुसार : "मजदूर को यह महसूस करना होगा कि श्रम भी पूंजी है। जैसे ही मजदूरों को ठीक से शिक्षित और संगठित किया जाता है और उन्हें अपनी ताकत का एहसास होता है, कोई भी पूंजी उन्हें

वश में नहीं कर सकती है। संगठित और प्रबुद्ध श्रमिक अपनी शर्तें खुद तय कर सकते हैं। किसी पार्टी के खिलाफ प्रतिशोध लेने का कोई फायदा नहीं है क्योंकि हम कमजोर हैं। हमें मजबूत बनना होगा। मजबूत हृदय, प्रबुद्ध दिमाग और इच्छुक हाथ सभी बाधाओं को दूर कर सकते हैं।”

असंगठित श्रमिक शब्द को असंगठित श्रमिक सामाजिक सुरक्षा अधिनियम, 2008 के तहत परिभाषित किया गया है, असंगठित क्षेत्र में घर आधारित कार्यकर्ता, स्व-नियोजित कार्यकर्ता या मजदूरी कार्यकर्ता के रूप में और संगठित क्षेत्र में एक कार्यकर्ता शामिल है जो किसी भी कानून के अंतर्गत नहीं आता है। अधिनियम की अनुसूची-11 में उल्लिखित अधिनियमों में से अर्थात् कर्मचारी मुआवजा अधिनियम, 1923 (1923 का 3), औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 (1947 का 14), कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम, 1948 (1948 का 34), कर्मचारी भविष्य निधि और विविध प्रावधान अधिनियम, 1952 (1952 का 19), मातृत्व लाभ अधिनियम, 1961 (1961 का 53) और उपदान भुगतान अधिनियम, 1972 (1972 का 39)।

राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन द्वारा वर्ष 2011-12 में किए गए सर्वेक्षण के अनुसार, देश में संगठित और असंगठित दोनों क्षेत्रों में कुल रोजगार 47 करोड़ के क्रम का था। इसमें से लगभग 8 करोड़ संगठित क्षेत्र में और शेष 39 करोड़ असंगठित क्षेत्र में थे। असंगठित क्षेत्र के श्रमिक देश में कुल रोजगार का 90 प्रतिशत से अधिक हिस्सा हैं। बड़ी संख्या में असंगठित श्रमिक गृह आधारित हैं और बीड़ी रोलिंग, अगरबत्ती बनाने, पापड़ बनाने, सिलाई और कढ़ाई के काम जैसे व्यवसायों में लगे हुए हैं।

असंगठित मजदूर ग्रामीण क्षेत्रों व शहरी क्षेत्र दोनों में पाए जाते हैं और दोनों के कार्य कुछ इस प्रकार हैं ग्रामीण क्षेत्रों में इसके अंतर्गत भूमि खेतिहर मजदूर होते हैं छोटे और सीमांत किसान बटाईदार पशुओं का पालन करने वाले लोग मछली उद्योग बागवानी करने वाले मधुमक्खी पालन करने वाले ताड़ी निकलने वाले वनों में काम करने वाले श्रमिक वी ग्रामीण कारीगर आदि शामिल होते हैं। वहीं शहरी क्षेत्र में इसमें मुख्य रूप से निर्माण श्रमिक जैसे बढ़ई गिरी करने वाले, ट्रांसपोर्ट, संचार आदि में लगे शारीरिक श्रमिकों के साथ, गलियों में घूम घूम कर सामान बेचने

वाले होकर सिर पर सामान ढोने वाले मजदूर मोची टिन का कम करने वाले वस्त्र बनाने वाले आदि शामिल होते हैं।

भारत में, असंगठित श्रम का तात्पर्य श्रम शक्ति के उस विशाल खंड से है जो नियोजित विकास के छह दशकों के बाद भी असुरक्षित बना हुआ है। इसमें कृषि मजदूर शामिल हैं; ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में छोटे विनिर्माण और सेवाओं में कम वेतन वाला रोजगार; अनौपचारिक श्रम; हथकरघा और पावरलूम श्रमिक; बीड़ी और सिगार श्रमिक; स्वीपर और मैला ढोने वाले; और अन्य जैसे कूड़ा बीनने वाले, स्व-नियोजित और छोटे पेशेवर जैसे इलेक्ट्रीशियन, प्लंबर आदि। एक विकसित देश में श्रम बल की प्रकृति कई मायनों में भारत जैसे विकासशील देश से भिन्न होती है। विकसित देशों में, यह अधिक संगठित है और इस तरह के श्रमिक 'पालने से लेकर कब्र तक' सभी सामाजिक सुरक्षा लाभों का आनंद लेते हैं। श्रम बल भी उच्च शिक्षित और उत्पादक है। लेकिन भारत जैसे विकासशील देशों में श्रम शक्ति अत्यधिक असंगठित, अकुशल और असुरक्षित है। नतीजतन, कमाई, रोजगार के नियम और शर्तें और अन्य सामाजिक लाभ श्रम शक्ति के विशाल बहुमत के लिए उपलब्ध नहीं हैं जिन्हें असंगठित कहा जाता है।

श्रम मंत्रालय असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों की कुछ विशिष्ट श्रेणियों जैसे बीड़ी श्रमिकों, सिने श्रमिकों और कुछ गैर-कोयला खान श्रमिकों के लिए कल्याण कोष भी संचालित कर रहा है। धन का उपयोग श्रमिकों को स्वास्थ्य देखभाल, आवास, बच्चों के लिए शिक्षा सहायता, जल आपूर्ति आदि के क्षेत्र में विभिन्न प्रकार की कल्याणकारी गतिविधियों को प्रदान करने के लिए किया जाता है।

### बोध प्रश्न - 1

#### टिप्पणी

---

- (i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का उपयोग कीजिये।
- (ii) इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

### 3. असंगठित क्षेत्र का अर्थ बताइए।

4. असंगठित श्रमिक को परिभाषित कीजिये।

## 1.4 असंगठित श्रमिकों की वर्तमान स्थिति

सामाजिक श्रेणी विश्लेषण- ई-श्रम पोर्टल पर पंजीकृत 27.69 करोड़ असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों में से 94% से अधिक की मासिक आय 10,000 रुपए या उससे कम है और नामांकित कार्यबल का 74% से अधिक अनुसूचित जाति (SC) अनुसूचित जनजाति (ST) तथा अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC) से संबंधित है। सामान्य श्रेणी के श्रमिकों का अनुपात 25.56% है। प्राप्त आंकड़ों के अनुसार पंजीकृत असंगठित श्रमिकों में से 94.11% की मासिक आय 10,000 रुपए या उससे कम है ए, जबकि 4.36% की मासिक आय 10,001 - 15,000 रुपए के बीच है।

**1.4.1 आयु के आधार पर -** पोर्टल पर पंजीकृत श्रमिकों में 18 वर्ष से 40 वर्ष की आयु के 61.72% हैं, जबकि 40 वर्ष से 50 वर्ष की आयु के 22.12% हैं। 50 वर्ष से अधिक आयु के पंजीकृत श्रमिकों का अनुपात 13.23% है, जबकि 2.93% श्रमिक 16 से 18 वर्ष की आयु के बीच हैं।

**1.4.2 व्यवसाय के आधार पर -** कृषि क्षेत्र में सर्वाधिक 52.11% नामांकन है, इसके बाद घरेलू श्रमिकों ने 9.93% और निर्माण श्रमिकों ने 9.13% पर नामांकन किया है।

**1.4.3 लिंग के आधार पर-** पंजीकृत श्रमिकों में महिलाओं का प्रतिशत 52.81 हैं और पुरुष 47.19% हैं।

## 1.5 भारत की असंगठित अर्थव्यवस्था की स्थिति

असंगठित अर्थव्यवस्था उन उद्यमों का प्रतिनिधित्व करती है जो पंजीकृत नहीं हैं, जहां नियोक्ता कर्मचारियों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान नहीं करते हैं। भारत सहित कई विकासशील देशों में असंगठित क्षेत्र में धीमी गति से गिरावट आई है, जो शहरी गंदगी, गरीबी और बेरोज़गारी में सबसे अधिक स्पष्ट रूप से प्रकट होती है। पिछले दो दशकों में तेज़ी से आर्थिक विकास देखने के बावजूद भारत में 90% श्रमिक असंगठित क्षेत्र में कार्यरत हैं, जो सकल घरेलू उत्पाद (GDP) का लगभग आधा उत्पादन करते हैं।

आधिकारिक आवधिक श्रम बल सर्वेक्षण (PLFS) के आंकड़ों से पता चलता है कि 75% असंगठित श्रमिक स्व.नियोजित और आकस्मिक वेतनभोगी कर्मचारी हैं जिनकी औसत आय नियमित वेतनभोगी श्रमिकों की तुलना में कम है। भारत की आधिकारिक परिभाषा के साथ आईएलओ की व्यापक रूप से सहमत परिभाषा ;संगठित नौकरियों के रूप में कम-से-कम एक सामाजिक सुरक्षा लाभ प्रदान करने वाले . जैसे ईपीएफ को मिलाकर भारत में संगठित श्रमिकों की हिस्सेदारी केवल 9.7% (47.5 मिलियन) थी।

### 1.5 असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों से संबंधित चुनौतियाँ

श्रम संबंधी चुनौतियाँ- हालाँकि कार्यबल की बड़ी संख्या ग्रामीण क्षेत्र में कार्यरत है, असंगठित क्षेत्र में नियोजित शहरी कार्यबल एक बड़ी चुनौती है। जो निम्न प्रकार है-

- दीर्घावधिक कार्य घंटे, कम वेतन और कठिन कार्य परिस्थिति।
- निम्न रोज़गार सुरक्षाए नौकरी छोड़ने की उच्च दर और निम्न रोज़गार संतुष्टि।
- अपर्याप्त सामाजिक सुरक्षा विनियमन।
- अधिकारों का प्रयोग करने में कठिनाई।

- बाल श्रम एवं बलात श्रम और विभिन्न कारकों के आधार पर भेदभाव।
- असंरक्षित कम वेतन वाली और कम महत्व प्राप्त नौकरियाँ।

---

## 1.7 असंगठित मजदूरों के अधिकार

---

जैसा कि आप जानते हैं कि असंगठित मजदूर से मतलब है कि वह लोग जो अपने हितों को पूरा करने के लिए स्वयं को संगठित नहीं कर पाए हैं इसके अन्य कारण हो सकते हैं जैसे नौकरी की अनियमित प्रकृति, अशिक्षा होना, जानकारी ना होना व संस्थाओं की छोटी तथा बिखरी प्रकृति।

भारत सरकार ने बीड़ी मजदूर, गैर कोयला खानों में काम करने वाले मजदूर तथा अन्य मजदूरों के कल्याण कई कल्याणकारी योजना का निर्माण किया है। ऐसी योजनाओं में मजदूरों के बच्चों के शिक्षा, मनोरंजन, स्वास्थ्य सुविधाएं तथा गृह निर्माण का प्रावधान है। भवन एवं निर्माण श्रमिक अधिनियम 1996 के अंतर्गत भी प्रत्येक राज्य सरकार द्वारा निर्माण मजदूरों के कल्याण के लिए कल्याणकारी, सामाजिक सुरक्षा बोर्ड के निर्माण का प्रावधान किया गया है।

भारतीय संसद ने 2 दिसंबर को 2008 में एक संगठित क्षेत्र श्रमिक सामाजिक सुरक्षा अधिनियम 2008 पारित किया। जिसमें सामाजिक सुरक्षा संबंधी योजनाएं शामिल की गई। इसमें राज्यों को आदेश दिया गया है कि वह मजदूरों के भविष्य निधि, कार्य के दौरान चोट लगने पर क्षतिपूर्ति, निवास, बच्चों के शिक्षा, उनके कार्य कुशलता में बढ़ोतरी करना, मृत्यु के पश्चात दाह संस्कार सहायता तथा वृद्धावस्था में वृद्धालय आदि से संबंधित कल्याणकारी योजनाओं के निर्माण को तथा उनके बारे में सूचना जारी करें। यह अधिनियम प्रत्येक असंगठित मजदूरों की पहचान करता है। प्रत्येक मजदूर को एक अलग विशिष्ट सामाजिक सुरक्षा कार्ड प्रदान करता है। यह अधिनियम इन मजदूरों को कई सामाजिक सुरक्षाएं सुविधा प्रदान करता है जैसे कि स्वास्थ्य बीमा मातृत्व की सुविधा और पेंशन आदि की सुविधा जो कि इससे पहले इन श्रमिकों को नहीं मिलती थी। इसमें मुख्य रूप से केंद्र सरकार को न्यूनतम सुविधा तथा फंड प्रदान करने पर बाध्य किया जाता है। इसमें एक

भागीदारी के ढांचे का निर्माण किया गया है। एक ऐसा ढांचा जो सरकार के साथ मिलकर कार्य करता है और जिसमें नागरिक, समाज तथा अर्ध सरकारी समूह भी शामिल हैं। इस कानून के अंतर्गत जिन सामाजिक सुरक्षा स्कीमों को निहित किया गया है:

1. राष्ट्रीय वृद्धा आयु पेंशन स्कीम
2. राष्ट्रीय परिवार कल्याण स्कीम
3. राष्ट्रीय मातृत्व कल्याण स्कीम
4. महात्मा गांधी बुनकर बीमा योजना
5. हथकरघा बुनकरों के लिए स्वास्थ्य बीमा योजना
6. मास्टर कलाकृति कारों के लिए पेंशन योजना
7. सक्रिय मछली के लिए सामूहिक दुर्घटना बीमा योजना
8. मछली मारों के लिए बचत तथा राहत योजना
9. जनश्री बीमा योजना
10. आम आदमी बीमा योजना
11. स्वास्थ्य बीमा योजना

---

## 1.8 असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों के लिए व्यापक कानून

---

असंगठित क्षेत्र में श्रमिकों के कल्याण को सुनिश्चित करने के लिए, श्रम और रोजगार मंत्रालय ने असंगठित श्रमिक सामाजिक सुरक्षा अधिनियम, 2008 को अधिनियमित किया है। यह अधिनियम 16.05.2009 से लागू हुआ है। अधिनियम के तहत केंद्रीय नियम बनाए गए हैं।

अधिनियम की मुख्य विशेषताएं इस प्रकार हैं:

धारा (2) में असंगठित श्रमिक, स्व-नियोजित और मजदूरी कार्यकर्ता से संबंधित परिभाषाओं को शामिल किया गया है।

धारा 3(1) में असंगठित श्रमिकों के विभिन्न वर्गों के लिए केंद्र सरकार द्वारा योजनाओं के निर्माण का प्रावधान है, जो विभिन्न क्षेत्रों में होंगी-



- (a) जीवन और विकलांगता कवर;
- (b) स्वास्थ्य और मातृत्व लाभ;
- (c) वृद्धावस्था संरक्षण
- (d) कोई अन्य लाभ जो केंद्र सरकार द्वारा निर्धारित किया जा सकता है।

धारा 3(4) राज्य सरकारों द्वारा भविष्य निधि, रोजगार चोट लाभ, आवास, बच्चों के लिए शैक्षिक योजनाओं, कौशल उन्नयन, अंतिम संस्कार सहायता और वृद्धाश्रमों से संबंधित योजनाओं के निर्माण के लिए प्रदान करती है।

धारा 4 केंद्र सरकार द्वारा बनाई गई योजनाओं के वित्त पोषण से संबंधित है।

धारा 5 में केंद्रीय श्रम और रोजगार मंत्री की अध्यक्षता में राष्ट्रीय सामाजिक सुरक्षा बोर्ड के गठन की परिकल्पना की गई है, जिसमें महानिदेशक (श्रम कल्याण) सदस्य सचिव के रूप में हैं और संसद सदस्यों, असंगठित श्रमिकों, असंगठित श्रमिकों के नियोक्ताओं, नागरिक समाज, केंद्र मंत्री एवं राज्य सरकार का प्रतिनिधित्व करने वाले 34 मनोनीत सदस्य हैं। बोर्ड में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अल्पसंख्यक एवं महिलाओं के व्यक्तियों को पर्याप्त प्रतिनिधित्व का प्रावधान किया गया है।

राष्ट्रीय बोर्ड असंगठित श्रमिकों के विभिन्न वर्गों के लिए केंद्र सरकार की उपयुक्त योजनाओं की सिफारिश करेगा; योजनाओं के कार्यान्वयन की निगरानी करना और अधिनियम के प्रशासन से उत्पन्न होने वाले मामलों पर केंद्र सरकार को सलाह देना।

धारा 6 में राज्य स्तर पर समान बोर्डों के गठन का प्रावधान है।  
धारा 7 राज्य सरकारों द्वारा बनाई गई योजनाओं के वित्त पोषण प्रतिमान से संबंधित है।

धारा 8 जिला प्रशासन द्वारा रिकॉर्ड रखने के कार्यों को निर्धारित करती है। इसके लिए राज्य सरकार निर्देश दे सकती है

(a) ग्रामीण क्षेत्रों में जिला पंचायत; और

(b) शहरी स्थानीय निकायों को शहरी क्षेत्रों में इस तरह के कार्यों को करने के लिए।

धारा 9 में श्रमिक सुविधा केंद्र की स्थापना का प्रावधान है

(a) उन्हें उपलब्ध सामाजिक सुरक्षा योजनाओं के बारे में जानकारी का प्रसार करना

(b) जिला प्रशासन द्वारा श्रमिकों के पंजीकरण और असंगठित श्रमिकों के नामांकन की सुविधा प्रदान करना।

धारा 10 पंजीकरण के लिए पात्रता मानदंड के साथ-साथ अधिनियम के तहत पंजीकरण की प्रक्रिया भी प्रदान करती है।

धारा 11-17 में अधिनियम को लागू करने के लिए विविध प्रावधान हैं।

अधिनियम के तहत असंगठित श्रमिक सामाजिक सुरक्षा नियम, 2009 बनाए गए हैं और 18.08.2009 को राष्ट्रीय सामाजिक सुरक्षा बोर्ड का गठन किया गया था। राष्ट्रीय बोर्ड असंगठित श्रमिकों के लिए सामाजिक सुरक्षा योजनाओं जैसे कि जीवन और विकलांगता कवर, स्वास्थ्य और मातृत्व लाभ, वृद्धावस्था सुरक्षा और सरकार द्वारा निर्धारित किसी भी अन्य लाभ की सिफारिश करेगा। राष्ट्रीय बोर्ड ने अब तक आठ बैठकें की हैं और असंगठित श्रमिकों की कुछ श्रेणियों के लिए राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना (RSBY), जनश्री बीमा योजना (JBY) और वृद्धावस्था पेंशन के विस्तार की सिफारिश की है।

**राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना** - असंगठित क्षेत्र में बीपीएल परिवारों (पांच की एक इकाई) के लिए 'राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना' (RSBY) नामक एक स्वास्थ्य बीमा योजना औपचारिक रूप से अक्टूबर, 2007 को शुरू की गई थी। यह योजना 1 अप्रैल, 2008 से चालू हुई और इसके तहत लाभ योजना का लाभ लाभार्थियों को मिलना शुरू हो गया है। योजना के तहत लाभों में शामिल हैं:

➤ लाभार्थी रुपये के स्मार्ट कार्ड आधारित कैश-लेस स्वास्थ्य बीमा

कवर के हकदार हैं। 30,000 प्रति परिवार प्रतिवर्ष एक परिवार के आधार पर।

- पहले से मौजूद सभी बीमारियों का कवरेज।
- मातृत्व लाभ सहित अस्पताल में भर्ती खर्चों का कवरेज।
- रुपये की परिवहन लागत का भुगतान। 1 00/- प्रति विज़िट।

आरएसबीवाई को 28 राज्यों/संघ शासित प्रदेशों में लागू किया गया है और 3.85 करोड़ स्मार्ट कार्ड जारी किए जा चुके हैं। RSBY को भवन और अन्य निर्माण श्रमिक (रोजगार और सेवा की शर्तों का विनियमन) अधिनियम, 1996 के तहत पंजीकृत भवन और अन्य निर्माण श्रमिकों और स्ट्रीट वेंडर्स, बीड़ी श्रमिकों, घरेलू श्रमिकों और MGNREGA लाभार्थियों के लिए विस्तारित किया गया है, जिन्होंने पिछले वित्तीय वर्ष के दौरान 15 दिनों से अधिक काम किया है। 01.04.2015 से यह राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना, स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय को स्थानांतरित कर दी गई है।

**आम आदमी बीमा योजना-** 1859 वर्ष की आयु के ग्रामीण भूमिहीन परिवारों को मृत्यु एवं अपंगता कवर प्रदान करने की दृष्टि से 2 अक्टूबर, 2007 को आम आदमी बीमा योजना भी प्रारंभ की गई है। इस योजना के अन्तर्गत परिवार के मुखिया अथवा परिवार में कोई कमाने वाला सदस्य का बीमा किया जाए। 200/- प्रति वर्ष प्रति व्यक्ति के प्रीमियम का 50% केंद्र सरकार वहन करेगी और प्रीमियम का शेष 50% राज्य सरकार द्वारा वहन किया जाएगा। योजना के तहत लाभ में प्राकृतिक मृत्यु के मामले में 30,000 रुपये और दुर्घटना या कुल स्थायी विकलांगता (दो आंखों या दो अंगों या एक आंख और दुर्घटना में एक अंग की हानि) के कारण मृत्यु के मामले में 75,000 रुपये का कवर शामिल है। . आंशिक स्थायी विकलांगता (दुर्घटना में एक आंख या एक अंग की हानि) के मामले में, बीमा कवर 37,500 / रुपये होगा। इस योजना में 9वीं से 12वीं कक्षा तक पढ़ने वाले लाभार्थी के अधिकतम दो बच्चों तक प्रति तिमाही 300 रुपये की दर से छात्रवृत्ति प्रदान करने के अतिरिक्त लाभ की भी परिकल्पना की गई है। 31.03.2015 तक एएबीवाई के तहत 4.32 करोड़ से अधिक लोगों को कवर किया गया था।

**वृद्धावस्था पेंशन योजना** - भारत सरकार ने राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना को पुनर्गठित किया है। नई योजना "इंदिरा गांधी राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना (IGNOAPS)" 19.11.2007 को शुरू की गई थी। वृद्धावस्था पेंशन अब न केवल वृद्ध निराश्रितों बल्कि 60 वर्ष से अधिक आयु के सभी नागरिकों और गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वालों को प्रदान की जाती है। 80 वर्ष से अधिक आयु के व्यक्तियों के लिए राशि 200 रुपये से बढ़ाकर 500 रुपये प्रति माह कर दी गई है। राज्यों को केंद्र सरकार से प्रति व्यक्ति 200 रुपये प्रति माह अनुदान देने को कहा गया है। 31.03.2015 तक 2.18 करोड़ से अधिक व्यक्तियों को भी शामिल किया गया है।

**अटल पेंशन योजना** - असंगठित क्षेत्रों के श्रमिकों को अपनी सेवानिवृत्ति के लिए स्वेच्छा से बचत करने के लिए प्रोत्साहित करने और ऐसे ग्राहकों के लिए नई पेंशन योजना (एनपीएस) के संचालन की लागत को कम करने के लिए, केंद्र सरकार ने हाल ही में 09.05.2019 को अटल पेंशन योजना नामक एक सह-अंशदायी पेंशन योजना शुरू की। .2015। सब्सक्राइबर्स को उनके योगदान के आधार पर 60 साल की उम्र में 1000 रुपये प्रति माह, 2000 रुपये प्रति माह, 3000 रुपये प्रति माह, 4000 रुपये प्रति माह 5000 रुपये प्रति माह की निश्चित न्यूनतम पेंशन मिलेगी। केंद्र सरकार कुल योगदान का 50 प्रतिशत या 1000 रुपये प्रति वर्ष, जो भी कम हो, प्रत्येक पात्र ग्राहक के खाते में 5 साल की अवधि के लिए, यानी 2015-16 से 2019-20 तक, सह-योगदान करेगी। जो 31 दिसंबर, 2015 से पहले एनपीएस में शामिल हो गए हैं और जो किसी भी वैधानिक सामाजिक सुरक्षा योजना के सदस्य नहीं हैं और जो आयकर दाता नहीं हैं। पेंशन ग्राहक की मृत्यु पर पति या पत्नी को भी उपलब्ध होगी और उसके बाद पेंशन कोष नामांकित व्यक्ति को लौटा दिया जाएगा। APY में शामिल होने की न्यूनतम आयु 18 वर्ष और अधिकतम आयु 40 वर्ष है। निश्चित न्यूनतम पेंशन के लाभ की गारंटी सरकार द्वारा दी जाएगी।

### 1.8.1 भवन और अन्य निर्माण श्रमिकों के लिए प्रावधान-

निर्माण श्रमिक असंगठित क्षेत्र में श्रमिकों की सबसे बड़ी श्रेणियों में से एक हैं। 2011-12 में एनएसएसओ द्वारा किए गए नमूना सर्वेक्षण के

अनुसार, लगभग 5.02 करोड़ श्रमिक निर्माण गतिविधियों में कार्यरत हैं। सरकार ने निर्माण श्रमिकों के लिए निम्नलिखित दो कानून बनाए हैं:

- (1) भवन और अन्य निर्माण श्रमिक (रोजगार और सेवा की शर्तों का विनियमन) अधिनियम, 1996।
- (2) भवन और अन्य सन्निर्माण कर्मकार कल्याण उपकर, अधिनियम, 1996;

इसके अलावा, भवन और अन्य निर्माण श्रमिक (आरईसीएस) केंद्रीय नियम, 1998 को 19.11.1998 को अधिसूचित किया गया है।

यह अधिनियम प्रत्येक प्रतिष्ठान पर लागू होता है जो किसी भवन या अन्य निर्माण कार्य में 10 या अधिक श्रमिकों को नियोजित करता है। अधिनियम व्यक्ति पर लागू नहीं होता है। राज्य सरकारों द्वारा कल्याण बोर्डों के गठन और फंड के तहत लाभार्थियों के पंजीकरण और उनके पहचान पत्र आदि के प्रावधान के अलावा कानून के प्रशासन से उत्पन्न होने वाले मामलों पर उपयुक्त सरकारों को सलाह देने के लिए केंद्रीय और राज्य सलाहकार समितियों के गठन का भी प्रावधान है।

ये कानून निर्माण श्रमिकों के लिए रोजगार और सेवा की शर्तों, सुरक्षा और स्वास्थ्य और कल्याणकारी उपायों को विनियमित करने के लिए प्रदान करते हैं। राज्य स्तर पर एक कल्याण कोष की स्थापना करके जिसका वित्तपोषण लाभार्थियों द्वारा किए गए अंशदान से किया जाएगा और सभी निर्माण कार्यों पर एक नियोक्ता द्वारा किए गए निर्माण लागत के 1-2% के बीच की दर से उपकर लगाया जाएगा (सरकार ने 1% की दर से उपकर अधिसूचित किया है)। दुर्घटना, वृद्धावस्था पेंशन, आवास ऋण, बीमा प्रीमियम का भुगतान, बच्चों की शिक्षा, चिकित्सा और मातृत्व लाभ आदि के मामले में लाभार्थियों के परिवारों को वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिए निधि का उपयोग किया जाना है।

सभी राज्य सरकारों और केंद्र शासित प्रदेशों ने राज्य कल्याण बोर्डों का गठन किया है। तमिलनाडु सरकार अपना अधिनियम लागू कर रही है। 30.09.2015 तक, राज्य सरकारों और केंद्र शासित प्रदेशों द्वारा

उपकर के रूप में लगभग 21985.07 करोड़ रुपये की राशि एकत्र की गई है और उनके द्वारा बनाई गई कल्याणकारी योजनाओं पर 4162.99 करोड़ रुपये की राशि खर्च की गई है।

### **1.8.2 प्रवासी कामगार और अंतर्राज्यीय प्रवासी कामगार के लिए प्रावधान-**

2001 की जनगणना के अनुसार, देश के भीतर 314.54 मिलियन लोगों ने अपना निवास स्थान बदला है और इसमें से 29.90 मिलियन या 9% ने काम के लिए अपना स्थान छोड़ दिया है। अंतर-राज्यीय प्रवासी कामगार (रोजगार और सेवा की शर्तों का विनियमन) अधिनियम, 1979 को प्रवासी श्रमिकों के अधिकारों की रक्षा और हितों की रक्षा के लिए अधिनियमित किया गया था।

अधिनियम अंतरराज्यीय प्रवासी कामगारों के रोजगार को नियंत्रित करता है और उनकी सेवा की शर्तों का प्रावधान करता है। यह हर प्रतिष्ठान और ठेकेदार पर लागू होता है, जो पांच या अधिक अंतर-राज्यीय प्रवासी कामगारों को नियुक्त करता है। अधिनियम में प्रत्येक अंतर-राज्यीय प्रवासी कामगार को पूरे विवरण के साथ पासबुक जारी करने का प्रावधान है, मासिक वेतन के 50% के बराबर विस्थापन भत्ता का भुगतान या 75/- रुपये, जो भी अधिक हो, यात्रा भत्ते का भुगतान, के भुगतान सहित यात्रा की अवधि के दौरान वेतन, उपयुक्त आवासीय आवास, चिकित्सा सुविधाएं और सुरक्षात्मक कपड़े, मजदूरी का भुगतान, समान काम के लिए समान वेतन आदि।

अधिनियम के प्रावधान को लागू करने की मुख्य जिम्मेदारी क्रमशः केंद्र और राज्य क्षेत्र में आने वाली स्थापना के लिए केंद्र और राज्य सरकारों/केंद्र शासित प्रदेशों की है।

प्रवासन की समस्या को ग्रामीण विकास, बेहतर ढांचागत सुविधाओं के प्रावधान, क्षेत्रीय विषमताओं को दूर करने के लिए संसाधनों के समान वितरण, रोजगार सृजन, भूमि सुधार, साक्षरता में वृद्धि, वित्तीय सहायता आदि के माध्यम से बहु-आयामी कार्रवाई के माध्यम से रोकने की मांग की गई है। राज्य स्तर पर रोजगार के बेहतर अवसर पैदा करने के लिए, सरकार ने स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना (एसजीएसवाई),

प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना (पीएमजीएसवाई), संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना (एसजीआरवाई), वाई जैसी कई योजनाएं शुरू की हैं। वार्षिक रिपोर्ट 2015-2016 कार्यक्रम (एनएफएफडब्ल्यूपी), इंदिरा आवास योजना (आईएवाई), एकीकृत बंजर भूमि विकास कार्यक्रम (आईडब्ल्यूडीपी), सूखा प्रवण क्षेत्र कार्यक्रम (डीपीएपी), रेगिस्तान विकास कार्यक्रम (डीडीपी) आदि। इसके अलावा, सरकार ने ग्रामीण परिवारों को 100 दिनों का गारंटीकृत रोजगार प्रदान करने के लिए राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम भी बनाया है।

### 1.8.3 संबंधित अन्य योजनाएं-

- प्रधानमंत्री श्रम योगी मान-धन (PM-SYM)
- श्रम संहिता
- प्रधानमंत्री रोजगार प्रोत्साहन योजना (PM-RPY)
- पीएम स्वनिधिरु फुटपाथ विक्रेताओं के लिये सूक्ष्म ऋण योजना
- आत्मनिर्भर भारत अभियान
- दीनदयाल अंत्योदय योजना राष्ट्रीय शहरी आजीविका मिशन
- पीएम गरीब कल्याण अन्न योजना (PM-GKAY)
- वन नेशन वन राशन कार्ड
- आत्मनिर्भर भारत रोजगार योजना
- प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि
- भारत के असंगठित मजदूर वर्ग को विश्व बैंक का समर्थन

---

## 1.9 सारांश

---

असंगठित क्षेत्र एक ऐसा व्यापक क्षेत्र है जिसमें कई व्यक्तियों का रोजगार तो जुदा है पर उनकी अपनी पहचान नहीं उनका कार्य स्थायी नहीं है या उनके कार्य का पंजीकरण नहीं और न उसमें संलग्न मजदूर पंजीकृत है । भारत सरकार ने ऐसे श्रमिकों की स्थिति में सुधार करने के लिए कई कानून बनाये हैं । कौशल और प्रशिक्षण की कमी, गृह

आधारित कार्य, सूक्ष्म उद्यमों ने अनियमित कार्य वातावरण तैयार किया है। तकनीकी प्रगति के कारण पूंजी गहन संगठित क्षेत्रों में नौकरियों की अनुपलब्धता श्रम प्रधान असंगठित क्षेत्रों में रोजगार को प्रोत्साहित करती है। आसान रोजगार और आय के कारण कई लोग असंगठित क्षेत्र की ओर आकर्षित होते हैं। सरकार को सुरक्षा और स्वास्थ्य के साथ अनौपचारिक आर्थिक गतिविधियों को विनियमित करना चाहिए। इस क्षेत्र में होने वाली दुर्घटनाओं के कारणों को नियंत्रित किया जाना चाहिए। उद्यमों को श्रमिकों से जुड़े संवेदनशील मुद्दों पर सामुदायिक जागरूकता पैदा करके राष्ट्रीय संपत्ति में योगदान करने पर ध्यान देना चाहिए। भारत में हरित नौकरियों, सतत विकास, सामुदायिक भागीदारी, स्वास्थ्य और सुरक्षा जागरूकता को प्रोत्साहित करने और असंगठित श्रमिकों के कौशल को समृद्ध करने पर ध्यान दिया जाना चाहिए।

---

## 1.10 शब्दावली

---

**असंगठित श्रमिक** - असंगठित श्रमिक शब्द को असंगठित श्रमिक सामाजिक सुरक्षा अधिनियम, 2008 के तहत परिभाषित किया गया है, असंगठित क्षेत्र में घर आधारित कार्यकर्ता, स्व-नियोजित कार्यकर्ता या मजदूरी कार्यकर्ता के रूप में और संगठित क्षेत्र में एक कार्यकर्ता शामिल है जो निम्न में से किसी भी कानून के अंतर्गत नहीं आते हैं: कर्मचारी मुआवजा अधिनियम, 1923 (1923 का 3), औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 (1947 का 14), कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम, 1948 (1948 का 34) में उल्लिखित अधिनियमों में से, कर्मचारी भविष्य निधि और विविध प्रावधान अधिनियम, 1952 (1952 का 19), मातृत्व लाभ अधिनियम, 1961 (1961 का 53) और उपदान भुगतान अधिनियम, 1972 (1972 का 39)।

---

## 1.11 सन्दर्भ सूची

---

1. Arjun Patel and Desai Kiran 'Rural Migrant Labour and Labour Laws', Edited by Debi. S. Saini, Labour Law, Work and Development, Westvill Publishing House, New Delhi, 1995.



2. Annual Report, Ministry of Labour and Employment, Government of India, 2014-15
3. Annual Report, Ministry of Labour and Employment, Government of India, 2013-14.
4. Gender and Economic Policy Discussion Forum, 'Engendering Social Protection for Informal Economy Workers', Institution of Social Trust, New Delhi, November 2012
5. Gupta S.N., Labour and Industrial Law, 1982, p. 30-31.
6. International Labour Organisation, 'Employment and Social Protection in the Informal Sector', Geneva, 2000
6. [https://www.researchgate.net/publication/334249727\\_A\\_STUDY\\_ON\\_THE\\_PROSPECTS\\_AND\\_PROBLEMS\\_OF\\_UNORGANISED\\_LABOURS\\_IN\\_INDIA](https://www.researchgate.net/publication/334249727_A_STUDY_ON_THE_PROSPECTS_AND_PROBLEMS_OF_UNORGANISED_LABOURS_IN_INDIA)

---

## बोध प्रश्न - 2

---

### टिप्पणी

- (i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का उपयोग कीजिये।
- (ii) इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

1. असंगठित क्षेत्र से सम्बंधित श्रमिकों की चुनौतियों का उल्लेख कीजिये।

---



---



---



---

2. भारत की असंगठित अर्थव्यवस्था की स्थिति का वर्णन कीजिये।

---

---

---

---

## 1.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

---

### बोध प्रश्न - 1

1. असंगठित क्षेत्र का तात्पर्य ऐसे क्षेत्र से होता है जहां पर लोग अस्थाई रूप से कार्य करते हैं और उनके कार्य ज्यादा लंबी अवधि के लिए नहीं होते हैं या उनके स्वरोजगार भी इसमें आते हैं, जैसे सब्जी बेचना, घरेलू कामगार, सफाई कर्मचारी, बोझ ढोने वाले, मछुआरे, नाई, फल विक्रेता, न्यूज पेपर विक्रेता आदि। अर्थात् वे मजदूर या श्रमिक जो अस्थाई रूप से रोजगार करते हैं और जानकारी की कमी व अशिक्षा के कारण कहीं भी संगठित रूप से जुड़ नहीं पाते हैं या कार्य नहीं कर पाते हैं।
2. असंगठित श्रमिक शब्द को असंगठित श्रमिक सामाजिक सुरक्षा अधिनियम, 2008 के तहत परिभाषित किया गया है, असंगठित क्षेत्र में घर आधारित कार्यकर्ता, स्व-नियोजित कार्यकर्ता या मजदूरी कार्यकर्ता के रूप में और संगठित क्षेत्र में एक कार्यकर्ता शामिल है जो किसी भी कानून के अंतर्गत नहीं आता है। अधिनियम की अनुसूची-11 में उल्लिखित अधिनियमों में से अर्थात् कर्मचारी मुआवजा अधिनियम, 1923 (1923 का 3), औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 (1947 का 14), कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम, 1948 (1948 का 34), कर्मचारी भविष्य निधि और विविध प्रावधान अधिनियम, 1952 (1952 का 19), मातृत्व लाभ अधिनियम, 1961 (1961 का 53) और उपदान भुगतान अधिनियम, 1972 (1972 का 39)।

### बोध प्रश्न - 2

1. असंगठित क्षेत्र में नियोजित शहरी कार्यबल एक बड़ी चुनौती है। जो निम्न प्रकार है-
  - दीर्घावधिक कार्य घंटे, कम वेतन और कठिन कार्य परिस्थिति।

- निम्न रोज़गार सुरक्षा नौकरी छोड़ने की उच्च दर और निम्न रोज़गार संतुष्टि।
- अपर्याप्त सामाजिक सुरक्षा विनियमन।
- अधिकारों का प्रयोग करने में कठिनाई।
- बाल श्रम एवं बलात श्रम और विभिन्न कारकों के आधार पर भेदभाव।
- असंरक्षित कम वेतन वाली और कम महत्व प्राप्त नौकरियाँ।

2. असंगठित अर्थव्यवस्था उन उद्यमों का प्रतिनिधित्व करती है जो पंजीकृत नहीं हैं, जहां नियोक्ता कर्मचारियों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान नहीं करते हैं। भारत सहित कई विकासशील देशों में असंगठित क्षेत्र में धीमी गति से गिरावट आई है, जो शहरी गंदगी, गरीबी और बेरोज़गारी में सबसे अधिक स्पष्ट रूप से प्रकट होती है। आधिकारिक आवधिक श्रम बल सर्वेक्षण (PLFS) के आंकड़ों से पता चलता है कि 75% असंगठित श्रमिक स्व.नियोजित और आकस्मिक वेतनभोगी कर्मचारी हैं जिनकी औसत आय नियमित वेतनभोगी श्रमिकों की तुलना में कम है। भारत की आधिकारिक परिभाषा के साथ आईएलओ की व्यापक रूप से सहमत परिभाषा ; संगठित नौकरियों के रूप में कम-से-कम एक सामाजिक सुरक्षा लाभ प्रदान करने वाले जैसे ईपीएफ को मिलाकर भारत में संगठित श्रमिकों की हिस्सेदारी केवल 9.7% (47.5 मिलियन) थी।

# Notes